Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिंदगी इम्तिहान लेती है

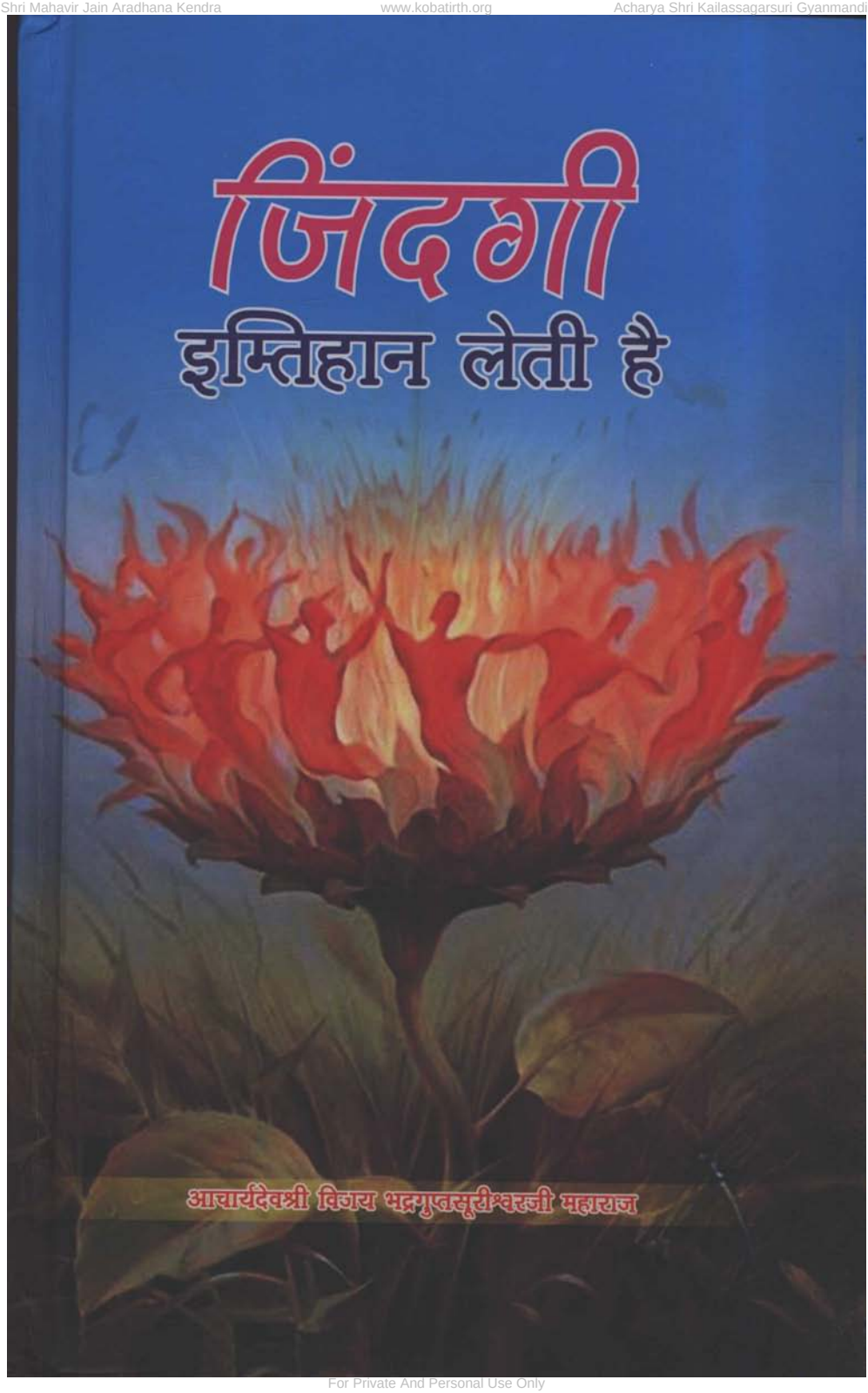

आचार्यदेवश्री विजय भद्रगुप्तसूरीश्वरजी महाराज

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिन्दगी इम्तिहान लेती है!

(५२ प्रेरणादायी पत्रों का संकलन)

श्री प्रियदर्शन

[आचार्य श्री विजयभद्रगुप्तसूरिजी महाराज]

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुनः संपादन

ज्ञानतीर्थ-कोबा

द्वितीय आवृत्ति

वि.सं.२०६५, ३१ अगस्त-२००९

मंगल प्रसंग

राष्ट्रसंत श्रुतोद्धारक आचार्यदेवश्री पद्मसागरसूरिजी
का ७५वाँ जन्मदिवस
तिथि : भाद्र. सुद-११ दि. ३१-८-२००९, सांताक्रूज, मुंबई

मूल्य

पक्की जिल्द : रू. १४५-०० कच्ची जिल्द : रू. ६५-००

आर्थिक सौजन्य

शेठ श्री निरंजन नरोत्तमभाई के स्मरणार्थ
ह. शेठ श्री नरोत्तमभाई लालभाई परिवार

प्रकाशक

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, ता. जि. गांधीनगर - ३८२००७
फोन नं. (०७९) २३२७६२०४, २३२७६२५२
email : **gyanmandir@kobatirth.org**
website : **www.kobatirth.org**

मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टर्स, अमदावाद - ९८२५५९८८५५

टाईटल डीजाइन : आर्य ग्राफीक्स - ९९२५८०१९१०

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकाशकीय

पूज्य आचार्य श्री विजयभद्रगुप्तसूरिजी महाराज (श्री प्रियदर्शन) द्वारा लिखित और विश्वकल्याण प्रकाशन, महेसाणा से प्रकाशित साहित्य, जैन समाज में ही नहीं अपितु जैनेतर समाज में भी बड़ी उत्सुकता और मनोयोग से पढ़ा जाने वाला लोकप्रिय साहित्य है.

पूज्यश्री ने १९ नवम्बर, १९९९ के दिन अहमदाबाद में कालधर्म प्राप्त किया. इसके बाद विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्ट को विसर्जित कर उनके प्रकाशनों का पुनः प्रकाशन बन्द करने के निर्णय की बात सुनकर हमारे ट्रस्टियों की भावना हुई कि पूज्य आचार्य श्री का उत्कृष्ट साहित्य जनसमुदाय को हमेशा प्राप्त होता रहे, इसके लिये कुछ करना चाहिए. **पूज्य राष्ट्रसंत आचार्य श्री पद्मसागरसूरिजी महाराज** को विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्टमंडल के सदस्यों के निर्णय से अवगत कराया गया. दोनों पूज्य आचार्यश्रीयों की घनिष्ठ मित्रता थी. अन्तिम दिनों में दिवंगत आचार्यश्री ने राष्ट्रसंत आचार्यश्री से मिलने की हार्दिक इच्छा भी व्यक्त की थी. पूज्य आचार्यश्री ने इस कार्य हेतु व्यक्ति, व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व के आधार पर सहर्ष अपनी सहमती प्रदान की. उनका आशीर्वाद प्राप्त कर कोबातीर्थ के ट्रस्टियों ने इस कार्य को आगे चालू रखने हेतु विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्ट के सामने प्रस्ताव रखा.

विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्ट के ट्रस्टियों ने भी कोबातीर्थ के ट्रस्टियों की दिवंगत आचार्यश्री प्रियदर्शन के साहित्य के प्रचार-प्रसार की उत्कृष्ट भावना को ध्यान में लेकर **श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबातीर्थ** को अपने ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित साहित्य के पुनः प्रकाशन का सर्वाधिकार सहर्ष सौंप दिया.

इसके बाद **श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा** ने संस्था द्वारा संचालित **श्रुतसरिता** (जैन बुक स्टॉल) के माध्यम से श्री प्रियदर्शनजी के लोकप्रिय साहित्य के वितरण का कार्य समाज के हित में प्रारम्भ कर दिया.

श्री प्रियदर्शन के अनुपलब्ध साहित्य के पुनः प्रकाशन करने की शृंखला में **जिन्दगी इम्तिहान लेती है!** ग्रंथ को प्रकाशित कर आपके कर कमलों में प्रस्तुत किया जा रहा है.

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शेठ श्री संवेगभाई लालभाई के सौजन्य से इस प्रकाशन के लिये **श्री निरंजन नरोत्तमभाई के स्मरणार्थ, हस्ते शेठ श्री नरोत्तमभाई लालभाई परिवार** की ओर से उदारता पूर्वक आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है, इसलिये हम **शेठ श्री नरोत्तमभाई लालभाई परिवार** के ऋणी हैं तथा उनका हार्दिक आभार मानते हैं. आशा है कि भविष्य में भी उनकी ओर से सदैव उदारता पूर्ण सहयोग प्राप्त होता रहेगा.

इस आवृत्ति का प्रूफरिडिंग करने वाले **डॉ. हेमन्त कुमार** तथा अंतिम प्रूफ करने हेतु **पंडितवर्य श्री मनोजभाई जैन** का हम हृदय से आभार मानते हैं. संस्था के कम्प्यूटर विभाग में कार्यरत **श्री केतनभाई शाह, श्री संजयभाई गुर्जर व श्री बालसंग ठाकोर** के हम हृदय से आभारी हैं, जिन्होंने इस पुस्तक का सुंदर कम्पोजिंग कर छपाई हेतु बटर प्रिंट निकाला.

आपसे हमारा विनम्र अनुरोध है कि आप अपने मित्रों व स्वजनों में इस प्रेरणादायक सत्साहित्य को वितरित करें. श्रुतज्ञान के प्रचार-प्रसार में आपका लघु योगदान भी आपके लिये लाभदायक सिद्ध होगा.

पुनः प्रकाशन के समय ग्रंथकारश्री के आशय व जिनाज्ञा के विरुद्ध कोई बात रह गयी हो तो मिच्छामि दुक्कड़म्. विद्वान पाठकों से निवेदन है कि वे इस ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करें.

अन्त में नये आवरण तथा साज-सज्जा के साथ प्रस्तुत ग्रंथ आपकी जीवनयात्रा का मार्ग प्रशस्त करने में निमित्त बने और विषमताओं में भी समरसता का लाभ कराये ऐसी शुभकामनाओं के साथ...

ट्रस्टीगण

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

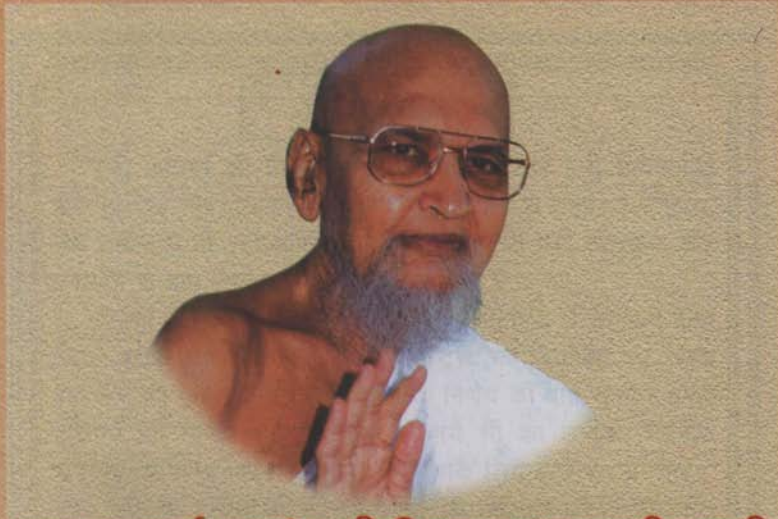

पूज्य आचार्य भगवंत श्री विजयभद्रगुप्तसूरीश्वरजी

श्रावण शुक्ला १२, वि.सं. १९८९ के दिन पुदगाम महेसाणा (गुजरात) में मणीभाई एवं हीराबहन के कुलदीपक के रूप में जन्मे मूलचन्दभाई, जुही की कली की भांति खिलती-खुलती जवानी में १८ बरस की उम्र में वि.सं. २००७, महावद ५ के दिन राणपुर (सौराष्ट्र) में आचार्य श्रीमद् विजयप्रेमसूरीश्वरजी महाराजा के करमकमलों द्वारा दीक्षित होकर पू. भुवनभानुसूरीश्वरजी के शिष्य बने. मुनि श्री भद्रगुप्तविजयजी की दीक्षाजीवन के प्रारंभ काल से ही अध्ययन-अध्यापन की सुदीर्घ यात्रा प्रारंभ हो चुकी थी. ४५ आगमों के सटीक अध्ययनोपरांत दार्शनिक, भारतीय एवं पाश्चात्य तत्वज्ञान, काव्य-साहित्य वगैरह के 'मिलस्टोन' पार करती हुई वह यात्रा सर्जनात्मक क्षितिज की तरफ मुड़ गई. 'महापंथनो यात्री' से २० साल की उम्र में शुरु हुई लेखनयात्रा अंत समय तक अथक एवं अनवरत चली. तरह-तरह का मौलिक साहित्य, तत्वज्ञान, विवेचना, दीर्घ कथाएँ, लघु कथाएँ, काव्यगीत, पत्रों के जरिये स्वच्छ व स्वस्थ मार्गदर्शन परक साहित्य सर्जन द्वारा उनका जीवन सफर दिन-ब-दिन भरापूरा बना रहता था. प्रेमभरा हँसमुख स्वभाव, प्रसन्न व मृदु आंतर-बाह्य व्यक्तित्व एवं बहुजन-हिताय बहुजन-सुखाय प्रवृत्तियाँ उनके जीवन के महत्त्वपूर्ण अंगरूप थी. संघ-शासन विशेष करके युवा पीढ़ी, तरुण पीढ़ी एवं शिशु-संसार के जीवन निर्माण की प्रकिया में उन्हें रूचि थी... और इसी से उन्हें संतुष्टि मिलती थी. प्रवचन, वार्तालाप, संस्कार शिबिर, जाप-ध्यान, अनुष्ठान एवं परमात्म भक्ति के विशिष्ट आयोजनों के माध्यम से उनका सहिष्णु व्यक्तित्व भी उतना ही उन्नत एवं उज्ज्वल बना रहा. पूज्यश्री जानने योग्य व्यक्तित्व व महसूस करने योग्य अस्तित्व से सराबोर थे. कोल्हापुर में ता. ४-५-१९८७ के दिन गुरुदेव ने उन्हें आचार्य पद से विभूषित किया. जीवन के अंत समय में लम्बे अरसे तक वे अनेक व्याधियों का सामना करते हुए और ऐसे में भी सतत साहित्य सर्जन करते हुए दिनांक १९-११-१९९९ को श्यामल, अहमदाबाद में कालधर्म को प्राप्त हुए.

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संपादकीय

मानव जीवन तरह-तरह की विशेषताओं का मेला है। सुख की खोज में खुद ही खो गये आदमी की आँखें नम हो जाती हैं... तो कभी कभार बेवजह हंसी-मुस्कान की फुलवारी खिल जाती है, उसके चेहरे के बगीचे में! तो कभी उदासी की बदली अस्तित्व को समेट लेती है, अपने साये में और फिर आँसुओं की बरसात थमने का नाम नहीं लेती!

परेशानी, समस्या, प्रश्न, उलझन ये सब अब शब्दकोश में नहीं वरन् जिन्दगी के साथ जुड़े हुए शब्द हैं!

जिन्दगी अकसर समस्याओं के सुलगते-झुलसते रेगिस्तान-सी हो जाती है... प्रश्नों और सवालों के शिकंजे में जकड़े हुए आदमी का जीवन दुभर और बोझिल बन जाता है, यदि उसके पास सही समझदारी और संतुलित व्यक्तित्व न हो तो!

दुनिया की राह पर फूलों से ज्यादा कांटे बिखरे पडे हैं - फिर भी ताजुब तो इस बात का है कि आदमी के दिल को कांटों से भी ज्यादा फूल चुभते हैं! फूलों के घाव बड़े गहरे होते हैं...! वे जख्म जल्दी नहीं भरतें! संबंधों के फूल खिलाने की ख्वाहिश में कदम-कदम पर संघर्ष के शूल चुभते हैं... टूटन... पीड़ा और संत्रास का खून रिसता है!

जिन्दगी की जलती रेगिस्तानी यात्रा में यह किताब सचमुच 'स्वीट' और 'सिन्सीयर' दोस्त का काम करेगी! संबंधों के जगत को वन न बनाते हुए उपवन बनाएँ... यही इस किताब का कहना है!

हालाँकि जीवन है तो सवालों का सिलसिला चलता ही रहता है...। अगर सवाल नहीं होतें... समस्याएँ नहीं होती तो जिन्दगी इस कदर रंगबिरंगी और विविधता भरी नहीं होती! सवाल है तो सवाल का जवाब भी होगा ही!

व्यक्तिगत-पारस्परिक और सामाजिक जीवन की राह पर यह पुस्तक जरुर मार्गदर्शक बनेगी।

- भद्रबाहुविजय

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धर्म कला व श्रुत-साधना का आह्लादक धाम

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा तीर्थ

अहमदाबाद-गांधीनगर राजमार्ग पर स्थित साबरमती नदी के समीप सुरम्य वृक्षों की घटाओं से घिरा हुआ यह कोबा तीर्थ प्राकृतिक शान्तिपूर्ण वातावरण का अनुभव कराता है. गच्छाधिपति, महान **जैनाचार्य श्रीमत् कैलाससागरसूरीश्वरजी म. सा.** की दिव्य कृपा व **युगद्रष्टा राष्ट्रसंत आचार्य प्रवर श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी** के शुभाशीर्वाद से **श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र** की स्थापना २६ दिसम्बर १९८० के दिन की गई थी. आचार्यश्री की यह इच्छा थी कि यहाँ पर धर्म, आराधना और ज्ञान-साधना की कोई एकाध प्रवृत्ति ही नहीं वरन् अनेकविध ज्ञान और धर्म-प्रवृत्तियों का महासंगम हो. एतदर्थ आचार्य श्री कैलाससागरसूरीश्वरजी की महान भावनारूप **आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर** का खास तौर पर निर्माण किया गया.

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र अनेकविध प्रवृत्तियों में अपनी निम्नलिखित शाखाओं के सत्प्रयासों के साथ धर्मशासन की सेवा में तत्पर है.

(१) महावीरालय : हृदय में अलौकिक धर्मोल्लास जगाने वाला चरम तीर्थंकर श्री महावीरस्वामी का शिल्पकला युक्त भव्य प्रासाद 'महावीरालय' दर्शनीय है. प्रथम तल पर गर्भगृह में मूलनायक महावीरस्वामी आदि १३ प्रतिमाओं के दर्शन अलग-अलग देरियों में होते हैं तथा भूमि तल पर आदीश्वर भगवान की भव्य प्रतिमा, माणिभद्रवीर तथा भगवती पद्मावती सहित पांच प्रतिमाओं के दर्शन होते हैं. सभी प्रतिमाएँ इतनी मोहक एवं चुम्बकीय आकर्षण रखती हैं कि लगता है सामने ही बैठे रहें.

मंदिर को परंपरागत शैली में शिल्पांकनों द्वारा रोचक पद्धति से अलंकृत किया गया है, जिससे सीढियों से लेकर शिखर के गुंबज तक तथा रंगमंडप से गर्भगृह का हर प्रदेश जैन शिल्प कला को आधुनिक युग में पुनः जागृत करता दृष्टिगोचर होता है. द्वारों पर उत्कीर्ण भगवान महावीर देव के प्रसंग २४ यक्ष, २४ यक्षिणियों, १६ महाविद्याओं, विविध स्वरूपों में अप्सरा, देव, किन्नर, पशु-पक्षी सहित वेल-वल्लरी आदि इस मंदिर को जैन शिल्प एवं स्थापत्य के क्षेत्र में एक अप्रतिम उदाहरण के रूप में सफलतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं.

महावीरालय की विशिष्टता यह है कि **आचार्य श्री कैलाससागरसूरीश्वरजी**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

म.सा. के अन्तिम संस्कार के समय प्रतिवर्ष २२ मई को दुपहर २ बजकर ७ मिनट पर महावीरालय के शिखर में से होकर सूर्य किरणें श्री महावीरस्वामी के ललाट को सूर्यतिलक से देदीप्यमान करे ऐसी अनुपम एवं अद्वितीय व्यवस्था की गई है. प्रति वर्ष इस आह्लादक घटना का दर्शन बड़ी संख्या में जनमेदनी भावविभोर होकर करती है.

(२) आचार्य श्री कैलाससागरसूरि स्मृति मंदिर (गुरु मंदिर) : पूज्य गच्छाधिपति आचार्यदेव प्रशान्तमूर्ति श्रीमत् कैलाससागरसूरीश्वरजी के पुण्य देह के अन्तिम संस्कार स्थल पर पूज्यश्री की पुण्य-स्मृति में संगमरमर का नयनरम्य कलात्मक गुरु मंदिर निर्मित किया गया है. स्फटिक रत्न से निर्मित अनन्तलब्धिनिधान श्री गौतमस्वामीजी की मनोहर मूर्ति तथा स्फटिक से ही निर्मित गुरु चरण-पादुका वास्तव में दर्शनीय हैं.

(३) आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर (ज्ञानतीर्थ) : विश्व में जैनधर्म एवं भारतीय संस्कृति के विशालतम अद्यतन साधनों से सुसज्ज शोध संस्थान के रूप में अपना स्थान बना चुका यह ज्ञानतीर्थ श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र की आत्मा है. ज्ञानतीर्थ स्वयं अपने आप में एक लब्धप्रतिष्ठ संस्था है. आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर के अन्तर्गत निम्नलिखित विभाग कार्यरत हैं : **(i) देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण हस्तप्रत भांडागार (ii) आर्य सुधर्मास्वामी श्रुतागार** (मुद्रित पुस्तकों का ग्रंथालय) **(iii) आर्यरक्षितसूरि शोधसागर** (कम्प्यूटर केन्द्र सहित) **(iv) सम्राट सम्प्रति संग्रहालय :** इस कलादीर्घा-म्यूजीयम में पुरातत्त्व-अध्येताओं और जिज्ञासु दर्शकों के लिए प्राचीन भारतीय शिल्प कला परम्परा के गौरवमय दर्शन इस स्थल पर होते हैं. पाषाण व धातु मूर्तियों, ताड़पत्र व कागज पर चित्रित पाण्डुलिपियों, लघुचित्र, पट्ट, विज्ञप्तिपत्र, काष्ठ तथा हस्तिदंत से बनी प्राचीन एवं अर्वाचीन अद्वितीय कलाकृतियों तथा अन्यान्य पुरावस्तुओं को बहुत ही आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक ढंग से धार्मिक व सांस्कृतिक गौरव के अनुरूप प्रदर्शित की गई है. **(v) शहर शाखा :** पूज्य साधु-साध्वीजी भगवंत एवं श्रावक-श्राविकाओं को स्वाध्याय, चिंतन और मनन हेतु जैनधर्म कि पुस्तकें नजदिक में ही उपलब्ध हो सके इसलिए बहुसंख्य जैन बस्तीवाले अहमदाबाद (पालडी-टोलकनगर) विस्तार में आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर की एक शहर शाखा का ई. सं. १९९९ में प्रारंभ किया गया था. जो आज चतुर्विध संघ के श्रुतज्ञान के अध्ययन हेतु निरंतर अपनी सेवाएँ दे रही है.

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(४) आराधना भवन : आराधक यहाँ धर्माराधना कर सकें इसके लिए आराधना भवन का निर्माण किया गया है. प्राकृतिक हवा एवं रोशनी से भरपूर इस आराधना भवन में मुनि भगवंत स्थिरता कर अपनी संयम आराधना के साथ-साथ विशिष्ट ज्ञानाभ्यास, ध्यान, स्वाध्याय आदि का योग प्राप्त करते हैं.

(५) धर्मशाला : इस तीर्थ में आनेवाले यात्रियों एवं महेमानों को ठहरने के लिए आधुनिक सुविधा संपन्न यात्रिकभवन एवं अतिथिभवन का निर्माण किया गया है. धर्मशाला में वातानुकुलित एवं सामान्य मिलकर ४६ कमरे उपलब्ध है.

प्रकृति की गोद में शांत और सुरम्य वातावरण में इस तीर्थ का वर्ष भर में हजारों यात्री लाभ लेते हैं.

(६) भोजनशाला व अल्पाहार गृह : तीर्थ में पधारनेवाले श्रावकों, दर्शनार्थियों, मुमुक्षुओं, विद्वानों एवं यात्रियों की सुविधा हेतु जैन सिद्धान्तों के अनुरूप सात्त्विक उपहार उपलब्ध कराने की विशाल भोजनशाला व अल्पाहार गृह में सुन्दर व्यवस्था है.

(७) श्रुत सरिता : इस बुक स्टाल में उचित मूल्य पर उत्कृष्ट जैन साहित्य, आराधना सामग्री, धार्मिक उपकरण, कैसेट्स एवं सी.डी. आदि उपलब्ध किये जाते हैं. यहीं पर एस.टी.डी टेलीफोन बूथ भी है.

विश्वमैत्री धाम - बोरीजतीर्थ, गांधीनगर : योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजी महाराज की साधनास्थली बोरीजतीर्थ का पुनरुद्धार परम पूज्य आचार्यदेव श्री पद्मसागरसूरीश्वरजी म.सा. की प्रेरणा एवं शुभाशीर्वाद से श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र संलग्न विश्वमैत्री धाम के तत्त्वावधान में नवनिर्मित १०८ फीट उँचे विशालतम महालय में ८१.२५ ईंच के पद्मासनस्थ श्री वर्द्धमान स्वामी प्रभु प्रतिष्ठित किये गये हैं. ज्ञातव्य हो कि वर्तमान मन्दिर में इसी स्थान पर जमीन में से निकली भगवान महावीरस्वामी आदि प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरजी महाराज द्वारा हुई थी. नवीन मन्दिर स्थापत्य एवं शिल्प दोनों ही दृष्टि से दर्शनीय है. यहाँ पर महिमापुर (पश्चिमबंगाल) में जगत्शेठ श्री माणिकचंदजी द्वारा १८वी सदी में कसौटी पथ्थर से निर्मित भव्य और ऐतिहासिक जिनालय का पुनरुद्धार किया गया है. वर्तमान में इसे जैनसंघ की ऐतिहासिक धरोहर माना जाता है. निस्संदेह इससे इस तीर्थ परिसर में पूर्व व पश्चिम भारत के जैनशिल्प का अभूतपूर्व संगम हुआ है.

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आचार्य श्री भद्रगुप्तसूरि (प्रियदर्शन) रचित व सर्जित साहित्य और विश्वकल्याण प्रकाशन, महेसाणा द्वारा प्रकाशित उपलब्ध पुस्तकें (अब श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबातीर्थ से उपलब्ध व प्रकाश्यमान)

हिन्दी पुस्तकें

प्रवचन

१.	पर्व प्रवचनमाला	२५.००
२-४.	श्रावकजीवन (भाग २, ३, ४)	१५०.००
५.	शांतसुधारस (भाग १)	५०.००

कथा-कहानियाँ

१.	शोध-प्रतिशोध (समरादित्य : भव-१)	३०.००
२.	द्वेष-अद्वेष (समरादित्य : भव-२)	३०.००
३.	विश्वासघात (समरादित्य : भव-३)	३०.००
४.	वैर विकार (समरादित्य : भव-४)	५०.००
५.	स्नेह संदेह (समरादित्य : भव-६)	५०.००
६.	संसार सागर है	३०.००
७.	*प्रीत किये दुःख होय	डी.-१९५.००/ज.-९०.००
८.	व्रतकथा	१५.००
९.	कथादीप	१०.००
१०.	फूलपत्ती	८.००
११.	छोटी सी बात	८.००
१२.	*कलिकाल सर्वज्ञ	डी.-१२०.००/ज.-५५.००
१३.	हिसाब किताब	१५.००
१४.	नैन बहे दिन रैन	३०.००
१५.	सबसे ऊँची प्रेम सगाई	३०.००

तत्त्वज्ञान

१.	ज्ञानसार (संपूर्ण)	५०.००
२.	*समाधान	५०.००
३.	मारग साचा कौन बतावे	३०.००
४.	*पीओ अनुभव रस प्याला	डी.-१०१.००/ज.-४२.००
५.	शान्त सुधारस (अर्थ सहित)	१२.००
६.	मोती की खेती	५.००
७.	प्रशमरति (भाग - २)	२५.००

निबंध : मौलिक चिंतन

१.	स्वाध्याय	३०.००
२.	चिंतन की चाँदनी	३०.००

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

૩.	जिनदर्शन	१०.००
४.	शुभरात्रि	५.००
५.	सुप्रभातम्	५.००
४.	*यही है जिंदगी	डी.-१७५.००/ज.-८०.००
५.	*जिंदगी इम्तिहान लेती है	डी.-१४२.००/ज.-६५.००
६.	*मायावी रानी	डी.-१२०.००/ज.-५०.००

बच्चों के लिए (सचित्र)

१-३.	विज्ञान सेट (३ पुस्तक)	२०.००

ગુજ-ાતી પુસ્તકો

પ્રવચનો

१-४.	धम्मं स-णं पवज्जामि ભાગ १ થી ४	२००.००
५-७.	શ્રાવક જીવન ભાગ २, ૩, ४	११५०.००
८-१०.	शांत सुधा-स ભાગ १ થી ૩	११५०.००
११.	પર્વ પ્રવચનમાળા	५०.००
१२.	મનને બચાવો	११५.००

કથા-વાર્તા સાહિત્ય

१૩-१५.	*સમ-ાદિત્ય મહાકથા ભાગ १ થી ૩	४००.००
१६.	*પાંપણે બાંધ્યું પાણિયારું	ડી.-१२५-००/જ.-५०.००
१७.	*પ્રીત કિયે દુ:ખ હોય	ડી.-१६५-००/જ.-६०.००
१८.	*એક -ાત અનેક વાત	ડી.-१४१-००/જ.-६१.००
१९.	નીલ ગગનનાં પંખેરુ	૩०.००
२०.	મને તા-ી યાદ સતાવે	૩०.००
२१.	દોસ્તી	२५.००
२२.	સર્વજ્ઞ જેવા સૂ-િદેવ	૩०.००
२૩.	અંજના	२०.००
२४.	ફૂલ પાંદડી	८.००
२५.	વ્રત ધ-ે ભવ ત-ે	११५.००
२६.	શ્રદ્ધાની સ-ગમ	૩०.००
२७.	શોધ પ્રતિશોધ	૩०.००
२८.	નિ-ાંતની વેળા	२०.००
२९.	વાર્તાની વાટે	२०.००
૩०.	વાર્તાના ઘાટે	२०.००
૩१.	હિસાબ કિતાબ	२०.००
૩२.	-ીસાયેલો -ાજકુમા-	२०.००

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

૩૩.	*સુલસા	ડી.-૧૬૫-૦૦/જ.-૬૦.૦૦
૩૪-૩૬.	*જૈન -ામાયણ ભાગ-૧ થી ૩	ડી.-૪૬૫-૦૦/જ.-૧૯૫.૦૦
૩૭.	*મયણા	ડી.-૧૭૦-૦૦/જ.-૬૫.૦૦

તત્ત્વજ્ઞાન-વિવેચન

૩૮.	મા-ગ સાચા કૌન બતાવે	૩૦.૦૦
૩૯.	સમાધાન	૪૦.૦૦
૪૦.	*પીઓ અનુભવ -સ પ્યાલા	ડી.-૧૦૧-૦૦/જ.-૪૨.૦૦
૪૧.	*જ્ઞાનસા-	ડી.-૨૨૦-૦૦/જ.-૧૧૫.૦૦
૪૨.	*પ્રશમ-તિ	ડી.-૩૦૧-૦૦/જ.-૧૧૫.૦૦

મૌલિક ચિંતન / નિબંધ

૪૩.	હું તો પલ પલમાં મુંઝાઉં	૩૦.૦૦
૪૪.	તા-ા દુ:ખને ખંખે-ી નાંખ	૪૦.૦૦
૪૫.	ન મ્રિયતે	૧૦.૦૦
૪૬.	ભવના ફે-ા	૧૫.૦૦
૪૭.	જિનદર્શન (દર્શન વિધિ)	૧૦.૦૦
૪૮.	માંગલિક (નિત્ય સ્વાધ્યાય)	૮.૦૦
૪૯.	સ્વાધ્યાય	૩૦.૦૦
૫૦.	તીર્થયાત્રા	૮.૦૦
૫૧.	ત્રિલોકદર્શન	૨૫.૦૦
૫૨.	*લય-વિલય-પ્રલય	ડી.-૧૬૮-૦૦/જ.-૭૫.૦૦
૫૩.	સંવાદ	૪૦.૦૦
૫૪.	હું મને શોધી -હ્યો છું	૪૦.૦૦
૫૫.	હું તને શોધી -હ્યો છું	૪૦.૦૦

બાળકો માટે -ંગીન સચિત્ર

૫૬.	વિજ્ઞાન સેટ (૩ પુસ્તકો)	૨૦.૦૦

વિવિધ

૫૭.	ગીતગંગા (ગીતો)	૨૦.૦૦
૫૮.	સમતા સમાધિ	૫.૦૦
૫૯.	*વિચા- પંખી	ડી.-૧૨૦-૦૦/જ.-૫૦.૦૦

English Books

1.	The Way Of Life [Part 1 to 4]	160.00
2.	Jain Ramayana [Part 1 to 3]	130.00
3.	Bury Your Worry	30.00
4.	Children's 3 Books Set	20.00
5.	A Code of Conduct	6.00
6.	The Treasure of mind	5.00
7.	*The Guide Lines Of Jainism	60.00

*** श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा द्वारा पुनः प्रकाशित**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जीवन जीने के लिये दृष्टि को बदलना अनिवार्य है। औरों को स्वार्थी, मतलबी और तुच्छ मानकर अपने आप को 'सुपर' बताने की मनोवृत्ति घटिया एवं खतरनाक है।*
- *माँ तो भावमंगल है! माँ के आशीर्वाद दुनिया की सबसे ज़्यादा कीमती उपलब्धि है।*
- *जो हमें न तो चित्त की प्रसन्नता दे... न वातावरण को प्रेम व मधुरता से भर दे... वैसी जीवन-व्यवस्था का क्या महत्त्व है?*
- *सुखी बनने की कोशिश में तड़पने के बजाय सुखों को बिखेरने का, सुखों को बाँटने का आनंद लेना चाहिए!*
- *मैत्री की प्रथम शर्त है - औरों के हित का विचार!*

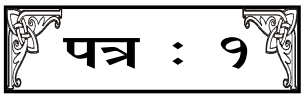

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला, पत्र पढ़कर प्रसन्नता हुई, परमात्मा जिनेश्वर की अचिन्त्य कृपा से यहाँ कुशलता है।

तू ने पत्र में लिखा कि 'माता-पिता, भाई-बहन, पत्नी-परिवार वगैरह सब स्वार्थी हैं... कभी-कभी उन सब के साथ संघर्ष हो जाता है... मुझे इन सब के प्रति घृणा सी हो गई है... इत्यादि। पहली बात तो यह है कि तुझे अपनी दृष्टि बदलनी पड़ेगी। उपकारी... महान उपकारी ऐसे माता-पिता को तू 'वे स्वार्थी हैं' की दृष्टि से देखता है... कैसी अशुद्ध-मलिन है, यह दृष्टि? तू माता को 'स्वार्थी' देखता है, फिर, जब-जब उसके सामने तू आता होगा, उसके प्रति विनय, उसकी सेवा-भक्ति और उसके प्रति उचित कर्तव्यों का पालन तो होता ही नहीं होगा!

तू इसी वजह से अशांत है, तू अपनी जननी को शांति नहीं देता है! तेरे जीवन में इसी वजह से इतने संकट आते हैं, तूने माता को भावमंगल नहीं माना है और उसके वात्सल्यपूर्ण आशीर्वाद नहीं पाए हैं! तू इसी वजह से परेशान है, चूँकि तूने कभी माता के उपकारों को याद ही नहीं किया...!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिसको उपकारी समझना है, जो वास्तव में महान उपकारी हैं - उसको 'स्वार्थी' मानना, कितना बड़ा पाप है? उपकारी के उपकारों को भूल जानेवाला मनुष्य, मोक्षमार्ग की आराधना कर ही नहीं सकता, धर्मक्षेत्र में उसको प्रवेश ही नहीं मिलता, धर्म करने का अधिकार ही नहीं है उसको।

एक बात बतायेगा मुझे? 'माता-पिता वगैरह स्वार्थी हैं - यह बात तूने कहाँ सुनी? कहाँ पढ़ी? अपने ही स्वार्थों को सिद्ध करने की इच्छावालों ने, जब उनकी स्वार्थसिद्धि हुई नहीं, स्वार्थसिद्धि के मार्ग में उन्होंने माता-पिता या किसी भी स्वजन को अवरोध-रूप में देखा, वे चिल्ला उठे - 'ये सब स्वार्थी हैं! ये सब मतलबी हैं!' हालांकि चिल्लानेवाले स्वयं स्वार्थी हैं, स्वयं मतलबी हैं, परन्तु उसका स्वार्थ माता ने, पिता ने, भाई ने, बहिन ने, पत्नी ने, पुत्र ने, मित्र ने... किसी ने पूर्ण नहीं किया और वह निराश हो गया। उन सब स्नेही के प्रति उसके मन में द्वेष पैदा हो गया, और वह चिल्लाया - 'ये सब स्वार्थी हैं!'

सच बात कह दूँ? मनुष्य की स्वार्थ दृष्टि ही दूसरों को स्वार्थी देखती है! तेरा कोई स्वार्थ है, तेरे मन में कोई सुख पाने का स्वार्थ छिपा हुआ है - वह स्वार्थ - वह वासना, तेरे माता-पिता वगैरह पूर्ण नहीं कर रहे हैं - इसलिए वे तेरी दृष्टि में 'स्वार्थी' लग रहे हैं, उनके प्रति तेरे मन में घृणा हो गई है और इसलिए उनके साथ अविनय-अविवेक और संघर्ष होता रहता है!

दृष्टि बदल दे। ऐसी दृष्टि किस काम की जो हमें चित प्रसन्नता नहीं देती, जो हमें मैत्रीभाव के पवित्र जल में स्नान नहीं करने देती, जो हमें वास्तविक मोक्षमार्ग नहीं देखने देती? दृष्टि बदल जायेगी फिर माता स्वार्थी नहीं दिखेगी वरन् उपकारी दिखेगी! माता गुणहीन नहीं दिखेगी, बल्कि गुणभंडार दिखेगी। तू अपने सुखों के लिए माता का तिरस्कार कर के उसका त्याग नहीं करेगा, माता के सुख के लिए तू अपने सुखों का त्याग करेगा! वह सुखों का त्याग तेरा परमसुख बन जाएगा।

मैं समझता हूँ - कई पारिवारिक समस्याएँ तेरे सामने हैं, तेरी उन सब समस्याओं का तो नहीं, परन्तु मेरे से हो सके उतनी ज़्यादा से ज़्यादा समस्याओं का समाधान करने का मैं प्रयत्न करूँगा। पर यदि तू दृष्टि-जीवनदृष्टि बदल देगा, तो तेरी सब समस्याओं का समाधान तू स्वयं ही कर लेगा। तुझे करना भी नहीं पड़ेगा, स्वतः समाधान हो जाएगा.. दृष्टि बदलने पर समस्या रहती ही नहीं!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माता-पिता इत्यादि परिवार से सुख पाने की दृष्टि, अर्थात 'सब परिवार वालों को मेरे सुख का, मेरी शांति का विचार करना चाहिए, मुझे सुख देना चाहिए..' ऐसा विचार ही भयंकर है। तू कहेगा : 'क्या मनुष्य सुख नहीं चाहता? सुख के बिना जीवन जी सकेगा?' तेरी बात सच है, प्रत्येक मनुष्य सुख चाहता है और जीवन सुखमय हो - यह इच्छा भी स्वाभाविक है। परन्तु एक सत्य-एक सिद्धांत तू अपनी डायरी में लिख कर रख ले : **सुख मिलना अपने पुण्य के आधीन है, सुख देना अपने गुणों के आधीन है!**

तू सुख पाने की इच्छा नहीं करेगा तो भी सुख मिलेगा - यदि तेरे 'पुण्यकर्म' शुभ - प्रारब्ध उदय में आएँगे तो। सुख देने की भावना तो रखनी ही पड़ेगी। सुख देने में तू स्वतंत्र है, सुख पाने में नहीं। सुख मिलने का 'केन्द्र' दूसरा है, तू सुख लेने के लिए देखता है परिवार की तरफ! मेरा तो यह कहना है कि तू अब सुख पाने की - सुखी हो जाने की इच्छा छोड़ दे, तेरे से हो सके इतना दूसरे जीवों को सुख देने का कार्य प्रारंभ कर दे। स्वार्थ का विसर्जन करना ही पड़ेगा। तुझे कोई स्वार्थ नहीं होगा, फिर तेरी दृष्टि में माता-पिता वगैरह स्वार्थी नहीं दिखेंगे, तू उनके ही सुख का विचार करेगा, उनके सुख के लिए तू अपने सुखों का भी त्याग कर दे!

राजा दशरथ का दुःख देखकर श्री राम ने अपने सुखों का त्याग नहीं कर दिया था? कैकेयी ने अपने पुत्र भरत के लिए अयोध्या का राजसिंहासन माँग लिया, दशरथ द्विधा में पड़ गए, राज्य पर अधिकार राम का है, माँग लिया कैकेयी ने...! दशरथ कैकेयी के साथ वचनबद्ध थे... श्री राम ने पिता की उलझन को समझा, उन्होंने क्षण का भी विलंब किए बिना, वनवास स्वीकार कर लिया, अपने सुखों का विचार तक नहीं किया, पिता की उलझन का ही विचार किया! श्री राम ने वहाँ : 'माता कैकेयी स्वार्थी है, अधम है... अन्यायी है...' ऐसा कुछ नहीं कहा! अरे, ऐसा कुछ सोचा भी नहीं था! पिता के प्रति भी श्री राम ने कोई अनुचित विचार नहीं किया था।

यदि श्री राम अपने सुखों के बारे में ही सोचते, तो रामायण कोई दूसरी तरह की ही होती ना? अपने ही सुखों का विचार करते तो राम अपने पिता दशरथ से लड़ते! माता कैकेयी से झगड़ते! राज्य का बँटवारा होता... अथवा गृहकलह हो जाता...। श्री राम के हृदय में महाराजा दशरथ के प्रति अथवा माता कैकेयी के प्रति किसी भी तरह का द्वेष या दुर्भाव पैदा ही नहीं हुआ। उन्होंने तो अपना ही कर्तव्य सोचा। 'ऐसी परिस्थिति में पिताजी के प्रति मेरा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्या कर्तव्य है?' इतना ही सोचा। 'पिताजी का क्या कर्तव्य है - पिताजी को क्या करना चाहिए,' यह नहीं सोचा। उन्होंने अपने सुखों का त्याग कर दिया।

'दुनिया स्वार्थी है,' ऐसा मत सोचो, 'दुनिया के सब जीव मेरे मित्र हैं, ऐसा सोचो। मित्रता की शर्त है - परहित का विचार! सब जीवों के हित का, कल्याण का विचार ही तो मित्रता है। 'विश्व का कल्याण हो' विश्व के जीवमात्र का कल्याण हो - इस पवित्रतम प्रार्थना से अपने प्राणों को प्लावित करो।

शांति से, स्वस्थ चित्त से पत्र पढ़ना, दो-तीन बार पढ़ना, मन में किसी भी तरह की जिज्ञासा जागृत हो, मुझे अवश्य लिखना, जय वीतराग!

भीवंडी, १ अक्टूबर १९७५

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जहाँ पर प्रेम होता है... भीतरी लगाव होता है... वहाँ पर वैचारिक या व्यावहारिक मतभेदों को तनिक भी जगह नहीं होती है।*
- *श्रद्धायोग्य, भक्तियोग्य एवं प्रीतियोग्य पात्रों के साथ कभी भी वाद-विवाद या अर्थहीन चर्चा में नहीं उतरना चाहिए।*
- *जो हमारे विचारों से सहमत नहीं भी हो... उनके प्रति तिरस्कार या अनादर रखना उचित नहीं है।*
- *सहजीवन के लिए वैचारिक सहिष्णुता अत्यंत आवश्यक होती है।*
- *बाहरी रूप-रंग की चकाचौंध अस्थायी होती है... जीवन की यात्रा में बाहरी सामंजस्य से कहीं ज़्यादा भीतरी संवादिता जरूरी है।*

पत्र : २

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

मनुष्य का यह स्वभाव है कि लंबी प्रतीक्षा के बाद कुछ मिलता है, तो मनुष्य ज़्यादा आनंद अनुभव करता है।

तेरा पत्र कितनी प्रतीक्षा के पश्चात मिला! परंतु मिला इसलिए आनंद! तेरा पत्र पढ़ता गया... मानो ऐसा लगा कि तू प्रगाढ़ निराशा से आक्रान्त हो गया है। मैं नहीं जानता कि तू इतना विकल क्यों है? तेरे अन्दर इतनी पीड़ा क्यों है? क्यों तू यह व्यथा... यह उदासी... यह विषाद अपने मन में सँजोए हुए हैं? मुमुक्षु! क्या तू मेरे ऊपर विश्वास करेगा? यदि मैं तेरे दिल पर छाई हुई व्यथा और उदासी की घनघोर घटा को बिखेरने में सहायता करूँ तो! मैं तेरे कोमल हृदय को शांति, प्रसन्नता और पवित्रता से भरना चाहता हूँ।

तेरे इस पत्र से मैं इतना जान सका हूँ कि तेरे परिवार के बड़ों के साथ तेरे वैचारिक मतभेद उग्र बनते जा रहे हैं। तू अपने विचारों को सत्य मानता है, तेरे माता-पिता अपने विचारों को सत्य मानते हैं।

मेरे प्रिय मुमुक्षु! तू मुझे एक बात सही-सही बताएगा? क्या तू तेरे परिवार में से किसी का भी प्रेम चाहता है? तूने अपने चित्त में निर्णय कर लिया है न कि 'घर में से किसी का भी प्रेम नहीं मिलेगा तो चलेगा... ' उस व्यक्ति' का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रेम मिलना चाहिए.. और मिल रहा है...' परिवार के साथ वैचारिक मतभेद की भी यही जड़ है न? सच्ची बात तो यह है कि **जहाँ से मनुष्य प्रेम चाहता है, वहाँ कोई भी वैचारिक या व्यावहारिक मतभेद टिक ही नहीं सकता।**

क्या तू माता-पिता और भाई-बहन को इसलिए ठुकराना चाहता है कि वे तेरे आध्यात्मिक विकास में विघ्नभूत बनते हैं? तेरी धार्मिक भावनाओं को वे कुचलते हैं? नहीं न? मैं जानता हूँ तेरे परिवार को। वह परिवार कभी भी धार्मिक या आध्यात्मिक विकास में रोड़ा बन ही नहीं सकता। शायद तेरी माता तो यह चाहती होगी कि तू मोक्षमार्ग का पथिक बने।

मैं यह अनुमान करता हूँ कि तू तेरे आत्महित को नहीं समझते हुए कोई अहितकारी प्रवृत्ति करता होगा, तुझे वह प्रवृत्ति हितकारी-सुखकारी लगती होगी... तेरे पिताजी और माताजी को वह प्रवृत्ति अहितकर लगती होगी... और वे ऐसी प्रवृत्ति का त्याग करने के लिए कहते होंगे... सही बात है न? उनकी बात सुनना भी तुझे अब पसन्द नहीं लगता, सही बात है-यौवनकाल ही ऐसा है...।

तू तेरे माता-पिता की दृष्टि को समझने का प्रयत्न करेगा? वे तेरे लिए जो कुछ सोच रहे हैं - क्या तुझे दुःखी करने का उनका इरादा है? नहीं, तू जो कदम उठाना चाहता है, उसमें वे तेरे को दुःखी देख रहे हैं, वे नहीं चाहते कि तू दुःखी बने। उनके हृदय में तेरे प्रति स्नेह है, स्नेह कभी दुःखी करने का सोच ही नहीं सकता। तेरी माता के पास तो ज्ञानदृष्टि भी है। वह तो तेरे वर्तमान जीवन का ही नहीं, तेरी आत्मा का भी विचार करती होंगी। तू उनकी विचारधारा को शांत चित्त से सोचना अपने सुख और कल्याण की कामना करने वालों के प्रति घृणा कभी नहीं करना। हो सकता है, उनके सब विचार हमको पसंद न भी हो। जब वह व्यक्ति... जिसे तूने प्रेम किया हो, वह तिरस्कार करने लगता है तब? वह ठुकराने लगता है तब? दिल के टुकड़े हो जाते हैं न?

जिस दिन तेरा जन्म हुआ था, तेरी ममतामयी माता ने तुझ से प्यार किया था.... आज दिन तक वह प्यार करती आ रही है... हाँ, तू भी उससे प्यार करता था, उसके बिना एक क्षण भी अकेला नहीं रह सकता था... याद कर उन दिनों को।

आज तू एक अनजान व्यक्ति के प्यार में बह कर, उस निर्मल प्यार देने वाली माता को ठुकरा रहा है... क्या होता होगा उस मातृहृदय को? मातृहृदय

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के श्मशान में तू प्रियतमा के प्यार का महल बनाना चाहता है? उस महल में क्या तू सुख पाएगा? आनंद पाएगा?

क्या तेरी माता ने तेरे सुख की प्रतिपल चिन्ता नहीं की है? तेरी हर सुविधा का ख़्याल नहीं किया है? प्रेम की निशानी और क्या होती है? तू तेरी माता को विनय से, भक्ति से... प्रेम से तेरे विचारों में सहमत बना ले अथवा तू उनके विचारों का स्वीकार कर ले।

अच्छा, मान ले कि तूने उसके साथ (तेरी मनपसंद व्यक्ति से) शादी कर ली, क्या उसके साथ कभी भी वैचारिक मतभेद पैदा ही नहीं होंगे? उस समय तू उसका भी त्याग कर देगा क्या? उसके विचारों से असहमत रह कर जीवन व्यतीत करेगा? बोल, तू क्या करेगा उस समय?

प्रिय मुमुक्षु! जीवन की वास्तविकता को मुक्त मन से स्वीकार कर लेना चाहिए। मुख पर मुस्कराहट और आँखों में स्नेह के साथ दूसरों के विचारों का स्वागत करो - जिनके साथ प्रेम करना है, जिनके साथ जीवन व्यतीत करना है, श्रद्धापात्र, भक्तिपात्र और प्रेमपात्र व्यक्तियों के साथ कभी भी वाद-विवाद मत करो। हालाँकि वहाँ वाद-विवाद हो ही नहीं सकता, यदि होता हो तो वह व्यक्ति श्रद्धापात्र, भक्तिपात्र या प्रेमपात्र नहीं रहेगा।

माता का प्रेम एक असाधारण वस्तु है, उसका मूल्यांकन करना आवश्यक है। मैं जानता हूँ तेरी करुणामूर्ति माता को। कोई प्रशांत रात्रि में... जब सारा संसार निद्रामग्न हो, चारों और नीरवता हो, तब तेरी उस माता के स्नेहसिक्त नयनों को कल्पना की दृष्टि से जरा देखना।

इतनी भावात्मक भूमिका बनाकर, बौद्धिक भूमिका पर, इस विषय में कुछ बातें करूँगा। पत्र में कितना लिखूँ? लिखते-लिखते कभी थक भी जाता हूँ... तब अनन्त आकाश की तरफ देख लेता हूँ... आँखें बंद हों जाती हैं... अनन्त संसारयात्रा के विचारों में डूब जाता हूँ.... परन्तु आकाश में बिजली चमकती है और पत्र आगे बढ़ता है... पत्र कुछ लम्बा तो हो ही गया है... तुम को पसन्द आएगा न? पसन्द नहीं आए तो लिख देना, मैं बुरा नहीं मानूँगा। क्या बताऊँ? लंबे पत्र लिखने का मैं आदी नहीं हूँ... फिर भी तुम्हे जब लिखने बैठता हूँ... लिखता ही रहता हूँ...। यह भी तेरे प्रति मेरे प्रेम की ही प्रेरणा का परिणाम होगा!

१. क्या तेरे माता-पिता को तेरे से कोई स्वार्थ है? यदि स्वार्थ होता तो वे तुझे त्याग के मार्ग पर जाने के लिए प्रेरणा नहीं करते। अर्थात वे निःस्वार्थ हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. उनका यह भी आग्रह नहीं कि तू त्यागी ही बन जाये, यदि त्यागी नहीं बन सकता तो वैसा भोगी भी नहीं बनाना चाहते कि तेरी आत्मा दुर्गति में भटक जाए गृहस्थ जीवन में भी तू यथोचित त्याग और संयम के साथ जिए वैसा वे चाहते हैं।

३. वे तेरे विचारों से सहमत नहीं होते हैं - इसलिए उनके प्रति तिरस्कार करना उचित नहीं है। तेरे विचार ही सही हैं, ऐसा आग्रह रखना क्या उचित है?

४. यदि वैचारिक सहिष्णुता नहीं होगी जीवन में, तो किसी भी व्यक्ति के साथ तेरा स्नेह संबंध अखंड नहीं रह पाएगा। सुन्दरता के आकर्षण क्षणजीवी होते हैं, जीवन की यात्रा में जीवनसाथी सुन्दर होने मात्र से काम नहीं चलता। ज्ञानी, सहिष्णु, उदार और गंभीर होना भी जरूरी है।

ज़्यादा क्या लिखूँ? पारिवारिक क्लेश शांत हो जाना चाहिए। सबके मन प्रसन्न और मैत्रीभाव से भरपूर हो जाने चाहिए। जीवमैत्री के बिना कोई भी धर्मक्रिया 'अमृत क्रिया' नहीं बन सकती है। सब जीवों के प्रति मैत्री की भावना दृढ़ बनानी चाहिए। उपकारी के प्रति तो 'प्रमोदभाव' भी होना चाहिए। सब जीवों के साथ मैत्रीभावना रखने वाला मनुष्य अपने उपकारी और हितकारी माता-पिता के प्रति द्वेष, घृणा या तिरस्कार कर सकता है क्या? तेरा प्रत्युत्तर शीघ्र मिलेगा न?

जय वीतराग!

भीवंडी, १ नवम्बर १९७५

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *वर्तमान में जो सुख-सुविधा के साधन हमारे पास है, सहजतया उपलब्ध है, उनका मूल्यांकन करना चाहिए।*
- *सर्वगुण संपन्न व्यक्ति इस दुनिया में मिलना संभव नहीं है... अरे, हम खुद भी तो वैसे गुण संपन्न कहाँ है?*
- *जो नहीं है... जो नहीं मिला है... उसके गिले-शिकवे में सिसकने की बजाय जो मिला है... जितना मिला है... जैसा मिला है... उसके लिए परमात्मा का शुक्र अदा करना सीखें।*
- *जो व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से प्रेम-स्नेह व सद्भाव देने वालों का आदर या मूल्यांकन नहीं कर सकता है... वह परोक्ष तत्त्व परमात्मा या धर्म का मूल्य समझेगा भी तो कैसे?*
- *कल्पना के जगत से वास्तविक दुनिया का फासला बड़ा भारी होता है।*

पत्र : ३

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिल गया था, प्रत्युत्तर विलंब से दे रहा हूँ, कुछ परिस्थितिवश! तेरा पत्र पढ़कर मुझे अति प्रसन्नता हुई। पत्र में सरलता है, स्वाभाविकता है... साहजिकता है। नहीं है दंभ, नहीं है आक्षेप, नहीं है भाषा का आडंबर... तूने अपना हृदय खोलकर मेरे सामने रख दिया है... चिन्ता नहीं करना, तेरे कोमल हृदय को कोई आघात नहीं होगा। तेरी वेदनाओं के प्रति मेरी संवेदनाएँ हैं... तेरा और मेरा किसी एक सूक्ष्म भूमिका पर संबंध स्थापित हो गया है। यही तो प्रेरक तत्त्व है इस पत्रलेखन में!

तेरे विचारों के अनुकूल वातावरण तू चाहता है न? वैसा वातावरण नहीं मिल रहा है - इसलिए तू अशांति अनुभव कर रहा है न? दुःख अनुभव कर रहा है न? इसका अर्थ यह है कि तू मानसिक स्तर पर दुःखी है। वर्तमान में तू ऐसे मानसिक दुःखों की स्मृति में और भविष्यकालीन सुखों की कल्पना में खोया हुआ है। इससे तेरा वर्तमान भी दुःखमय हो गया है। तेरे पास सुख के अनेक साधन उपलब्ध होने पर भी, तू उन साधनों से सुखानुभव नहीं कर रहा है। एक बात मत भूल जाना कि सुख के जो साधन सहज रूप से तेरे पास

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं, उनके अभाव में, तेरी कल्पना का पात्र मिल भी गया, तू सुखानुभव नहीं कर सकेगा, तेरी कल्पना का स्वर्ग अदृश्य हो जाएगा। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि तेरे पास वर्तमान में जो और जितने सुख के साधन हैं- तू उन साधनों का मूल्यांकन कर, उन साधनों को उपलब्ध कराने वालों का मूल्यांकन कर।

एक रोचक प्रसंग याद आ गया। सोक्रेटीस के जीवन का प्रसंग है। सोक्रेटीस का १५ साल का लड़का अपनी माँ से परेशान था, सोक्रेटीस के पास आकर कहता है : मुझे मेरी माँ के साथ नहीं रहना है...।

सोक्रेटीस ने पूछा : 'क्यों?'

'लड़के ने कहा : 'मेरी माँ मुझे परेशान करती है... मेरे से लड़ती है...' सोक्रेटीस ने कहा : 'तेरी माँ का यह तो स्वभाव हो गया है... बेटा, मैं कितने वर्षों से यह स्वभाव निभाता रहा हूँ... तुझे भी निभाना चाहिए। तू याद कर : जब तू बीमार हो गया था, उस समय दिन-रात तेरे पास कौन बैठा रहा था? तेरी माँ न? तुझे समय पर दवाई कौन देता था? तेरी माँ न? तेरे सिर पर 'आईस बेग' कौन रखता था? तेरी माँ न? तेरे शरीर को 'स्पंज' कौन करता था? तेरी माँ न? मैंने तो कुछ भी सेवा नहीं की थी? ऐसी माँ के प्रति तू नफरत करता है? ऐसी माँ से तू दूर रहना चाहता है?

लड़के की दृष्टि में माँ की कल्पना बदल गयी! माँ के प्रति आदर और बहुमान पैदा हो गया उसके मन में।

क्या किया सोक्रेटीस ने? लड़के को स्वाभाविक रूप से जो माता की सेवा मिल रही थी, जिसका मूल्यांकन लड़का नहीं कर रहा था, सोक्रेटीस ने मूल्यांकन कर बताया। हाँ, ऐसा कोई नियम नहीं है कि एक व्यक्ति में हम चाहें वैसी सभी प्रकार की योग्यता हो! सब प्रकार के गुण हों! हम भी वैसे सर्वगुण संपन्न हैं क्या? जो अपेक्षा हम अपने स्नेही-स्वजन और मित्रों से रखते हैं, क्या उन सबकी अपेक्षाएँ हम पूर्ण कर सकते हैं?

मेरे प्यारे मित्र, मेरी यह स्पष्ट राय है कि तेरे पास आज जो भी सुख के साधन हैं, उनका मूल्यांकन कर और संतुष्ट बन! विशाल विश्व के असंख्य मानवों की तरफ तो जरा देख... तेरे पास जितने सुख के साधन हैं, कितने मानवों को ये उपलब्ध हैं? तेरे पास मकान है... करोड़ों मनुष्य बेघर हैं। तेरे पास भर पेट खाने को भोजन हैं... करोड़ों मनुष्य भूखे पेट सो जाते हैं! तेरे पास पहनने को कितने कपड़े हैं? जबकि करोड़ों मनुष्य नंगे भटक रहे हैं! तेरे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पास ममतामयी माता, स्नेहपूर्ण पिता... भाई... बहन इत्यादि स्वजन हैं, लाखों लड़के-लड़कियाँ स्वजन विहीन दशा में इधर-उधर भटक रहे हैं! तुझे कितने अच्छे मित्र मिले हैं? करोड़ों मनुष्य ऐसे हैं, जिनको अच्छा मित्र नहीं मिला है और इसलिए वे बेचैन हैं! तुझे कितना मान-सम्मान मिल रहा है? करोड़ों मनुष्य ऐसे हैं जो लोगों की घृणा-तिरस्कार और निन्दा का शिकार बन रहे हैं! तेरा शरीर कितना निरोगी है! जब कि विश्व में करोड़ों मनुष्य रुग्ण अवस्था में व्यथित हैं? तेरे तन-मन की चिन्ता करने वाले कितने हैं? संसार में इतनी चिन्ता करने वाले कितने को मिले हैं? तूने कितनी अच्छी शिक्षा पाई है और शिक्षा प्राप्त करने के कितने अनुकूल संयोग प्राप्त हुए हैं? दुनिया में देख, करोड़ों मनुष्य अशिक्षित हैं, करोड़ों को शिक्षा प्राप्त करने के साधन ही नहीं मिले हैं!

मैं यह किसलिए लिख रहा हूँ? तू मेरी इन बातों पर गहराई में जाकर सोचें। तुझे जो कुछ अच्छा मिला है, उसका मूल्यांकन करे।

कितना-कितना मिला है हमें? करोड़ों मनुष्यों को जो नहीं मिल पाया है, वह हमें मिल गया है! कैसे मिल गया? यह सब जो मिला है, क्या तेरे पुरुषार्थ से मिला है? क्या किसी की करुणा से, किसी के उपकार से, किसी के प्रेम से नहीं मिला? है, कद्रदानी उस करुणा की? है, मूल्यांकन उस उपकार का? है, संवेदना उस प्रेम की?

मुझे कभी-कभी यह विचार आता है कि जो मनुष्य प्रत्यक्ष करुणा करने वालों का और प्रत्यक्ष प्रेम करने वालों का भी मूल्यांकन नहीं कर सकता है, कद्रदानी नहीं कर सकता है... तो फिर परोक्ष रूप से करुणावंत परमात्मा का, परमोपकारी गुरुजनों का और प्रेमपूर्ण कल्याण मित्रों का मूल्यांकन कैसे कर सकता है? और यदि इस प्रकार मूल्यांकन नहीं करता है तो श्रद्धावान और ज्ञानवान कैसे बन सकता है? श्रद्धा और ज्ञान के अभाव में वह सच्चरित्री कैसे बन सकता है? श्रद्धा, ज्ञान और सच्चरित्र के अभाव में वह आन्तरिक प्रसन्नता, आत्मिक आनंद... परमानंद कैसे पा सकता है? परन्तु अभी जाने दो इस बात को, कभी इस विषय पर विस्तार से लिखूँगा।

इस पत्र में तो मैं तेरे चिंतित मन को... व्यथित हृदय को... ऐसा कुछ देना चाहता हूँ... कि जिससे तेरा भारी-भारी मन हल्कापन अनुभव करे, व्यथित हृदय की व्यथाएँ विदीर्ण हो जाये! परन्तु यह कब हो सकेगा? जो मैं देना चाहता हूँ - तू उसको ग्रहण करेगा, तब! मेरे प्रिय आत्मीयजन! मुझे पूर्ण विश्वास है कि तू मेरी भेंट का स्वीकार करेगा ही!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मानसिक दुःखों से मुक्ति पाने का उपाय क्या है? स्वस्थ मन से चिन्तन किया है? सोचा है? अपनी कल्पना के अनुरूप परिस्थितियों का निर्माण करना, अपने बस की बात नहीं है। कवियों की कविता की दुनिया वास्तविकता से हजारों किलोमीटर दूर है। चलचित्रों की दुनिया वास्तविकता से लाखों-करोड़ों मील दूर है। तू यदि उन कविताओं की दुनिया को अथवा चलचित्रों की दुनिया को तेरी कल्पना की दुनिया बनाना चाहता है... अपने भावी जीवन की सृष्टि करना चाहता है, तो तू गंभीर भूल कर रहा है। तेरे विचार यदि उन कविताओं से, उन उपन्यासों से, उन चलचित्रों से निर्मित हैं - और तू उन विचारों का आग्रही है, तो मेरे ख्याल से इस दुनिया में... जो कि वास्तविक दुनिया है, उसमें किसी से तेरा वैचारिक या व्यावहारिक संवाद स्थापित नहीं हो सकेगा। वैचारिक-विसंवादिता और व्यावहारिक संघर्ष सदैव बना रहेगा।

वैचारिक-आग्रह में जाने से पूर्व, विचारों का संशोधन हो जाना चाहिए।

'यह विचार स्व-पर के लिए हितकारी है या नहीं? यह विचार तर्कसंगत है या नहीं? यह विचार शांति समता और समाधि की तरफ ले जाने वाला है या नहीं? इस विचार का व्यावहारिक रूप सुन्दर, सरल और संवादी है या नहीं? इतना सोचना अनिवार्य होता है। इतना भी सोचे बिना यदि वैचारिक आग्रह में फँस गया तो वह आग्रह दुराग्रह बन जाएगा और राहु से भी भयंकर ग्रह-दशा में फँस जाएगा।

एक काम करेगा? अभी कुछ समय तू अपने भविष्य की कल्पनाएँ करना छोड़ दे। कल्पना की स्वर्ग-रचना करना छोड़ दे। जब अच्छा 'मटीरीयल' नहीं मिलता हो, ईंट, 'सिमेन्ट' लोहा, लकड़ी... वगैरह अच्छा नहीं मिलता हो, तब भवननिर्माण नहीं करना चाहिए, यदि कर दिया तो ध्वस्त होने में देर नहीं लगेगी। वैसे जब तक अच्छे विचार-ज्ञान-शुद्ध विचार नहीं हों वहाँ तक भविष्य की कल्पनाओं का महल नहीं बनाना चाहिए। भूतकाल की ऐसी स्मृतियों में मत डूब जा कि जिससे वेदनाएँ उभर आए, मन व्यथित हो जाये और वर्तमान क्षण दुःखमय बन ज़ाए!

वर्तमान क्षण को सुखमय, शांतिमय और आनंदमय बनाने का पुरुषार्थ शुरू कर दे। वह पुरुषार्थ कैसा होता है - आगे कभी लिखूँगा.. इस बारे में, तू चाहेगा तब! इस पत्र के प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा करूँगा... तेरे शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य की कामना करता हूँ।

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *तीर्थयात्रा की सफलता-सार्थकता हमारे भीतर में सोची हुई अनंत-असीम आत्मशक्ति को उद्‌घाटित करने में ही समाहित है।*
- *अपने आप को जानना जरूरी है...। यही तो तमाम उपदेशों का सार है! स्वयं को नहीं जाना तो फिर संसार को जानने से क्या? स्वयं को पहचान लिया फिर संसार की पहचान क्या काम की?*
- *अपने भीतर में प्रवाहित अस्मिता में डूब जाना है...।*
- *आत्मनिष्ठा, आत्मश्रद्धा और आत्मजागृति के बगैर संबंधों में सामंजस्य स्थापित करना संभव नहीं है।*
- *इच्छाओं और आकांक्षाओं के बीहड़ वन में भटकनेवाला आदमी पराधीनता के अलावा सोचेगा भी क्या?*

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला! हम एक पवित्र तीर्थ में... भगवान मुनिसुव्रत स्वामी के तीर्थ 'अगासी' में आए हैं। तीर्थंकर मुनिसुव्रत स्वामी का भावलोक बादल बनकर मेरे हृदयाकाश में छा जाता है, मेरी चेतना-मयूरी सचमुच हर्षविभोर बनकर नृत्य करने लगती है। ऐसे तीर्थस्थान यदि अतीन्द्रिय आत्मिक अनुभवों की प्रयोगशाला (लेबोरेटरी) बन जाएँ तो! मुझे लगता है कि जीवन और मुक्ति की कोई अचूक नई राह मिल जाये। अन्यथा ऐसे तीर्थों का क्या मूल्य है? तीर्थयात्रा की सफलता अपराजेय आत्मशक्ति के उद्‌घाटन में, नई आत्मचेतना की जागृति में और असंख्य आंतरिक-उलझनों के निराकरण में है।

तेरा पत्र ध्यान से पढ़ा। मुझे आश्चर्य इस बात का होता है कि तेरे जैसा नौजवान निराश है। बेशक, आज मनुष्य प्रायः दिशाशून्य हो गया है। परन्तु आन्तरिक काम, क्रोध आदि आसुरी परिबलों से पराजित होना और पराजय के करुण गीत गाते रहना... अनन्त आत्मशक्ति का अनादर नहीं है क्या? सच्ची और सही बात तो यह है कि हमें अपनी आन्तर-बाह्य दुर्बलताओं और उलझनों से ऊपर उठकर आत्मशक्ति का स्वामित्व प्राप्त करना ही होगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुझे तो आज तुझे यही लिखना है :

'आत्मानं विद्धि।'

उपनिषद के ऋषि का यह वचन कितना यथार्थ है। **आत्मा के अज्ञान में से ही सब दुःख जन्मे हैं।** अपने को हम जानें। अपने को जाने बिना दूसरों को कैसे जान पाएँगे? असल रूप में नहीं ही जान पाएँगे।

तेरी यह समस्या... अथवा तो मान्यता आज भी हिमालय की तरह अडिग है कि 'मुझे... मेरे व्यक्तित्व को कोई नहीं समझता है... मेरी इच्छाओं को... मेरी अभिलाषाओं को कोई जानना भी नहीं चाहता है...।'

मनुष्य अपनी मान्यता में अडिग रहे-रह सकता है... चूँकि वह स्वतंत्र है। परन्तु मान्यता उसकी सम्यक् है या मिथ्या-इसका निर्णय भी तो होना चाहिए। सबकी सभी मान्यताएँ सम्यक् ही होती हैं - ऐसा तो तू नहीं मान बैठा है न? मुझे तो ऐसा लगता है कि तुझे तेरी इस मान्यता का पुनर्विचार करना चाहिए। उस पुनर्विचार का प्रारंभ **'आत्मानं विद्धि'** से होना चाहिए। **'नो धाय सेल्फ'** से होना चाहिए। **'अप्प दीपो भव'** से होना चाहिए।

दूसरी बात : यह दिव्य पुनर्विचार करेगा कौन? तू करेगा? 'तू' कौन? 'तू' जो अभी अपने आपको समझ रहा है वह नहीं, 'तू' यानी आत्मा! आत्मभाव में ही आत्मा को जाना जा सकता है। **'आत्मा आत्मानं वेत्ति'** आत्मा आत्मा को जानती है... देखती है। आत्मा को जाने बिना किसी समस्या का स्थाई.. शाश्वत समाधान नहीं मिलेगा... कोई अविनाशी प्रकाश प्राप्त नहीं होगा, कोई तन-मन के दुःखों का अन्त नहीं आएगा। इसलिए कहता हूँ : आत्मा को जान... जो तू स्वयं है। तू अपने आपको... अनन्त चैतन्य शक्ति के स्वामी को जान ले। बस, तेरे व्यक्तित्व को दूसरे जान लेंगे। और, जब तू तेरे भीतरी साम्राज्य में विचरण करने लगेगा तब फिर कोई इच्छा, अभिलाषा... वासना नहीं बचेगी। मेरे प्रिय आत्मन्! अपने भीतर एक ध्रुव... शाश्वत.. अखंड अस्मिता है.... उसके साथ समरस हो जाना है। फिर पल-पल परिवर्तनशील मानसिक विचारों से, तमाम बाहरी हालातों से, उत्थान-पतन से एवं वेदनाओं से उत्तीर्ण हो जाएँगे। सुखी और नाराजगी, हर्ष और शोक इत्यादि भावद्वन्द्वों से अस्पृश्य रहेंगे। हम मात्र ज्ञाता और द्रष्टा बने रहेंगे।

अपनी जीवन व्यवस्था कितनी विसंवादी बन गई है? अपने भीतर की दुनिया मलिन हो गई है! जो कुछ हो रहा है दैहिक और मानसिक स्तर से!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कि जो भूमिका अज्ञान से आवृत है। नहीं रहा है ज्ञाताभाव, नहीं रहा है द्रष्टाभाव। कर्ताभाव और भोक्ताभाव में हम बुरी तरह से फँस गए हैं।

प्रतिपक्षी यदि अहंकारी है, हमारा जवाब भी अहंकार है। प्रतिपक्षी यदि रागी-द्वेषी है, हमारा प्रत्युत्तर भी राग-द्वेष है। प्रतिपक्षी अत्याचारी है, हमारा उत्तर भी अत्याचार है। ये ही हमारी क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ हैं। ये ही हमारे आघात और प्रत्याघात हैं। इसमें कहाँ है आत्म-ज्ञान?

अखंड और अटूट आत्मनिष्ठा... आत्मश्रद्धा के बिना, प्रतिक्षण आत्मजागृति के बिना व्यक्ति व्यक्ति के बीच संवादिता.... सम्बन्धों की सम्यक् स्थापना नहीं हो सकती है। इस बुनियादी बात को छोड़कर, इससे भिन्न ज्ञान-विज्ञान के द्वारा निर्धारित पारिवारिक, सामाजिक या राष्ट्रीय व्यवस्था, दंभपूर्ण और स्वार्थपूर्ण व्यवस्था का शिकार ही होगी।

एक बात बीच में कर दूँ? मेरे इस पत्र से तू मुझसे नाराज नहीं होना। मुझ पर भी तेरी वह मान्यता 'मुझे कोई नहीं समझता...' मत थोपना। मैं तुझे समझता हूँ... भलीभाँति समझकर ही तुझे समझाने का प्रयत्न करता हूँ। मैं तेरी परिस्थितियों से अनभिज्ञ भी नहीं हूँ। मेरे दिल की गहराइयों में तेरे प्रति मैत्री और करुणा की गंगा अनवरत प्रवाहित है... मात्र तेरे प्रति ही नहीं, जीवमात्र के प्रति।

आयुष्यमान! निरीहभाव से जीवन व्यतीत करो। अभीष्ट स्वतः ही आ मिलेगा। मन की असंख्य इच्छाओं को बाधक मत बनाओ। इच्छाओं से मुक्त... सहज और स्वाभाविक जीवन जीओ। असंभव नहीं है यह बात। जब रामचन्द्रजी ने वनवास में जाने का निर्णय किया था... वे सहजरूप से चले गए थे। सीताजी भी सहजभाव से ही उनके पीछे चली गई थी... पढ़ा है, उनका वनवास का जीवन? कितने निरीह भाव से उन्होंने जीवन व्यतीत किया था। और लक्ष्मण ने? न तो थी उनको अपने सुखों की स्पृहा... न था उनको अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व को उभारने की कामना! निष्काम वृत्ति से लक्ष्मण रामचन्द्रजी का अनुसरण कर रहे थे।

क्या अपने लिए यह संभव नहीं है? तू कह देगा : 'हाँ' मेरे लिए तो संभव नहीं...।' कोई बात नहीं। इच्छाओं के... वासनाओं के जंगल में भूला पड़ा हुआ मनुष्य... दूसरा सोच भी क्या सकता है? फिर तू हो, मैं हूँ या कोई भी और हो।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जरा सुन ले भीतर की चीत्कार को। तू जब तक चिल्लाता रहेगा, भीतर की चीत्कार तू नहीं सुन सकेगा, रुक जा, चिल्लाना बंद कर। सुन, स्थिर बनकर सुन... अपने भीतर से उठती आवाज को!

'ओ पुरुष, मुझे क्यों भूल गया... मुझे जान ले... मुझे देख ले... मैं ही तेरी वल्लभा हूँ... चेतना हूँ... शाश्वत सहचरी हूँ... मुझे छोड़कर तू कहाँ भटक रहा है... तुझे क्या चाहिए? आ, मेरे पास आ, तुझे मैं प्रेम दूँगी, स्नेह दूँगी.. मैं ही तुम्हारी हूँ... तुम्हारी प्रकृति हूँ। तुम्हारी मुक्ति यहाँ है... तुम्हारी पूर्णता यहाँ है...!'

सुनी है आवाज भीतर की? पाना है, जो भीतर है उसको? आत्मा की पुकार आत्मा नहीं सुन रही है। जड़ इन्द्रियों की पुकारें सुनने में... इन्द्रियों को तृप्त करने में और इन्द्रियों की माया-ममता में 'पुरुष' खो गया है।

आत्मभाव के आलोक में कभी भी तू अपने आपको देखना। आत्मपरिणति के प्रकाश में तू तेरी इच्छाओं को देखना। वे इच्छाएँ सम्यक् हैं या मिथ्या हैं, स्पष्ट दिखाई देगा।

आज ज़्यादा नहीं लिखता हूँ। कई तीर्थ यात्रीक यहाँ आए हैं... उनके आत्मभावों को भी टटोलना है। इस पत्र के बारे में तेरी प्रतिक्रिया मुझे अवश्य लिखना।

अगासी (महाराष्ट्र)

जय वीतराग!

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जरा अपने बंधे-बंधाये सीमित दायरों की दकियानूसी से बाहर आकर देखो! जिन्दगी को इतनी छोटी, इतनी छिछली बनाकर मत जियो।*
- *जब तक मोह एवं अज्ञान के आवरण से आत्मा आवृत है, तब तक दुःखों का अंत कहाँ?*
- *एक ही व्यक्ति के खातिर या दो चार लोगों की खातिर जीना और बात है... जबकि जिनका कोई नहीं है, उन सबके होकर जीना दूसरी बात है!*
- *सूरज की किरणें भी जिन्हें छूने से कतराती है, ऐसे खंडहरों में दीप जलाना भी तो जरूरी है!*
- *जहाँ फूल खिलने से पहले ही कली मुरझा जाती है... ऐसे में भी उपवन लगाना होगा! वह भी खिला-खिला उपवन!*

पत्र : ५

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र पढ़ा। मुझे ऐसी ही अनुभूति हो रही थी कि तू ऐसा ही कुछ लिखेगा... मेरी अनुभूति सच सिद्ध हुई इसलिए आनंद हुआ।

तू तेरे सुख के लिए, तेरे विकास के लिए... ऐसा व्यक्ति, ऐसा पात्र खोज रहा है... जिसके संयोग में तुझे सुख, आनंद और प्रसन्नता प्राप्त हो! तेरा मनचाहा विकास हो! तेरी यह भी भावना है कि उस व्यक्ति को भी तेरे साथ सुख-आनंद और प्रसन्नता मिले।

खैर, मेरी भी यही कामना है कि तू सुखी बने, तू प्रसन्न रहे और तेरी उन्नति हो! परन्तु इतने मात्र से मुझे जीवन की यथार्थता प्रतीत नहीं होती। ऐसी इच्छा स्वयं सुखी होने की इच्छा-दो तीन स्वजनों को सुखी करने की इच्छा-कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती! ऐसी इच्छा तो पशुओं में भी दिखाई देती है।

तू क्या तेरा प्रेम, तेरा स्नेह, तेरी करुणा... सब कुछ एक या दो व्यक्ति को ही दे देगा? क्या तू तेरी व्यथा को... तेरी ही पीड़ा को देखेगा? किसी दीन-दरिद्र की झोपड़ी में बिलखते बच्चों को नहीं देखेगा? है कहीं कोई उसका

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहारा? एक बुद्धिमान और जागृत युवा होकर, उन करोड़ों मनुष्यों की, जो कि अनन्त अभाव में भूख प्यास, रोग-शोक, आधि-व्याधि और आक्रन्द में जीवन जीने को मजबूर हैं, तरफ नहीं देखेगा? इतना स्वार्थी बनेगा? क्या उन करोड़ों दीन-अनाथ-असहाय मनुष्यों के आँसू तू नहीं पोंछेगा? उनके लिए तू आँसू नहीं बहायेगा?

इतना ही नहीं, तेरी दृष्टि को चौदह राजलोक-व्यापी बना दे। असंख्य पशुओं को, नारकी के असंख्य जीवों को भी देख ले। उनकी भयंकर पीड़ा को तो देख। नरक की वैतरणी में जो अपने ही खून से उबलती कड़ाही में तले जा रहे हैं... कितने असहाय? कितनी तड़पन? कितनी यन्त्रणा और कितना सन्त्रास?

और, उन सूक्ष्मतम निगोद के जीवों को तो देख जरा, एक साँस में अठारह बार जन्म और मृत्यु... कितना भयानक कष्ट? मेरे प्रियजन! आँखें बन्द कर जरा देखो... हमने भी अनन्तकाल तक अन्तहीन कष्ट झेले हैं इन दुर्गतियों में। क्या इन असंख्य-अनन्त जीवात्माओं को इस वेदना-त्रास और मृत्यु में जीते तू देख सकेगा? जीवमात्र की इस घोर यंत्रणा को देखते हुए भी तू अपनी सुखशय्या में सो सकेगा?

मेरा मन तो व्यथित हो जाता है, जब संसार के जीवों की घोर यन्त्रणाओं को, प्रपीड़न को और संत्रास को देखता हूँ। जब इनकी जड़ों में उतरता हूँ - मोह और अज्ञान की घोर तमिस्रा देखता हूँ... जब तक जीवात्माएँ मोह और अज्ञान से आवृत हैं, तब तक उनके दुःखों का अन्त नहीं। मन में होता हैः

मोह और अज्ञान के अन्धकार को काट दूँ.. कर्मपाशों को तोड़ूँ और अपनी तमाम शक्ति एकत्र कर विषय-कषाय के बन्धनों पर प्रहार कर दूँ। अब मैं जीवों को बिलखते, छटपटाते... कराहते नहीं देख सकता हूँ...। मैंने अपने अन्तःकरण में माना है कि मेरे जीवन का परम कर्तव्य यही है... मुझे अपने सुखों का विचार तक नहीं करना है।

यह तो मैंने मेरे मन की बात कर दी। तुझे मैं वैसी यथार्थ दृष्टि देना चाहता हूँ कि जिस से तू आत्मानंद का अनुभव कर सके। एक ही व्यक्ति या दो-चार व्यक्ति के लिए ही जीवन जीना... गतानुगतिकता ही है। यह जीवन तो जीव मात्र को प्रेम... स्नेह और करुणा प्रदान करने के लिए है। आत्मचेतना की जागृति और उर्ध्वीकरण करने के लिए है। स्थूल में से सूक्ष्म में जाने के लिए है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डॉ. ब्रेकेट के जीवन का एक अद्‌भुत प्रसंग मैंने पढ़ा था। डॉ. ब्रेकेट को एक बार एक ज्ञानी संत पुरुष का समागम हुआ। उसने डॉक्टर को यही बात कही थी, जो मैं आज तुझे कह रहा हूँ! 'यह जीवन आत्मशक्ति-चैतन्यशक्ति को प्राप्त करने के लिए है... समग्र चैतन्य सृष्टि के सुख-दुःखों की समवेदना अनुभव करने के लिए है।'

डॉक्टर की उम्र जब ३० वर्ष की थी, कुमारी क्रोमवेल का परिचय हुआ और प्रेम भी हो गया। दोनों ने शादी कर लेने का निर्णय कर लिया। एक रात को ब्रेकेट और क्रोमवेल, अपने भावी-जीवन के स्वप्नलोक में विचर रहे थे, रात के १० बजने जा रहे थे, इतने में घंटी बजी। डॉक्टर ने मकान का द्वार खोला। डॉक्टर ने एक हबशी औरत को देखा। औरत की आँखों में आँसू और अनुनय था, वह बोली : 'डॉक्टर साब, मेरा इकलौता बेटा बहुत बीमार है... आखिरी श्वास ले रहा है... असहाय हूँ... मेरा कोई नहीं... यदि आप तुरंत ही पधार जाये तो बच्चा शायद बच सकता है...।'

उस अनजान औरत की तड़पन... रुदन.. आँसू, डॉक्टर नहीं देख सके। उनका हृदय द्रवित हो गया। डॉक्टर ने अपनी भावी पत्नी रूपसुन्दरी क्रोमवेल को कहा :

'प्रिये, तू यहाँ दो घंटा बैठना, मैं जा कर आता हूँ।' क्रोमवेल को बात पसन्द नहीं आयी। रीस और रोष से उसने कह दिया :

'तेरे बिना मैं अकेली यहाँ बैठकर क्या करूँ? मेरे प्रेम से भी तेरे लिए दर्दी क्या ज़्यादा मूल्यवान है? You have a date with me.....!'

डॉक्टर ब्रेकेट ने शांति से क्रोमवेल को कहा : 'जैसे प्रेम दिव्य है, वैसे प्रेम का अनुभव करने वाला चैतन्य भी दिव्य है! जिस प्रकार मैं तेरे प्रेम का स्वागत करता हूँ, उसी प्रकार इस माता के पुत्र प्रेम को कैसे ठुकरा सकता हूँ?'

डॉक्टर ने अपनी बैग उठाई और हबशी औरत के साथ कार में बैठकर रवाना हो गए। क्रोमवेल भी गुस्से में तमतमा कर वहाँ से चली गई। सद्‌भाग्य से उस औरत का लड़का बच गया। रात को चार बजे डॉक्टर वापस अपने घर पहुँचे। दूसरे दिन क्रोमवेल का फोन आया, उसने कहा :

'डॉक्टर, तेरा और मेरा सम्बन्ध नहीं जमेगा, तुझे मेरी कोई कद्र नहीं है, मेरे प्रेम का तू मूल्यांकन नहीं कर सकता...' डॉक्टर ने कहा : 'क्रोमवेल! मैं मानवमात्र से प्रेम करता हूँ। चूँकि मैं मानवता का मूल्यांकन करता हूँ,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मानवमात्र के प्रति मेरा जो प्रेम है, उसका बलिदान देकर मैं किसी एक ही व्यक्ति को प्रसन्न करना नहीं चाहूँगा... खैर, मेरा जीवन एकाकी जीने के लिए निर्मित होगा... अलविदा...!'

डॉक्टर ब्रेकेट ने कभी शादी नहीं की। क्रोमवेल जैसी रूपसुन्दरी से तो नहीं, दूसरी भी किसी स्त्री से नहीं की। ७० वर्ष की उम्र तक डॉक्टर जनसेवा करते रहे, अपना प्रेम, अपना स्नेह, अपनी करुणा उन्होंने हज़ारों मनुष्यों को दी....। जब उनकी मृत्यु हुई... सारा गाँव रोया... डॉक्टर की समाधि पर गाँव के लोगों ने स्तूप बनाया। परन्तु उस स्तूप के ऊपर लिखना क्या? किसी को कुछ भी समझ में नहीं आया... समय व्यतीत होता है। एक दिन उस हबशी औरत का वह लड़का... जो अब जवान हो गया था, डॉक्टर के अस्पताल के पास से गुजरा, उसने वहाँ एक बोर्ड पढ़ा : 'डॉक्टर ब्रेकेट का अस्पताल ऊपर है।'

उस लड़के ने पलभर कुछ सोचा और उस बोर्ड को वहाँ से उठाया। जाकर डॉक्टर ब्रेकेट की समाधि के पास रख दिया। दूसरे दिन लोगों ने समाधि के पास बोर्ड पढ़ा : **'डॉक्टर ब्रेकेट का अस्पताल ऊपर है।'** लोगों के मुँह से निकल पड़ा : 'वाकई वंडरफूल! अद्‌भुत!

जीवन जीने की यह एक दिव्य दृष्टि है। अपने प्रेम को निर्बंधन रखो। बन्धनरहित प्रेम को जीवमात्र के प्रति बहने दो... निरन्तर बहने दो। यही प्रेम है, सच्ची जीवमैत्री है, सच्ची जीव करुणा है। जब प्रेम एक ही व्यक्ति में बन्ध जाता है, दूसरे अनन्त जीवों के प्रति बह नहीं सकता। वह प्रेम वासना बन जाता है। वह प्रेम सापेक्ष बन जाता है। जिस व्यक्ति में बन्ध जाता है उसके प्रेम को हम हमारे साथ बाँधना चाहते हैं : 'तुम मेरे से ही प्रेम करो, दूसरे किसी से नहीं। चूँकि मैं तुम से ही प्रेम करता हूँ।' क्रोमवेल भी तो ब्रेकेट से यही चाहती थी। डॉक्टर को - डॉक्टर के प्रेम को बाँध लेना चाहती थी। जब वह बाँध न सकी, तो डॉक्टर से नफरत करने लगी। परन्तु डॉक्टर के हृदय में क्रोमवेल के प्रति कभी नफरत पैदा नहीं हुई।

इसी संदर्भ में एक दूसरी बात भी बता देता हूँ : तू यदि किसी एक व्यक्ति के साथ प्रेम-सम्बन्ध से बन्ध जाना चाहता है, मान ले, वह व्यक्ति तेरे साथ प्रेम का बन्धन नहीं निभा सका तो, क्या तू बन्धा हुआ रह सकेगा? नहीं रह सकेगा, तू निराश हो जाएगा। वह निराशा तेरे जीवन को अन्धकार से भर देगी... तू जीवन के आनंद को खो देगा। इसलिए तुझे कहता हूँ कि तेरे प्रेम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

को निर्बंधन रख, सकल विश्व के सर्व जीवों के प्रति उस प्रेम को बहने दे। उस प्रेम की गंगा में जो भी डुबकी लगाना चाहे, लगाने दे, शीतल और निर्मल होने दे। जीवों का ताप और मल तू दूर करता रहे। तू भी गंगा की तरह वन्दनीय-पूजनीय बन जाएगा।

तू ने शायद अपने विषय में सोचा ही नहीं होगा। तेरे आन्तरिक व्यक्तित्व को परखने की चेष्टा ही नहीं की होगी। ऐसा भी होता है कई बार मनुष्य के जीवन में। मैंने तेरे व्यक्तित्व के विषय में सोचा है, तुम्हारे बाह्य-आन्तरिक व्यक्तित्व को परखा भी हैं। मुझे ऐसा लगता है कि यदि तू सर्व जीवों के लिए जीवन जिओ तो हजारों-लाखों मनुष्यों को शीतलता मिल सकती है। तुझे तो ऐसा अपूर्व आनंद प्राप्त होगा कि... क्या बताऊँ? तू ही भविष्य में अनुभव कर पाएगा!

मनुष्य के पास उच्चतम व्यक्तित्व होने पर भी, उस व्यक्तित्व के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण मिलना चाहिए, उपयुक्त क्षेत्र मिलना चाहिए, उपयुक्त मार्गदर्शन मिलना चाहिए। तुझे वातावरण, क्षेत्र और मार्गदर्शक मिले हैं न? अब चाहिए तेरी स्वयं की तमन्ना। तमन्ना एक बहुत बड़ा तत्त्व है। प्रबल संकल्प-शक्ति से कौन-सा कार्य सिद्ध नहीं होता है? प्रिय आत्मन्! मूढ़ता त्याग दे, हृदय को निर्मोही बना और स्नेह की सरिता बहा दे सर्व जीवों के लिए। इस दिव्य दृष्टि से जीवन का अभिनव सर्जन कर।

ज़्यादा क्या लिखूँ? जो कुछ भी तुझे लिखता हूँ - ऐसा मत मानना की कोरा उपदेश ही दे रहा हूँ। मेरे जीवन के अनुभवों पर आधारित और तत्त्वज्ञान से परिशुद्ध विचारधारा तेरे सामने प्रवाहित कर रहा हूँ। अभी-अभी, भिन्न-भिन्न मानव जीवन के स्तरों पर काफी मंथन चल रहा है। सोचने के लिए नहीं सोचता हूँ... सोचा जाता है... नया-नया प्रकाश मिलता है... उस उजाले में स्व-पर जीवन का मार्ग आलोकित करना चाहता हूँ।

तेरी कुशलता चाहता हूँ। तेरे माता-पिता वगैरह परिवार को 'धर्मलाभ' सूचित करना। मेरे सहवर्ती सभी मुनिवर स्वस्थ हैं, प्रसन्न हैं। पत्रोत्तर की

प्रतीक्षा में -

१५-२-७६

शाहपुर [महाराष्ट्र]

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *उत्तरदायित्व या जिम्मेदारी का उद्‌भव करुणा में से होता है।*
- *समाधान को खोजनेवाला मन स्वस्थ, शांत एवं अनुद्विग्न होना चाहिए।*
- *जब तक आत्मा कर्मों के पराधीन है, तब तक अनेक प्रश्न पैदा होंगे ही। समस्याएँ बनी रहेंगी ही।*
- *निराशा में डूबा हुआ मन संकल्पशक्ति की दिव्य अनुभूति को उजागर नहीं कर सकता है।*
- *प्रबल संकल्पशक्ति के सामने कोई भी समस्या बाधा बन नहीं सकती!*
- *श्रद्धा, शरणागति और समर्पण के द्वारा ही परमात्मतत्त्व का नैकट्य पाया जा सकता है।*

पत्र : ६

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र पढ़कर प्रसन्नता का अनुभव किया। रोज अनेक पत्र आते हैं, पढ़ता हूँ और अनेक पत्र लिखता भी हूँ, परन्तु उतनी प्रसन्नता नहीं, उतना उल्लास नहीं, जो प्रसन्नता और उल्लास तेरे पत्र पढ़ने में और तुझे पत्र लिखने में अनुभव करता हूँ।

इस बार पत्र लिखने में विलम्ब हो गया। तू मेरे पत्र का कितना इन्तजार करता होगा... जानता हूँ, परंतु विलम्ब होना था, हो गया! मैं तेरी जिज्ञासा 'क्यों?'को अतृप्त नहीं रखूँगा। मेरी आन्तरिक अभिरुचि-प्रवृत्ति नहीं है, निवृत्ति है। कभी-कभी प्रवृत्ति से... अधिक प्रवृत्ति से... भले वह शुभ प्रवृत्ति हो, मन विरक्त हो जाता है। जब विरक्ति आत्मा पर हावी हो जाती है, तब मौन हो जाता हूँ, शून्यता में चला जाता हूँ, फिर पढ़ना... और लिखना, कुछ भी नहीं होता।

परन्तु जब उत्तरदायित्व का विचार आता है, प्रवृत्ति का भाव प्रबल बन जाता है। प्रवृत्ति का प्रेरणास्रोत होता है मैत्री अथवा करुणा। मैत्री और करुणा ही तो उत्तरदायित्व का बोध कराती है। यदि किसी के पास जल है और वह व्यक्ति किसी तृषातुर अतिथि को जल देने से इनकार कर दे तथा उस प्यासे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यक्ति को तड़प-तड़प कर मरते देखता है, तो यह समझ लेना कि वह बहुत बड़ा पाप कर रहा है। तेरी गंभीर समस्याओं की दृष्टि से मेरा उत्तरदायित्व बहुत बड़ा है।

प्रिय आत्मीय! यदि समस्याओं का समाधान पाना है, तो कभी भी अस्वस्थ, अशांत और उद्विग्न नहीं होना। हर समस्या का समाधान है। समाधान ढूँढ़ने वाला मन स्वस्थ, शांत और अनुद्विग्न होना चाहिए। अपने जीवन में तो ऐसी जटिल समस्या ही कौन सी है? जिसका उत्तर ही न मिले? ऐसे प्रश्न ही कौन से हैं? ऐसी घोर समस्या तो थी स्वजनों से परित्यक्ता उस गर्भवती सती अंजना और सती सीता के जीवन में, जो असहाय... अनाथ सी जंगलों में भटक रही थी।

जीवन है, स्वाधीन नहीं, पराधीन जीवन है। अनन्त-अनन्त कर्मों के बंधन हैं। पराधीनता में प्रश्न रहेंगे, पराधीनता में समस्याएँ रहेंगी ही। इस सत्य को स्वीकार करना ही होगा। काम एक ही करना है। अपने मन को उन असंख्य समस्याओं में उलझने नहीं देना। भले हमारे द्वार पर वे असंख्य प्रश्न खड़े हों खड़े रहने दो, हमारे मन को उन प्रश्नों से मुक्त रखो, हमारे मन को उन समस्याओं से मुक्त रखो। उन प्रश्नों को अपने मन पर 'हावी' न होने दें। इतना तो हम कर सकते हैं।

मैंने पिछले पत्र में एक बात लिखी थी : निराशा से मुक्त हो। संकल्प-शक्ति से युक्त हो। तू ने लिखा : 'क्या संकल्प (निश्चयात्मक विचार) करने से सिद्धि प्राप्त होती है?' हाँ, संकल्प से सिद्धि मिलती है, परन्तु धैर्य रखना होगा। संकल्प की सिद्धि होती है, परन्तु कब हो, हम नहीं जान सकते। इस जीवन में नहीं हो, दूसरे जीवन में हो! जीवन में नहीं हो, मृत्यु के बाद हो! अमरीका के प्रसिद्ध नाटक-अभिनेता 'चार्ल्स काल्गन' के जीवन की उस घटना को जानता है?

चार्ल्स काल्गन का जन्म हुआ था कनाडा में और जीवन बिता अमरीका में। वह बड़ा लोकप्रिय अभिनेता था। लोग उसके पीछे पागल थे। सभी को चार्ल्स कहता : 'तुम्हें यदि मुझ पर सच्चा प्रेम है, तो मुझे मेरे वतन कनाडा के 'प्रिन्स द्वीप' में गाड़ना, मेरे मृत देह को मेरे वतन में गाड़ना...।' लोग उसकी इस बात पर हँसते थे। चार्ल्स की यह कामना थी। चार्ल्स का यह दृढ़ संकल्प था। 'टेक्सास' के लोग चार्ल्स की इस मनोकामना से परिचित थे। पचपन वर्ष की आयु में चार्ल्स की मृत्यु हो गई। 'टेक्सास' में उसकी मृत्यु

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुई। लोग असमंजस में पड़ गए। टेक्सास से चार्ल्स का वतन दो हजार मील दूर था, उसका मृत देह, वहाँ कैसे ले जाएँ? लोगों ने एक लकड़े की पेटी में चार्ल्स का मृत देह रख दिया। पेटी पर चाँदी की पट्टी लगा दी। पेटी पर चार्ल्स का पूरा नाम और उसकी अभिलाषा, उसका संकल्प लिख दिया गया और टेक्सास के कब्रस्तान में 'कोफिन' को गाड़ दिया।

दो महीने व्यतीत हो गए। टेक्सास में अचानक घोर मूसलाधार वर्षा हुई। समुद्र तूफ़ानी हो गया। टेक्सास में पानी ही पानी हो गया, हजारों मकान गिर गए... कब्रस्तान की कब्रें भी पानी में बह गई। गाड़े हुए मुर्दे के कोफिन भी समुद्र में बह गए। चार्ल्स काल्गन का 'कोफिन' बहता हुआ कनाडा पहुँचा... आठ महीने के बाद प्रिन्स एडवर्ड द्वीप पर पहुँच गया। कनाडावासिओं ने उस बक्से को देखा, उस पर लिखा हुआ चार्ल्स काल्गन का नाम पढ़ा उसका संकल्प पढ़ा, लोग खुश हो गए। चार्ल्स की वह जन्मभूमि थी। जहाँ चार्ल्स अपनी कब्र चाहता था! लोगों ने प्रिन्स द्वीप पर चार्ल्स की कब्र बनाई।

जानता है, कहाँ-कहाँ से बहता हुआ वह बॉक्स कनाडा पहुँचा था? फ्लोरिडा प्रान्त के चार सौ मील के द्वीप से मेक्सिको के समुद्र में, वहाँ से अटलान्टिक सागर में... वहाँ से सेंट लोरेन्स के समुद्र में और वहाँ से काल्गन के वतन प्रिन्स द्वीप पर!

चार्ल्स काल्गन का संकल्प सिद्ध हुआ, मृत्यु के पश्चात आठ महीनों के बाद!

गुजरात के महामंत्री उदयन ने संकल्प किया था, शत्रुंजय गिरिराज पर युगादिनाथ का भव्य मन्दिर बनाने का। वे न बना सके अपने जीवन में, परन्तु मन्दिर बन गया एक दिन। महामंत्री के सुपुत्र बाहड़ मंत्री ने भव्य मन्दिर का निर्माण किया। संकल्प सिद्ध हुआ।

निराशा से ग्रस्त मनुष्य संकल्प शक्ति की दिव्य महिमा नहीं समझ सकता है। निराशा से मुक्त हो। संकल्पशक्ति को जागृत कर। स्वस्थ, शांत और अनुद्विग्न मन में से संकल्पशक्ति जागृत होती है। प्रबल संकल्पशक्ति के सामने कोई समस्या, कोई प्रश्न ठहर नहीं सकता है। संकल्पशक्ति जागृत हो जाए और जीवन का ध्येय निर्धारित हो जाए बस, फिर जीवन यात्रा में आनंद ही आनंद है।

तू कहेगा : 'मन स्वस्थ, शांत और प्रसन्न नहीं रहता है। जब भी कोई

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रतिकूल घटना बनती है, अप्रिय प्रसंग बनता है, तब मन अस्वस्थ हो ही जाता है। मन में अशांति उभर आती है।'

सच है तेरा कहना। ऐसी परिस्थिति में से मैं भी गुजरा हूँ। जीवन में ऐसा भी समय आया था, जब प्रतिकूलताओं ने चारों ओर से मुझे घेर लिया था... मन अस्वस्थ हो गया था, अशांत हो गया था। कई दिनों तक, कई महीनों तक मन उदासीनता में डूबा रहा था। मन अप्रिय से मुक्त होने को तड़प रहा था। प्रिय से मिलने को तत्पर हो रहा था, परन्तु कुछ तकदीर ही ऐसी थी... एक-दो वर्ष बीत गए थे ऐसी उद्विग्नता में। असहाय सा... अशरण सा निराश भटक रहा था, गाँव-नगरों में! परन्तु मेरे मन में एक दिन एक दिव्य विचार उभर आया था... याद है मुझे वह दिन... वह रात... मैं कितना प्रफुल्लित हो गया था उस समय! मैंने कितना अपूर्व आनंद अनुभव किया था! वह दिव्य विचार था, परमात्मा की शरणागति का। उस दिन ही मुझे परमात्मा की ओर वास्तविक स्नेह हुआ था। यों तो बचपन से ही मन्दिर में जाया करता था... दर्शन-पूजन-स्तवन इत्यादि करता ही था। परन्तु परमात्मा की स्मृति... स्नेहपूर्ण स्मृति कभी भी नहीं हो आई थी। उस रात में.... जो कि मेरी व्यथापूर्ण रात थी, परमात्मा की स्मृति हो आई, व्यथा दूर चली गई और प्रसन्नता से हृदय भर गया।

'अरिहंते सरणं पवज्जामि.... अरिहंते-सरणं पवज्जामि... कब तक यह नाद चलता रहा था... पता नहीं, परन्तु उस रात के बाद मेरा मन स्वस्थ बन गया। शांत बन गया, प्रसन्न हो गया। तब से परमात्मदर्शन में, परमात्मा की स्तवना में मुझे अधिक आनंद प्राप्त होने लगा। अप्रिय का संयोग था, फिर भी अखरता नहीं था! प्रिय का वियोग था, फिर भी उद्विग्नता नहीं थी। एक दिन ऐसा आया कि अप्रिय दूर हो गया, प्रिय मिल गया। परमात्मशरण में जाने के पश्चात संकल्प की सिद्धि स्वतः हो जाती है। अपना कर्तव्य होता है, परमात्मा की शरण में रहने का और परमात्मा के प्रति समर्पण भाव बढ़ाने का।

चाहे मन शांत हो या अशांत, स्वस्थ हो या अस्वस्थ, दिन में तीन बार तो शरणागति स्वीकार करने की ही। जब मन अशांत हो तब तो पुनः-पुनः परमात्मा की भावपूर्ण अन्तःकरण से शरणागति स्वीकार करता हूँ। बाह्य जगत से मन का सम्बन्ध टूट जाता है, तब मन में शांति और स्वस्थता की स्थापना होती है। मेरा यह अनुभव है। तू भी यह प्रयोग करेगा?

श्रद्धा, शरणागति और समर्पण-परमात्मा के प्रति ये तीन बातें आ जाए

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपने जीवन में, मेरे खयाल से कोई अशांति, कोई संताप नहीं टिक सकता अपने मन में। यदि तू लिखेगा तो इस विषय में विस्तार से लिखूँगा। परंतु कितना लिखूँगा? तू स्वयं यदि कुछ दिनों के लिए यहाँ आ जाए तो? जो बातें प्रत्यक्ष में होती हैं... भावों की अभिव्यक्ति जो प्रत्यक्ष में होती है... पत्राचार रूप परोक्ष में कैसे हो सकती है?

अब तो पत्राचार में भी बाधा आ सकती है! बंबई है न! लिखने का इतना समय... नीर शांति का समय ही कहाँ मिलता है? दैनिक और प्रासंगिक कार्य

भी इतने आ जाते हैं... समय चला जाता है। फिर भी मेरा प्रयत्न पत्र लिखने का तो रहेगा ही। तेरा पत्र आता है, तभी से प्रत्युत्तर लिखने का सोचता हूँ। अभी यह पत्र समाप्त करता हूँ।

कुशल रहे! प्रसन्न रहे!

२८ मार्च, १९७६ बंबई

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *मनुष्य के तमाम प्रश्न, तमाम उलझनें धर्म एवं अध्यात्म के माध्यम से सुलझ सकती है... पर इसके लिए स्वच्छ पारदर्शी प्रज्ञा एवं निर्मल बुद्धि का होना आवश्यक है।*
- *श्रद्धा के साथ प्रज्ञा का पुट मिलता है, तब फिर आदमी दीन-हीन और व्याकुल नहीं हो उठता है।*
- *दुःखों से डर कर या सुखों से ललचा कर की गई प्रार्थना वास्तव में प्रार्थना नहीं होती... वह तो याचना पत्र है!*
- *केवल दिखावे की श्रद्धा क्या काम की? श्रद्धा चाहिए भीतर की, अंतःकरण की!*
- *श्रद्धावान शुष्क नहीं होता... उसका जीवन रसमय होता है। वह सदा प्रसन्न एवं प्रफुल्लित रहता है।*

पत्र : ७

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

दो महीने व्यतीत हो गए, पत्र नहीं लिख सका। मई में यहाँ ज्ञान स्तर का आयोजन हुआ, उसमें व्यस्तता रही। काफी आनंद मिला, १० जून को हमने यहाँ भायखला में वर्षाकालीन स्थिरता हेतु प्रवेश कर दिया है। अब कार्तिक पूर्णिमा तक यहाँ स्थिरता होगी।

तेरे दो पत्र मिले। धर्म और अध्यात्म के विषय में तेरी अभिरुचि जागृत हुई- इससे मेरा मन प्रसन्न हुआ। 'सायन्स' और 'टेक्नोलोजी' के इस युग में धर्म-चिन्तन और अध्यात्म-परिशीलन कितने लोग करते हैं? मुझे पूर्ण विश्वास है कि मनुष्य के सारे प्रश्न, सब समस्याएँ धर्म और अध्यात्म के माध्यम से ही सुलझ सकती हैं। भौतिक और मानसिक, पारिवारिक और सामाजिक, राष्ट्रीय और वैश्विक... सभी प्रश्नों का समाधान, वास्तविक समाधान धर्म चिंतन और अध्यात्म के परिशीलन से प्राप्त हो सकता है। परन्तु चाहिए सूक्ष्म... निर्मल प्रज्ञा और अविचल श्रद्धा। प्रज्ञा और श्रद्धा के सहारे जीवन-यापन करना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुख के अभाव में और दुःखों की उपस्थिति में तेरी स्वस्थता चली तो नहीं जाती है ना? तू दीनता-हीनता की गहरी खाई में तो गिर नहीं जाता है ना? शोक-संताप और रुदन की करुणता तो तेरे मुख पर नहीं छा जाती है ना? प्रज्ञावान और श्रद्धावान सदैव स्वस्थ-प्रसन्न, धीर-वीर और साहसिक होता है।

मुझे रोमन साम्राज्य का वीर पुरुष **'एग्रीपीनस'** याद आता है। रोमन सम्राट नीरो जुल्मी सम्राट था। एग्रीपीनस पर कोई सच्चा या गलत आरोप मढ़ा गया और सम्राट ने एग्रीपीनस को देश निकाले की सजा दे दी। सम्राट के सैनिक एग्रीपीनस के घर गए। एग्रीपीनस भोजन करने बैठा ही था। सैनिकों ने कहा : 'सम्राट ने आपको सजा दी है।'

'कौन सी सजा? मौत की या देश निकाले की?' खुब स्वस्थता से एग्रीपीनस ने पूछा।

'देश निकाले की,' सैनिकों ने कहा।

'ईश्वर की कृपा!' एग्रीपीनस ईश्वर के प्रति पूर्ण श्रद्धावान था। वह मानता था कि ईश्वरेच्छा के अधीन होने में जो सुख मिलता है, वैसा सुख कहीं से भी नहीं मिलता।

'अच्छा, तुम लोग कुछ समय के लिए ठहरो, मैं अपने मित्रों के साथ भोजन कर लूँ...!'

'क्षमा करे, सम्राट ने आपको अभी-इसी वक्त अफ्रीका के लिए रवाना हो जाने का हुक्म किया है।'

'अच्छा, चलो! अफ्रीका जाकर भोजन करेंगे! ईश्वर की वैसी इच्छा होगी!' मुख पर स्मित और हृदय में स्वस्थता के साथ एग्रीपीनस बोला और वहाँ से चल दिया।

एग्रीपीनस श्रद्धावान था, प्रज्ञावान था। उसकी श्रद्धा और प्रज्ञा ने अचानक आए दुःख में दीन नहीं होने दिया, दुर्ध्यान नहीं करने दिया। सम्राट के प्रति उसको गुस्सा नहीं आया, अपने सुख चले जाने से रोना नहीं आया। समस्या का इससे बढ़कर कौन-सा समाधान चाहिए? उसने ईश्वर से प्रार्थना भी नहीं की कि 'हे प्रभो, मेरा संकट दूर कर दो...।' दुःखों से डर कर या सुखों से ललचा कर की हुई प्रार्थना, प्रार्थना नहीं है, मात्र स्वार्थपूर्ति की याचना है। प्रार्थना दुःखों के भय से मुक्त और सुखों की लालसा से मुक्त होनी चाहिए।

दुःख तो जीवन में आएँगे ही। इस समय सुख से ज़्यादा दुःख होंगे मनुष्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के जीवन में। निश्चित बात है यह। परमात्मश्रद्धा के सहारे वीरता और धीरता से उन दुःखों को सहने की शक्ति हमें प्राप्त करनी है। दुःखों को जब जाना होगा, जाएँगे, जब तक रहना होगा, रहेंगे, इसकी कोई चिन्ता हमें नहीं करनी है। सुख मिले या नहीं मिले, सुख की कोई अभिलाषा नहीं रखनी है। यह आत्मस्थिति परमात्मश्रद्धा से अवश्य प्राप्त होती है।

सेठ सुदर्शन पर रानी अभया ने झूठा आरोप लगाया था न? राजा ने सजा भी सुना दी थी शूली पर चढ़ाने की। सुदर्शन दोनों समय स्वस्थ रहे थे। न शोक किया था, न रुदन किया था। सुदर्शन प्रज्ञावंत थे, श्रद्धावन्त थे। अकेले नहीं थे, घर में पत्नी थी, पुत्र थे। फिर भी पारिवारिक चिन्ता उनको नहीं थी। पत्नी मनोरमा भी उस विकट परिस्थिति में रोने नहीं लगी थी। परमात्मा के ध्यान में लीन हो गई थी। यह मात्र व्यक्तिगत संकट नहीं था, पारिवारिक संकट भी था, चूँकि सुदर्शन घर के कर्त्ता-धर्ता थे। उन पर संकट आया था यानी घर पर ही संकट था। सुदर्शन और मनोरमा ने धर्म और अध्यात्म के द्वारा ही समाधान ढूँढ़ा था। पति-पत्नी दोनों के मन अशांत नहीं बने, उद्विग्न नहीं बने, यही धर्म चिंतन का फल था। अध्यात्म दशा की प्रगति थी।

क्या सुदर्शन ने चाहा था कि शूली का सिंहासन बन जाए? नहीं, शूली पे चढ़ने से वे डरे नहीं थे। उनकी निर्मल प्रज्ञा ने आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता समझी थी। परमात्मश्रद्धा ने अभय और अद्वेष प्रदान किया था। मिथ्या आरोप मढ़ने वाली रानी अभया पर उनको द्वेष नहीं था और शूली का उनको भय नहीं था! सुदर्शन निर्दोष घोषित हुए और पारिवारिक संकट टल गया।

ऐसे एक-दो उदाहरण नहीं है, मात्र प्राचीन काल के ही उदाहरण नहीं हैं, सैंकड़ों उदाहरण मिलते हैं वर्तमान काल में भी। दूसरे उदाहरण ढूँढ़ने से क्या? हम ही उदाहरण बन जायें! भय और लालच से मुक्त होना सर्वप्रथम आवश्यक है। तभी प्रज्ञा निर्मल बनेगी, पवित्र बनेगी।

एक मुल्लाजी थे। बादशाह ने नमाज पढ़ने के लिए मुल्लाजी को बुलाया। मुल्लाजी राजी हो गए। बादशाह से कुछ मिलने की कल्पना ने मुल्लाजी को खुश कर दिया। भोजन भी नहीं किया और मुल्लाजी चल दिये। राजमहल पहुँचे। बादशाह खुश हो जाये, वैसी अच्छी नमाज पढ़ी। नमाज के बाद भोजन समारंभ था। भोजन समारंभ में दूसरे राजा, राजकुमार, नवाबजादे वगैरह निमंत्रित थे, वे लोग थोड़ा-थोड़ा खाकर खड़े हो गये। सबके साथ मुल्लाजी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

को भी थोड़ा ही खाकर उठना पड़ा। भूखे ही घर आये। अपनी बीबी से कहा : 'भूख लगी है, रोटी बना देना।'

'क्यों? भोजन समारंभ में खाया नहीं?' बीबी ने पूछा।

'समारंभ में तो मात्र भोजन करने का दिखावा किया जाता है, इससे पेट नहीं भरा जाता।'

'ठीक बात है आपकी। बादशाह को खुश करने के लिए की गई नमाज़ से खुदा को खुश नहीं किया जा सकता... वह भी दिखावा ही था। इसलिए नमाज़ भी फिर से पढ़ो। यदि भोजन फिर से करना है तो।' बीबी ने मुल्लाजी को फिर से नमाज़ पढ़वाई।

दिखावा मात्र की श्रद्धा अपेक्षित नहीं है। 'हम परमात्मा के मंदिर में जाते हैं, इसलिए श्रद्धावान् हैं' - 'ऐसा नहीं, 'हमें परमात्मा के प्रति प्रेम और श्रद्धा है, इसलिए हम मंदिर जाते हैं,' श्रद्धा की यह सच्ची अभिव्यक्ति है। 'हमें दुःख मिटाने हैं और सुख जुटाने हैं,' यह प्रज्ञा नहीं है, 'हमें दुःख समता से व धीरता से सहने हैं और सुखों का त्याग करना है,' यह निर्मल प्रज्ञा की सुदृढ़ प्रतिज्ञा है।

मैं आज तुझे परमात्मश्रद्धा का स्वरूप बताना चाहता हूँ। चूँकि मैं चाहता हूँ कि तू श्रद्धावान बने। मात्र श्रद्धावान नहीं, प्रज्ञावंत वैसा श्रद्धावान! परमात्मा के प्रति श्रद्धावान हुए बिना परमात्मा की शरणागति स्वीकृत नहीं होगी। परमात्मा की शरण में गए बिना, समर्पण का दिव्य भाव जागृत नहीं होगा। श्रद्धा, शरणागति और समर्पण की क्रमिक विकास यात्रा के बिना परमानंद, आत्मानंद की सच्ची अनुभूति नहीं होगी।

रास्ता सरल है। सरल ही नहीं, सरस है। इस मार्ग में रस की अनुभूति होती है। रसानुभूति के बिना तो मैं तुझे यह मार्ग ही नहीं बताता! मेरा यह विश्वास है कि कोई भी आचरण रसानुभूति के बिना दीर्घ समय नहीं टिक सकता। श्रद्धा रस की जननी है, माता है! श्रद्धावान शुष्क नहीं होता, रसिक होता है। श्रद्धावान मूढ़ (मूडलेस) नहीं होता, वह तो सदैव प्रसन्न और चेतन होता है। हाँ, दिखावे की श्रद्धा से यह संभव नहीं। आत्मा में से आविर्भूत गुण स्वरूप श्रद्धा चाहिए।

जब परमात्मश्रद्धा का आविर्भाव होता है तब -

१. परमात्मा का पुनः-पुनः स्मरण

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. परमात्मा का बार-बार दर्शन

३. परमात्मा का स्पर्शन

४. परमात्मा का गुणकीर्तन

ये चार बातें स्वाभाविक रूप से आ ही जाती हैं। परमात्मा ही नहीं, किसी भी व्यक्ति के प्रति प्रेममूलक श्रद्धा उत्पन्न होती है, तब ये चार बातें आएँगी ही! परमात्मश्रद्धा प्रीतिमूलक चाहिए। अरे, प्रीति के बिना श्रद्धा हो नहीं सकती।

कोई तुझे कहे कि 'मुझे आपके प्रति श्रद्धा है, परन्तु प्रेम नहीं है। 'तो तू क्या कहेगा? 'प्रेम के बिना श्रद्धा में शेष क्या रह जाता है?' प्रीति-प्रेम-स्नेह... का स्वरूप क्या मुझे समझाना पड़ेगा? अच्छा, समझाऊँगा, परंतु आज नहीं। अगले पत्र में लिखूँगा।

परमात्मा की परम कृपा से मेरा स्वास्थ्य अब ठीक है। सहवर्ती मुनि वृंद कुशल हैं। तेरे पिताजी-माताजी... वगैरह को धर्मलाभ सूचित करना।

१६-६-७६

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *नीरवता, खामोशी, जनशून्यता के आलोक में उठती संवेदनाएँ, भीतरी आनंद व प्रसन्नता से छलछलाती होती है।*
- *संयम का राग, चारित्र का प्रेम उत्तम गुण के रूप में बताया गया है, शास्त्रों में!*
- *आनंदघनजी जैसे उच्चकक्षा के योगीपुरुष ने परमात्मा ऋषभदेव की स्तवना के माध्यम से प्रेमतत्त्व का गहरा एवं अद्‌भुत विश्लेषण-विवेचन किया है।*
- *प्रेम के वास्तविक रूप-स्वरूप को समझे बगैर, आजकल प्रेम के नाम पर वासना के नाटक खेले जा रहे हैं।*
- *शोषण और स्वार्थ के संकीर्ण दायरे में प्रेम के फूल खिल पाना मुमकिन कैसे होगा?*

पत्र : ८

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र पाकर आत्मा प्रसन्न हुई। यूँ भी इन दिनों में मेरी अन्तःप्रसन्नता बढ़ती जा रही है, ऐसा अनुभव कर रहा हूँ।

आषाढ़ के बादल घिर आए हैं। सारा नगर बादलों की छाया में स्तब्ध है। अपूर्व नीरवता है। शून्य का स्पर्श भी कितना अच्छा लगता है। मेरे सुषुप्त प्राणों को जगा दिए हैं...। इस घनीभूत एकान्त में मैं अपने ही आमने-सामने हो गया हूँ। देख रहा हूँ अपने को! जो मैं हूँ- शुद्ध आत्मद्रव्य! मुक्त आत्मद्रव्य! बुद्ध आत्मद्रव्य! सच्चिदानंद पूर्ण आत्मद्रव्य! असीम और विराट प्रकृति मानो कि है ही नहीं! दिखती है लोक के शीर्ष पर अर्धचन्द्राकार सिद्धशिला। प्रकृति के सारे बन्धनों से मुक्त होकर उस सिद्ध भूमि पर आसीन हो गया हूँ! पूर्णज्ञानस्वरूप हो गया हूँ। पूर्णानंद ही पूर्णानंद है यहाँ।

परन्तु अचानक यह क्या होने लगा? घनघोर बादल गरजने लगे। अवनि और आकाश को विदीर्ण करती हुई बिजलियाँ कड़कने लगी। दिगन्तों से उठती हुई वृष्टि-धारा में नगर चलायमान होने लगा। पुनः प्रकृति की तरफ देखने लगा। चारों ओर निहारा। ओह! पास में तेरा श्वेत पत्र पड़ा है...उस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पत्र में क्या लिखा है - यह तो बाद में जब पढ़ा पत्र, तब ज्ञात हुआ, परन्तु पत्र देखते ही पत्र लिखने वाला, कल्पना में साकार हो आया। अब तू मेरे सामने ही है... तेरी निर्दोष और स्नेहपूर्ण मुखमुद्रा देखता हूँ, प्रसन्नता अनुभव करता हूँ।

आज जब तू कल्पना के आलोक में मेरे सामने आकर बैठ गया है, तो आज मैं अपनी संवेदना ही व्यक्त करुँगा, आज मैं अपना ही हृदय खोलूँगा तेरे सामने। देख, बादलों का और बिजलियों का तूफान शांत हो चला है। वृष्टि का वेग भी कुछ कम हुआ है। स्वाभाविक रूप से ही मेरे मन में आज अन्तर्तम संवेदन फूट रहा है।

'कई वर्षों से मैं प्रेम के विषय में सोचा करता था। आज भी सोचता हूँ। परन्तु पहले, वर्षों तक, अनिश्चित और संदिग्ध विचारों में उलझा रहा। अनेक तर्कों से और अनेक मनोवैज्ञानिक विश्लेषणों से 'प्रेम' का स्वरूप समझने की चेष्टा की। प्रेम का स्वरूप अज्ञात ही रहा। शास्त्रों का... धर्मग्रन्थों का ज्ञाता बनता चला, प्रेम स्वरूप का अ-ज्ञाता ही बना रहा।

तू जानता है न कि मैं एक श्रमण हूँ, जैन मुनि हूँ? वैराग्य तो मुनि-जीवन में अनिवार्य रूप से होना चाहिए। बात भी सही है - संसार के प्रति वैराग्य जागृत हो जाने से तो मैं मुनि बना। परन्तु क्या मुनिजीवन मात्र वैराग्य से ही मैंने ग्रहण किया था? अपने मेरे उस अतीत को टटोला। उस समय के मेरे मनोभावों को टटोला। अवश्य, संसार के प्रति विरक्ति का भाव था मन में। साथ ही; संयम के प्रति, संयमी महात्माओं के प्रति राग भी पैदा हुआ था मेरे मन में। उस राग को उपादेय माना गया है। कर्तव्यरूप माना गया है। उसको 'प्रशस्तराग' कहा गया है। संयमराग, संयमप्रेम, संयमस्नेह को उत्तम गुण माना गया है। संयम का अर्थ है चारित्र, साधुता, मोक्षमार्ग वगैरह।

वैसे, परमात्मा के प्रति भी प्रेम करना आवश्यक माना गया है। परमात्मप्रीति, परमात्मभक्ति महान धर्म कहा गया है। परमात्मा के सामने प्रेमपूर्ण मिलन के व विरह के गीत भी गाये गए हैं, योगीपुरुषों ने भी गाये हैं। अर्थात् परमात्मा से प्रेम करने का मार्ग अवरुद्ध नहीं है।

प्रत्येक धर्मक्रिया, धर्मानुष्ठान प्रेमपूर्वक करने का उपदेश दिया गया है, धर्मग्रन्थों में। धर्मग्रन्थों में मैंने ये सारी बातें पढ़ी हैं। इतना ही नहीं, सर्व जीवों के साथ भी मित्रता का प्रेम स्थापित करने को कहा गया है। जीवमात्र के साथ प्रेम!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परन्तु 'प्रेम का स्वरूप क्या होना चाहिए?' यह प्रश्न सुलझा नहीं। जिसको भी पूछा, अपनी कल्पना से उत्तर दिया। इससे संतोष नहीं हुआ... कैसे होता संतोष? जिन्होंने प्रेम का स्वरूप पाया नहीं हो, वे कैसे दूसरों को संतुष्ट कर सकते हैं?

मुझे इस बात का भी बड़ा आश्चर्य हुआ कि प्रकाण्ड विद्वान ऐसे आचार्यों ने भी 'प्रेम' के विषय में मौन ही धारण किया है! 'प्रेम का स्पष्ट स्वरूप उन्होंने समझाया नहीं। हाँ, एक योगीपुरुष आनंदघनजी ने परमात्मा की स्तवना में प्रेम, प्रीति का स्वरूप समझाने का प्रयत्न किया है। उन्होंने प्रेम को 'निरुपाधिक' बताया। सोपाधिक प्रेम, प्रेम नहीं है। 'निरुपाधिक' का अर्थ होता है कामनारहित। जिससे हमारा प्रेम हो, उससे कुछ पाने की कामना हमारे मन में नहीं होनी चाहिए।

दूसरी बात उन्होंने यह कही कि 'रंजन धातुमिलाप' यानी प्रेम का अर्थ है धातुओं का मिलन। शारीरिक धातुओं के मिलन की बात यहाँ नहीं है, यहाँ 'धातु' शब्द का अर्थ 'विचार' ही करना उचित लगता है। यानी परस्पर के विचारों का मिलन प्रेम का दूसरा स्वरूप है। जिससे हमारा प्रेम हुआ, उनके विचारों के साथ हमारे विचारों का मैल बैठ जाये, विचारभेद नहीं रहें। उनके प्रेम का पात्र है, परमात्मा। परमात्मा से 'धातुमिलाप' कैसे हो? है न अटपटी सी यह बात? मैं तो इतना समझ गया हूँ कि परमात्मा के आदेश और उपदेश ही हमारा जीवन बन जाये- वह है धातुमिलाप।

किसी एक पात्र को लक्ष्य बनाकर प्रेम की परिभाषा जब की जाती है, परिभाषा अपूर्ण ही रहेगी। हमें कोई भी पात्र सामने रखे बिना प्रेम का स्वरूप समझना होगा। उसी स्वरूप वाला प्रेम फिर अपने कोई भी पात्र के साथ कर सकें, निर्भय और निश्चिंत बनकर। प्रेम करने पर अथवा प्रेम हो जाने पर यदि कोई भयग्रंथी हमारे मन को भ्रान्त करती है, कोई चिन्ता यदि हमारे मन को चिंतित कर देती है, तो वह प्रेम नहीं कहा जा सकता। वह वासना ही है।

तू शायद कहेगा : प्रेम के विषय में इतना चिन्तन क्यों करना चाहिए? क्या जीवन में प्रेमतत्व इतना अनिवार्य है?

हाँ! जीवन में प्रेम आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है! बच्चा हो, तरुण हो, युवा हो या वृद्ध हो - जीवन की सभी अवस्थाओं में प्रेम चाहिए। स्त्री हो या पुरुष हो, भोगी हो या त्यागी हो, संत हो या शैतान हो-सब प्रेम चाहते हैं! परंतु जो लोग प्रेम का स्वरूप नहीं जानते हैं, वे प्रेम की जगह वासनाओं में फँस जाते हैं। वासना को प्रेम मान लेते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माता अपने बच्चे से प्रेम करती है, परंतु प्रेम का स्वरूप नहीं जानती है। पत्नी अपने पति से प्रेम करती है, परंतु प्रेम का स्वरूप नहीं जानती है। बहन अपने भाई से प्यार करती है, परंतु वह प्रेम का स्वरूप नहीं जानती है। इसलिए प्रेम सच्चा होता नहीं, हो जाता है तो दीर्घकाल टिकता नहीं! टिकता है तो बढ़ता नहीं। अरे धर्मगुरु अपने शिष्यों से, अपने अनुयायियों से प्रेम करते हैं... वैसे शिष्य और अनुयायी धर्मगुरु से प्रेम करते हैं - परंतु यदि वे प्रेम का सही स्वरूप नहीं जानते हैं, तो प्रेम, प्रेम नहीं रह जाता। प्रेम का स्वरूप ही विकृत हो जाता है।

हम लोगों ने प्रेम का स्वरूप समझने की और समझाने की कोई चेष्टा ही नहीं की। दूसरों का प्रेम चाहते हैं और दूसरों से प्रेम करते हैं जरूर, परंतु 'प्रेम' कैसा होता है? प्रेम का वास्तविक स्वरूप क्या है? जानने की जिज्ञासा तक पैदा नहीं होती है। ऐसी है मूढ़ता हमारी। प्रेम का वास्तविक स्वरूप समझना होगा और दूसरों को समझाना होगा। तभी प्रेम का अमृत हमारी मृतप्राय अन्तःचेतना को नव-जीवन प्रदान करेगा। हमारी दृष्टि निर्मल और स्निग्ध बनेगी। हमारी वाणी सुधारस की वृष्टि करेगी। हमारे प्रेम के मानसरोवर में हजारों आत्महंस निर्भय और निश्चिंत बनकर तैरते रहेंगे, स्वच्छंद क्रीड़ा करेंगे। अपूर्व आनंद पाएँगे।

प्रेम की परिभाषा मुझे सबसे ज़्यादा पसंद आई, नारद के भक्तिसूत्र की। इतनी बुद्धिगम्य, तर्कगम्य और हृदयस्पर्शी परिभाषा की गई है कि मेरी बुद्धि संतुष्ट हो गई है। मेरा हृदय नृत्य करने लगा है। मुझे ताज्जुब तो यह होता है कि सैंकड़ों वर्ष पूर्व एक ऋषि-मुनि ने 'प्रेम' की इतनी स्पष्ट परिभाषा गहराई में जाकर की है। कितना गहन चिन्तन-मनन किया होगा उस अवधूत योगी ने।

आजकल तो ऐसा दिखने में आता है कि अपने आपको विरक्त और वैरागी मानने वाले, त्यागी और तपस्वी मानने वाले लोग 'प्रेम' शब्द से ही भड़कते हैं। हाँ, ऐसे लोग दूसरों का प्रेम चाहते हैं, परंतु दूसरे मनुष्यों को प्रेम देने में पाप मानते हैं। शिष्यों का, भक्तों का प्रेम वे चाहते हैं, उसमें वे लोग पाप नहीं मानते! बेचारे ये लोग प्रेम का स्वरूप ही नहीं समझ पाए हैं। राग को प्रेम समझ लिया है, प्रेम को राग समझ लिया है।

नारद के भक्तिसूत्र में प्रेम की काफी स्पष्ट परिभाषा मेरे सामने आई, मैं क्या बताऊँ, मेरा रोम-रोम विकस्वर हो गया था। मुझे ऐसा ही लगा जैसे यह जिनवचन ही हो। जैसे भगवान महावीर की ही वाणी हो!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुणरहितं, कामनारहितं, प्रतिक्षणवर्धमानम्।
अविच्छिन्नं सूक्ष्मतरं अनुभवरूपम्।।

[ना० भ० सू० : ५४]

प्रेम का स्वरूप (१) गुणरहित (२) कामनारहित (३) प्रतिक्षण बढ़ता हुआ (४) सातत्यसहित (५) अति सूक्ष्म और (६) अनुभवात्मक है।

मैं तुझे क्या कहूँ? क्या बताऊँ? कुछ वर्ष पूर्व... अपने को... अपने साधक जीवन को स्वस्थ रखना असह्य हो गया था, उन दिनों में। अपनी त्याग-वैराग्य की उपलब्धि मैं खोता ही चला गया था। अपने आपको खाली महसूस कर रहा था। आत्मभाव में रहकर इस रुक्ष वैराग्य को जीना और उस पर विश्वास करना संभव नहीं हो पा रहा था। एक निगूढ़ विषाद ने मुझे घेर लिया था। मैं- मेरा अन्तर्मन चाहता था कुछ ऐसा ही प्रेम! संसार में तो ऐसा प्रेम मिले ही कहाँ? जहाँ स्वार्थ और शोषण के अलावा दूसरा कुछ है ही नहीं। परंतु साधकों के, मोक्षमार्ग के पथिक कहलाने वालों की सृष्टि में भी ऐसा प्रेम नहीं देखा, नहीं पाया,। यहाँ पर भी वही स्वार्थ और वही शोषण! मैं भी उन्हीं में से ही हूँ न!

जो गुणवान दिखें, उन से ही प्रेम किया जाता है। अतः प्रेम पाने के लिए गुणवान दिखने का दंभ किया जाता है। यदि मुझ में उनको गुण नहीं दिखेंगे, मेरे साथ वे लोग प्रेम नहीं करेंगे। यदि उन लोगों की कुछ कामनाएँ.. इच्छाएँ मेरे से पूर्ण होती होगी, तो ही वे मुझ से प्रेम करेंगे! जब तक उनकी इच्छाएँ मैं पूर्ण करता रहूँगा, उनका प्रेम बढ़ता जाएगा, परंतु जैसे ही मैंने उनकी इच्छा पूर्ति करना बंद किया कि उनका प्रेम घटता जाएगा। कभी प्रेम, कभी द्वेष! सतत प्रेम की धारा तो बहती दिखे ही नहीं! फिर प्रेम की सूक्ष्म भूमिका और प्रेम का अनुभव तो हो ही कैसे?

नारद ने जैसा प्रेम का स्वरूप बताया है, वैसा स्वरूपवाला प्रेम दूसरों से मिले या नहीं मिले, हमको दूसरों से प्रेम करना है, तो ऐसा ही प्रेम करना चाहिए - यह बात मैंने निश्चित कर ली। मेरे मन का विषाद दूर हो गया। मैंने अपनी आत्मसाधना में नई स्फूर्ति पाई और वैराग्य भावना विशेष रूप से ज्ञानपूत बनी।

आज तो मैंने अपना ही मनोमंथन लिख दिया। शायद तुझे पढ़ने में आनंद

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आएगा या नहीं... यह विचार मैंने किया ही नहीं... मुझे लिखने, में आनंद आता गया...लिखता गया!

स्वाध्याय, तत्त्वचिंतन और सामायिक में आनंद आता होगा? परमात्मदर्शन में लीनता आती होगी? लिखना, मुक्त मन से लिखना। कुशल रहे -यही शुभ कामना।

बम्बई

३ अगस्त, १९७६

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *प्रेम के बारे में कुछ भी लिखना बड़ा कठिन है। प्रेम करना उतना मुश्किल नहीं! चूँकि अनुभूति की यात्रा को शब्दों से सिंगारना या अक्षरों में उतारना सहज नहीं है!*
- *दोषरहित प्रेम के बारे में तो सुना होगा... पर 'प्रेम गुणरहित होना चाहिए....' यह बात जरा अजीब सी लगती है ना? पर वास्तविकता वही है!*
- *आकर्षण हमेशा अल्पजीवी होता है... उसे प्रेम का माध्यम बनाया तो प्रेम वहम में बदल जाएगा।*
- *कामनाओं से कुंठित मन प्रेम नहीं कर पाता! प्रेम कामना से रहित होना चाहिए।*
- *जरा भीतर को टटोलने की आवश्यकता है...। प्रेम के नाम पर हम क्या कर रहे हैं? कहीं अमृत के लेबल तले जहर के घूँट तो नहीं पी रहे है ना?*

पत्र : ९

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरे प्रत्युत्तर की अपेक्षा थी, तेरा पत्र नहीं आया, फिर भी मैं पत्र लिख रहा हूँ। कभी ऐसा हो जाता है...! कभी किसी का पत्र आने पर भी दो-दो महीने तक प्रत्युत्तर नहीं लिखा जाता है, शांति से विस्तृत पत्र लिखूँगा, अभी समय नहीं है... लिखने का 'मूड' नहीं है...' इस प्रकार सोचते-सोचते समय निकल जाता है। कभी बिना इन्तजार किए प्रत्युत्तर का, पत्र लिखने बैठ जाता हूँ।

'प्रेम' के विषय में लिखना इतना मुश्किल है, जितना प्रेम करना मुश्किल नहीं! परन्तु लिखना इसलिए सरल बन गया है, चूँकि नारद के 'भक्तिसूत्र' का आधार मिल गया! इस ऋषि ने 'प्रेम' की परिभाषा कर प्रेम की सृष्टि को दिव्य बना दिया है। प्रेम की दुनिया में दिव्यता के दर्शन कराए हैं। प्रेम 'राग' नहीं है, प्रेम 'मोह' नहीं है। प्रेम कोई 'आसक्ति' नहीं है। प्रेम कोई 'काम' या 'वासना' नहीं है।

तू कहेगा 'ऐसा प्रेम क्या इस संसार में संभव है? क्या किसी व्यक्ति में ऐसा प्रेम संभव है?' हाँ, संभव है, ऐसा प्रेम हो सकता है। यदि ऐसा प्रेम असंभवित होता तो एक महर्षि क्यों बताते वैसा प्रेम? अशक्य और असंभव बात बताना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महर्षि के लिए उचित नहीं होता। मुझे उस भारतीय निष्काम महर्षि के प्रति पूर्ण विश्वास है कि उन्होंने प्रेम का स्वरूप जब बताया है, तो ऐसा संभवित हो सकता है। हाँ, सभी मनुष्यों के लिए संभव नहीं हो सकता। जो मूर्ख हैं, अज्ञानी हैं, विचार शून्य और विवेकहीन हैं, ऐसे मनुष्य प्रेम को समझ ही नहीं सकते, फिर प्रेम करना तो संभव ही कैसे हो सकता है उनके लिए?

प्रेम गुण-रहित होता है! कभी सुनी है ऐसी परिभाषा? प्रेम दोष-रहित होता है-ऐसा कहते तो हम तुरंत मन लेते, समझ लेते! इन्होंने कहा प्रेम गुणरहित होता है! नारद कहते हैं दूसरे जीवात्मा के गुण देखकर, गुण जानकर यदि आप उससे प्रीति करते हैं, प्रीति हो जाती है-तो वह प्रेम नहीं है! प्रेम का आधार व्यक्ति का गुण नहीं होना चाहिए। मैं कहूँ कि 'तेरे में अच्छे गुण हैं - तू विनयी है, तू सेवाभावी है, तू उदार है इसलिए मुझे तेरे प्रति प्रेम है।' तो मेरा यह प्रेम, प्रेम नहीं है, प्रेम का आभास ही है। चूँकि मेरे प्रेम का आधार तेरे गुण बने! तेरे ये गुण जब तक तुझ में होंगे तब तक ही मेरा प्रेम टिकेगा... ज्यों वे गुण चले गए, मेरा प्रेम भी चला जाएगा! अरे, तुझ में गुण हैं, चले नहीं गए हैं - परंतु मुझे वे गुण नहीं दिखते हैं, तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम नहीं टिकेगा! प्रेम टूट जाएगा!

जो टूट जाय वह प्रेम नहीं! प्रेम अखण्ड तत्त्व है। अविच्छिन्न तत्त्व है। हम बोलते हैं 'मेरा उनसे प्रेम टूट गया....' अरे भैया, वह प्रेम ही नहीं था, वह कुछ दूसरा ही तत्त्व था, जो अखण्ड नहीं था, अविच्छिन्न नहीं था। प्रेम का आधार गुण नहीं हो सकता, चूँकि संसारी प्राणी के गुण कायम नहीं टिकते। आज एक व्यक्ति में उदारता दिखती है - कल उसमें उदारता न भी हो! कृपणता आ सकती है। हमने प्रेम का आधार उदारता को बनाया तो वह प्रेम प्रेमाभास बन जाएगा, चूँकि उस व्यक्ति की उदारता जब चली जाएगी तब आपका माना हुआ प्रेम भी चला जाएगा!

कोई भी गुण हो, कैसा भी गुण हो, किसी का भी गुण हो- संसार में कोई गुण शाश्वत नहीं है। कोई गुण अविनाशी या अपरिवर्तनीय नहीं है। उदारता हो, गंभीरता हो, सत्यवादिता हो... दान-शील और तप हो- कोई भी गुण शाश्वत नहीं! उस व्यक्ति में गुण हमेशा रहेगा ही- ऐसा निश्चित नहीं हैं। क्षण भर मान लो कि उसमें से गुण चला नहीं गया है - गुण है उसमें, परन्तु हमारी दृष्टि बदल गई, देखने का मनोभाव बदल गया, तो हमें वह गुण नहीं दिखेगा। उसमें है गुण, फिर भी हमें नहीं दिखेगा!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समझ गया न 'गुणरहित प्रेम' कहने का तात्पर्य? हमारा प्रेम इसीलिए बदल जाता है, हमने प्रेम का आधार ही परिवर्तनीय बनाया है। गुण परिवर्तनशील है। आधार परिवर्तनशील होगा तो आधेय कहाँ से स्थिर रहेगा? लोटा हिलेगा, तो लोटे में रहा हुआ पानी भी हिलेगा ही! मकान गिर पड़ेगा, तो मकान में रहे मनुष्य कैसे सलामत रहेंगे?

नारद कहते हैं कि गुणों को प्रेम का आधार मत बनाइए। दोष तो प्रेम का आधार कभी बन ही नहीं सकता, इसलिए दोष को आधार नहीं बनाने की बात करनी अनावश्यक है। दूसरे के दोष देखकर, ग़लतियाँ देखकर कभी उससे प्रेम हुआ है? कभी नहीं। प्रेम का आधार गुण ही बनता है और हम बनाते आए हैं। इसलिए प्रेम भंग होता है और हम रोते हैं। निराश हो जाते हैं। विलाप करते हैं।

गुणों की दो गति है! या तो गुण नष्ट हो जाएगा अथवा हमें गुण, गुण रूप दिखेगा नहीं! या तो गुण बदल जाएगा या तो हमारी दृष्टि बदल जाएगी। इसका परिणाम प्रेम का विसर्जन, प्रेम का द्वेष में परिवर्तन। वास्तव में वह प्रेम ही नहीं होता है - जो नष्ट हो जाता है। जो बदल जाता है। प्रेम अविनाशी तत्त्व है।

तुम्हारे मन में एक शंका पैदा हो सकती है : 'तो क्या प्रेम निराधार हो सकता है?' हाँ, हो सकता है। हो सकता है- इसलिए तो नारद ने बताया है! तू कहेगा : 'हम तो दूसरे मनुष्य का गुण देखते हैं - उससे प्रेम हो जाता है।' वह प्रेम नहीं होता है, आकर्षण होता है! आकर्षण प्रेम नहीं है। आकर्षण हमेशा क्षणिक होता है। रबड़ खींचा जाता है, परन्तु खींचा हुआ रहना उसका स्वभाव नहीं, खींचने वाला छोड़ देगा रबड़ को, कैसा हो जाएगा? जैसा था, वैसा! किसी का गुण या शक्ति देखकर मनुष्य उसके प्रति आकर्षित जाता है... वह आकर्षण स्थाई नहीं होता, क्षणिक होता है।

अब दूसरी दृष्टि से सोचें गुणरहित प्रेमस्वरूप के बारे में। गुण देखकर प्रेम होता है, तो दोष देखकर द्वेष अवश्य होगा। प्रेम का आधार यदि गुण को बनाया तो द्वेष का आधार, दोष बन ही जाएगा। क्या हर इंसान में, हर प्राणी में गुण ही होते हैं? दोष होते ही नहीं? प्रत्येक संसारी जीव में गुण और दोष- दोनों होते हैं। इससे क्या होता है- तू जानता है? अपने जीवन में यह हो रहा है- गुणों की जगह दोष ही देखने के हम आदी बन गए हैं।

तुम्हारा मेरे प्रति प्रेम है, इसलिए कि तू मुझ में गुण देखता है। बस, एक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिन ऐसा आएगा कि तेरा प्रेम नष्ट हो जाएगा। मेरे में आज जो गुण हैं, संभव है कल नहीं भी हों। आज तेरी गुण दृष्टि है, संभव है कल तेरी दृष्टि, दोष दृष्टि बन जायें! प्रेम नहीं टिकेगा।

'गुणरहित प्रेम' करने का अभ्यास (प्रेक्टीस) करना पड़ेगा! उस अभ्यास के लिए 'मूर्ति' है 'प्रतिमा' है। स्वर्ण की हो या पाषाण की हो वह प्रतिमा, उसमें कोई गुण नहीं, कोई दोष नहीं! उस मूर्ति से प्रेम करने को कहा है, प्रेमरसपारंगत परमर्षियों ने! परमात्मा की उस पाषाण-प्रतिमा को देखते ही रोमांच हो जाना चाहिए... आँखों में हर्ष के आँसू उमड़ने चाहिए... इत्यादि। कहा गया है न ऐसा? पाषाण से प्रेम करना सीखोगे तो आत्मा से, परमात्मा से प्रेम करना आएगा। गुणरहित मूर्ति से प्रेम करना सीखो! 'उस मूर्ति में आकार तो होता है न? सौन्दर्य तो होता है न? इसलिए प्रेम होता है। वहाँ भी प्रेम का आधार सौन्दर्य का गुण बनता है!' ऐसी शंका तेरे मन में हो सकती है। बात भी ठीक है। जड़ पदार्थों में भी हम गुण देखते हैं और प्रेम करते हैं। परन्तु हमारे प्रशिक्षक जानते थे इस बात को, इसलिए बिना आकार के, बिना सौन्दर्य के पत्थरों से प्रेम करने को कहा! कहा है न? लोग ऐसे पत्थरों से भी प्रेम करते हैं न? 'गुणरहित प्रेम' का अभ्यास ऐसे पत्थरों से प्रेम करने से शुरु होता है।

'आकाररहित, आकृतिरहित पत्थरों से जो गुणरहित हैं, उनसे प्रेम करना सिखना पड़ेगा। शत्रुंजय के पहाड़ के पत्थरों से प्रेम करते हैं न? उन पत्थरों में कौन-सा सौन्दर्य है? कौन-सा रूप है? फिर भी प्रेम करना है।

परन्तु... हमारा मन तो विचित्र है। जहाँ उस मन को गुण नहीं दिखेगा वहाँ वह कोई न कोई कामना-अभिलाषा को लेकर प्रेम करने लग जाता है। 'इस पत्थर को पूजने से पत्थर पर सिर लगाने से धन मिलता है, बच्चे मिलते हैं, मन की आशाएँ पूर्ण होती हैं अथवा पुण्य कमाया जाता है....' तुरंत ही मन उस आकृतिहीन, सौन्दर्यहीन, गुणरहित पत्थर से प्रेम करने लग जाता है।

नारदजी को मन की इस आदत का भी ज्ञान था। वे जानते थे कि मनुष्य गुणरहित पत्थरों से और गुणरहित मानवों से भी प्रेम करने लग जाएगा, यदि उसकी मनोकामनाएँ पूर्ण - उनसे पूर्ण होती होगी। अतः उन्होंने कहा, 'प्रेम कामनारहित' चाहिए। मात्र गुणरहित ही नहीं, कामनारहित भी चाहिए।

ऐसा क्यों कहा नारदजी ने? कुछ भी पाने की इच्छा से जो मनुष्य किसी से भी प्रेम करेगा, उसका प्रेम अखंड नहीं रहेगा। जब उसकी इच्छा पूर्ण नहीं होगी, तब प्रेम नष्ट हो जाएगा। ऐसा ही हो रहा है संसार में। हर मनुष्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किसी न किसी इच्छा-अभिलाषा को लेकर प्रेम कर रहा है दूसरों से। मानता है कि 'मैं प्रेम करता हूँ,' वास्तव में वह प्रेम नहीं होता, स्वार्थसाधकता होती है। प्रेम का दिखावा मात्र होता है।

हमको अपने स्वयं का अन्तर्निरीक्षण करना होगा। 'प्रेम' की बड़ी-बड़ी बातें करने वाले हम, कहाँ भटक रहे हैं? कैसी घोर भ्रमणाओं से भ्रमित हो रहे हैं? बोतल पर 'लेबल' है, अमृत का और पी रहे हैं, हलाहल विष। मानते हैं कि प्रेम कर रहे हैं - और करते हैं, इच्छाओं की पूर्ति की साधना!

जिससे हमारी इच्छाएँ पूर्ण न होती हों क्या हम उनमें प्रेम करते हैं? जिसमें गुण नहीं, दोष दिखते हों- क्या उससे हम प्रेम करते हैं?

माता का अपने बच्चों से जो प्रेम होता है, उसे 'प्रेम' इसलिए कहा गया है चूँकि बच्चे से उसकी कोई कामना पूर्ण न होती हो, फिर भी माता का प्रेम उसको मिलता रहे। इससे बच्चे के दोष दूर होते हैं। दोष देखकर माता घृणा करने लग जाये तो बच्चे में दोष ज़्यादा बढ़ते जाएँगे। बच्चा आवारा बन जाएगा। बच्चा प्रेम से जल्दी समझ जाएगा। घृणा से, तिरस्कार से अथवा ताड़ना से वह नहीं समझेगा, नहीं सुधरेगा। कभी भय से भले वह गलती नहीं करेगा, परंतु उसका गलती करने का मन नहीं सुधरेगा। प्रेम से - गुणरहित और कामनारहित प्रेम से उसका मानस-परिवर्तन हो जाएगा।

वैसे ही पत्नी का प्रेम। पति के प्रति उसका प्रेम गुणरहित और कामनारहित होगा, तो ही, वही पत्नी, पति की धर्मपत्नी-सहधर्मिणी बन कर, प्रेम की देवी बन सकेगी। किसी का भी, किसी के भी प्रति प्रेम यदि गुणरहित और कामनारहित होगा, तो ही वह प्रेम सच्चा प्रेम, दिव्य प्रेम कहलाएगा।

अन्यथा वह मात्र मोह वासना ही बनी रहेगी।

प्रिय मुमुक्षु! 'कामनारहित' प्रेम का विशेष गम्भीर चिन्तन मैं आगे पत्र में लिखूँगा। मन तो करता है, लिखता ही चलूँ.. परंतु समय के बंधन में जकड़ा हुआ हूँ। कालातीत और क्षेत्रातीत कब बनूँगा..? नहीं जानता हूँ। परमानंद और परम-प्रेम की अनंत अनुभूति तो तभी हो सकेगी।

यहाँ प्रसन्नता है। तेरी चित्त प्रसन्नता सदैव बनी रहे -

यही मंगल कामना -

३ अगस्त, १९७६

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *प्रेम को खोजने व माँगने की बजाय, खुद के प्रेम को लुटाना सीखें। देना सीखें!*
- *प्रेम न तो देखने की चीज है... न चखने-सूंघने की। यह तो महसूस करने की चीज है... अनुभूति का आस्वाद है!*
- *कामना भरे हृदय से की गई धर्मक्रियाएँ भी जहर बन कर आत्मा को जनम-जनम तक मारती हैं!*
- *इच्छा ही सबसे बड़ा जहर है... यह हृदय की पवित्रता को नष्ट कर देती है!*
- *रूप-सौन्दर्य और जवानी के आकर्षण में ऐंठनेवाला व्यक्ति, प्रेम की गहराई को कैसे छू सकता है?*

पत्र : १०

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र नहीं आया परन्तु एक दूसरे व्यक्ति का पत्र आया। उसने तो अगस्त और सितम्बर के पत्र पढ़ कर इतना हर्ष व्यक्त किया है कि उसका पत्र पढ़ते-पढ़ते मैं गद्‌गद हो गया। उसे तो नया जीवन ही मिल गया है।

मैंने बताया न कि महर्षि नारद ने अद्‌भुत प्रेमस्वरूप बताया है। प्रेम का स्वरूप निर्गुण और निष्काम बताया। हाँ, तू संसार में ऐसा प्रेम खोजने जाएगा, संभव है, तू निराश लौटेगा। दूसरे मनुष्यों में ऐसा प्रेम खोजने के बजाय तू अपने जीवन में ऐसा प्रेम तत्व प्राप्त करे, यह मेरा उद्देश्य है। तू दूसरे मनुष्यों में किस प्रकार खोजेगा प्रेम को? प्रेम आँखों से देखने की वस्तु तो है नहीं। कानों से सुनने की बात नहीं। दूसरे मनुष्य में ऐसा प्रेम होगा, तो भी तू नहीं जान पाएगा।

तू किसी व्यक्ति से इस प्रकार प्रेम करके अनुभव कर। गुणरहित और दोषरहित व्यक्ति कहाँ मिलेगा? संसार का प्रत्येक मनुष्य गुण-दोष सहित ही होता है। मनुष्य में गुण-दोष होते हुए भी हमारे प्रेम का आधार, प्रेम का माध्यम गुण-दोष नहीं बने, ऐसी दृष्टि होनी चाहिए। रूप, लावण्य, सौन्दर्य, यौवन... ये भी गुण हैं। हमारे प्रेम के आधार, ये गुण भी नहीं बनने चाहिए! दूसरे शर्त हैं, निष्कामवृत्ति की।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निष्काम भक्ति, निष्काम प्रेम, निष्काम कर्म....आदि बातें तो तूने बहुत सुनी होगी। सकाम भक्ति और सकाम प्रेम की हेयता भी सुनी होगी। किसी स्पृहा, इच्छा, अभिलाषा... कामना से हमें परमात्मभक्ति अथवा गुरुसेवा नहीं करनी चाहिए। कोई भी धर्मक्रिया नहीं करनी चाहिए। यदि हम कोई इहलौकिक फल की अभिलाषा से परमात्मा का पूजन करते हैं, गुरुसेवा करते हैं, दान देते हैं, शील का पालन करते हैं अथवा तपश्चर्या करते हैं, तो सभी क्रियाएँ विष क्रियाएँ बन जाएँगी। विष यानी जहर। जहर मारता है, ये क्रियाएँ भी भले धर्म क्रियाएँ दिखती हो, जीव को मारती हैं। 'यह चमत्कारिक भगवान है, मैं उनका पूजन करूँगा तो मुझे ढेर सारा धन मिलेगा... मेरी आपत्ति दूर हो जाएगी..' इस इच्छा से यदि मनुष्य पूजन करता है, इसका परमात्म प्रेम और पूजन की क्रिया, विषमय बन गई। इस गुरु की आराधना करने से मुझे पुत्र प्राप्ति होगी, केस में मेरी जीत होगी...' इस प्रकार के विचारों से प्रेरित होकर यदि मनुष्य गुरु से प्रेम करता है, गुरु सेवा की क्रिया करता है, तो वह प्रेम विषैला बन जाता है, वह धर्म क्रिया विषैली बन जाती है। 'मैं दान दूँगा तो अपनी इज्जत बढ़ेगी, मुझे ज़्यादा धन की प्राप्ति होगी, मैं शील का पालन करूँगा, तो अपना शरीर स्वस्थ रहेगा, निरोगी रहेगा, मैं तपश्चर्या करूँगा, तो अपनी कीर्ति फैलेगी, मेरा प्रभाव बढ़ जाएगा..' ये सारे के सारे विचार पवित्र धर्म क्रियाओं को जहरीली बना देते हैं। इसमें कोई सच्चा धर्मप्रेम नहीं है। प्रेम निष्काम चाहिए। कोई इच्छा नहीं, कोई कामना नहीं।

किसी बीमार व्यक्ति की सेवा की अथवा किसी दुःखी व्यक्ति को अर्थसहायता दी, यदि प्रत्युपकार की अपेक्षा है मन में- तो वह सेवा और सहायता विषमिश्रित हो गई! कामना ही विष है। इच्छा ही विष है। यह विष हृदय की पवित्रता को, निर्मलता को मारता है। यह विष प्रेम की प्रतिमा को नष्ट कर देता है। प्रेम की वृद्धि नहीं होती है। प्रेम का लक्ष्य है, प्रतिक्षण वृद्धि।

मात्र भौतिक धन-संपत्ति और यशःकीर्ति कमाने के लिए भटकता हुआ मनुष्य निष्काम प्रेम कैसे कर सकता है? वह किसी का भी सच्चा प्रेमी नहीं बन सकता। मात्र रूप-सौन्दर्य और यौवन को ढूँढ़ता हुआ मनुष्य प्रेम तो नहीं करता है, प्रेम का घोर उपहास करता है। कहाँ है, परमात्मप्रेम? कहाँ हैं, गुरु प्रेम और कहाँ है, मानव प्रेम? स्वार्थ-सिद्धि और शोषणखोरी के अलावा क्या है इस संसार में? मैंने एक किस्सा पढ़ा था :

एक मंदिर था। मंदिर में चमत्कारिक शिवमूर्ति थी। जंगल में था वह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मंदिर। परन्तु चमत्कारी भगवान थे न मंदिर में! लोग कई प्रकार की कामनाएँ हृदय में भरकर आते थे। एक भील ही मात्र ऐसा आता था, जिसका हृदय निष्काम था। शंकर से वह खूब प्यार करता था। एक दिन एक सेठ शंकर की पूजा कर ध्यान लगाए बैठे थे, उधर वह भील आया। मुँह में पानी भर के लाया था, हाथ में जंगल के फूल लाया था। पानी से शंकर को स्नान कराया और फूलों से शंकर को सजाया। 'कैसे हो शंकर?' उसने पूछा और शंकर की प्रतिमा बोली : 'मेरे प्यारे भक्त! तू कुशल है न? तुझे जो चाहिए सो माँग! भील ने कहा : 'शंकर! तू ही मेरा है, मुझे और क्या चाहिए?' कह कर भील चला गया... परन्तु वह सेठ तो देखता ही रह गया! 'यह शंकर भी कैसा है?

उस गँवार भील पर प्रसन्न होकर बात करता है... और मैं कितनी भावभक्ति करता हूँ... कैसे बढ़िया फल चढ़ाता हूँ... मिठाई चढ़ाता हूँ... मुझ पर प्रसन्न ही नहीं हो रहा है... जैसा उसका भक्त, वैसा ही यह भगवान लगता है...।'

सेठ निःसंतान था। पुत्रप्राप्ति की कामना से वह निरंतर इस मंदिर में आता था। दूसरी बार, जब सेठ मंदिर में आया, उसने देखा तो शंकर की एक आँख नहीं थी! कोई उखाड़ कर ले गया था। सेठ ने उस चोर को दो-चार गालियाँ सुनाई मन ही मन और कहा : 'कल बाजार से काँच की आँख लाकर लगा दूँगा।'

इतने में वह भील आया। आते ही उसने मुँह में से पानी की पिचकारी लगाई शंकर पर और फूल भी चरणों में रख दिए। शंकर की मूर्ति की ओर देखा और चकित रह गया : 'अरे शंकर, तेरी आँख कहाँ चली गई? मेरी दो आँखें और तुझे एक? यह कैसे हो सकता है, शंकर? ले, मेरी एक आँख तुझे देता हूँ... बोलते-बोलते ही अपने तीर से एक आँख निकाल कर शंकर को लगा दी! आँख में से खून की धारा बहने लगी। सेठ देखता ही रह गया। घबरा गया था सेठ। इतने में शंकर की मूर्ति बोली : 'सेठ, देखा मेरे भक्त का प्रेम? वह लेने नहीं आता, देने आता है! तू लेने आता है। तू देता भी है...इससे बहुत ज़्यादा लेने के लिए। तू मुझ से प्रेम नहीं करता, तुझे चाहिए पुत्र! इस भील को कुछ नहीं चाहिए... मुझे निष्काम प्रेमी ही पसंद आता है!'

निरक्षर भील के पास विशुद्ध प्रेम का अमृत था। बुद्धिमान सेठ की भक्ति कामना के हलाहल विष से विषैली बन गई थी। हाँ, प्रेम का सम्बन्ध कोई विद्वत्ता से या बुद्धिमत्ता से ही नहीं है। प्रेम का सम्बन्ध सत्ता और संपत्ति से नहीं होता है। प्रेम का सम्बन्ध है, कामनारहित हृदय से!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्री हेमचन्द्रसूरिजी ने रावण को परमात्मा का निष्काम भक्त बताया है। रावण निष्काम प्रेमी था परमात्मा का। रावण की अद्‌भुत परमात्मभक्ति से एक बार नागराज धरणेन्द्र रावण पर प्रसन्न हो गया था। धरणेन्द्र ने रावण को कहा : 'रावण! तेरी परमात्मभक्ति से मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हो गया हूँ, तू मुझसे कुछ माँग ले...जो तुझे चाहिए! देव का दर्शन निष्फल नहीं जाता, मैं नागराज धरणेन्द्र हूँ।' रावण ने क्या कहा धरणेन्द्र को? उसने कहा :

'परमात्मभक्ति से आप का प्रसन्न होना स्वाभाविक है, चूँकि आप भी परमात्मभक्त हैं! एक भक्त को दूसरा भक्त प्यारा ही लगता है। परन्तु मुझे आप से कुछ भी नहीं चाहिए! परमात्मभक्ति से मुझे जो मिलना था...मिल गया है, वह अपूर्व आनंद! मिल गई है, वह अद्‌भुत प्रसन्नता... नागराज! दूसरा क्या चाहिए?'

रावण की निष्काम भावना से धरणेन्द्र अत्यधिक खुश हो गया और रावण की बहुत प्रशंसा की। रावण का परमात्मप्रेम दिन-प्रति-दिन बढ़ता ही गया था। रावण सच्चा परमात्मप्रेमी था।

तू कहेगा : परमात्मा के प्रति तो निष्काम प्रेम... कामनारहित प्रेम हो सकता है, परन्तु मनुष्यों के साथ निष्काम प्रेम करना असंभव सा लगता है! कामनावालों के साथ कामनारहित प्रेम कैसे किया जाये?

किया जा सकता है! निष्काम प्रेमी से निष्काम प्रेम करना तो सरल है! कामना वालों के साथ निष्काम प्रेम करना, विशेष बात है! किया था ऐसा प्रेम एक सन्नारी ने। मयणासुन्दरी ने कोढ़ी उंबर राना से। आचार्य श्री रत्नशेखरसूरिजी ने मयणासुन्दरी का पात्र निष्काम प्रेममूर्ति का ही पात्र बताया है। यदि उसका प्रेम निष्काम नहीं होता, तो वह प्रेम अखंड नहीं रहता, खंड-खंड होकर बिखर जाता। जब श्रीपाल दूसरी राजकन्याओं को पत्नियाँ बना कर ले आया था, उस समय मयणा सुन्दरी का प्रेम हवा बन कर उड़ जाता आकाश में। ईर्ष्या, द्वेष और तिरस्कार से भर जाती मयणा। यदि मयणा का श्रीपाल के प्रति प्रेम विशुद्ध नहीं होता, तो जब श्रीपाल परदेश में था उस समय उसके लिए मयणा सदैव शुभकामनाएँ नहीं करती। उसकी सुख-शांति के लिए प्रार्थना नहीं करती। श्रीपाल के प्रति मयणा का प्रेम बढ़ता ही गया है। इसका अर्थ यह है कि निष्काम प्रेम हो सकता है।

निष्काम प्रेम का दूसरा एक पहलू है। इहलौकिक सुख-वैभव या कीर्ति-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रशंसा की कामना नहीं हो, परन्तु पारलौकिक दैवी दिव्य सुखों की कामना हृदय में भरकर, परमात्मा से प्रेम करने का प्रदर्शन करें! गुरुप्रेम की बातें करें, धर्मप्रेम का दिखावा करें। इसलिए परमात्मा की भक्ति करता है, ताकि देवलोक के सुख मिले। इसलिए व्रत-नियम का पालन करता है, ताकि दिव्य वैभव और दिव्य शरीर-संपत्ति मिले!

यह परमात्मप्रेम या धर्मप्रेम नहीं है, यह भी 'स्लो पोइजन' Poison है! धीमा जहर है। यह जहर धीरे-धीरे मारता है। दिखता है, निष्काम प्रेम पर होता है, सकाम प्रेम!

प्रेम की आड़ में यदि कुछ भी पाने की कामना है, यहाँ पाने की या कहीं और जगह पर कुछ पाने की कामना है, तो वह प्रेम कामना सहित प्रेम है। इसलिए मैं हमेशा कहा करता हूँ कि वही प्रेम सच्चा है, जहाँ हमें पाने की कामना नहीं होती वरन देने की... समर्पण की ही भावना रहती है। प्रेम समर्पण करवाता है। स्वार्थ प्राप्ति के लिए प्रेरित करता है।

प्रिय मुमुक्षु! प्रेम की परिभाषाओं में उलझना नहीं है। उलझनों के लिए यह नहीं लिख रहा हूँ, मन की समस्याओं को सुलझाने के लिए लिखता हूँ। मन का समाधान ही तो परमब्रह्म की मग्नता में हेतु है। स्वभावसुख की अनुभूति, मन का समाधान किए बिना हो नहीं सकता। मन का समाधान करते ही रहना होगा।

इस वर्षाकाल में संतोषजनक चिन्तन-मनन चलता रहा है। लेखन भी तृप्ति का अनुभव कराता रहा है। 'ज्ञानसार' ग्रंथ पर अनुप्रेक्षा हो रही है और 'प्रशमरति' ग्रन्थ पर विवेचन भी लिखता जा रहा हूँ। साथ-साथ एक उपन्यास भी लिख रहा हूँ! उधर प्रतिदिन 'शांतसुधारस' ग्रन्थ पर प्रवचन भी दे रहा हूँ। और 'योगबिन्दु' ग्रन्थ का अध्ययन करा रहा हूँ। कोई खेद नहीं, क्लेश नहीं और संताप नहीं! मुझे ऐसा लगता है कि निर्गुण और निष्काम प्रेम ही इसका मूल स्त्रोत नहीं होगा क्या? जीव मात्र के प्रति जब कभी ऐसे प्रेम की आन्तर अनुभूति होती है, अपूर्व आनंद पाता हूँ...। तू भी ऐसा आनंद अनुभव करे, यही मेरी शुभ कामना है। तेरे प्रति मेरी यह कामना भी क्या निष्काम प्रेम नहीं है? कुशल रहें।

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *'प्रेम' शब्द का प्रयोग इस कदर विकृत हो गया है कि जैसे राग-मोह-आसक्ति ये सब प्रेम के पर्याय माने जाने लगे हैं!*
- *जो टूट ज़ाए, वह प्रेम नहीं है! जो बढ़ता-घटता है, वह प्रेम नहीं है! जो महसूस नहीं होता, वह प्रेम नहीं है! जो प्रदर्शन चाहता है, वह प्रेम नहीं है!*
- *दुनिया की हानि-लाभ की हिसाबी दृष्टि में प्रेम जैसे अपार्थिव तत्त्व का मूल्यांकन हो कैसे सकता है?*
- *स्वयं स्वार्थ के शिकंजे में सुबकते आदमी ही अन्य पर स्वार्थी होने का आरोप मढ़ते हैं।*
- *बिना किसी अपेक्षा आकांक्षा से प्रेम के फूल खिलाने वाला व्यक्ति ही सही अर्थ में आत्मज्ञानी कहा जा सकता है! कोरी शास्त्रज्ञता अनुभूति की ऊंचाइयों को छू नहीं पाती!*

पत्र : ११

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला! प्रसन्नता हुई। दूसरे पत्र भी मिले हैं। प्रेम के विषय में कुछ लोगों ने गहरी अभिरूची ली है और वे इस विषय में विशेष गहराई में जाना चाहते हैं। अच्छा है, गहराई में गये बिना रहस्यभूत तत्त्व पाया नहीं जा सकता।

'प्रेम' शब्द का प्रयोग इतना सामान्य हो गया है कि सामान्य बुद्धि वाला मनुष्य असमंजस में पड़ जाता है। राग और मोह से भिन्न 'प्रेम' एक दिव्य तत्त्व है, यह बात मैं इसलिए विशेष स्पष्ट कर रहा हूँ। जहाँ गुण और कामना माध्यम बनते हैं, वहाँ प्रेम नहीं होता। जहाँ निरन्तर वृद्धि नहीं होती, कभी वृद्धि, कभी हानि होती है, वहाँ प्रेम नहीं होता! जो टूट जाता है, अखंड नहीं रहता है, वह प्रेम नहीं है। जो प्रदर्शन चाहता है, वह प्रेम नहीं है। जिसकी गहन अनुभूति नहीं होती है, वह प्रेम नहीं है। वह राग हो सकता है, मोह हो सकता है।

कोई कहता है : 'मैंने तो गुणवान समझ कर प्रेम किया था, परन्तु परिचय

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होने से मालूम हुआ कि उसमें तो अनेक दोष हैं... उसके प्रति प्रेम नहीं रहा!' कैसे रहता? वह प्रेम ही नहीं था!

कोई कहता है : 'मेरा उसके प्रति अत्यंत प्रेम था, उसको मैंने क्या नहीं दिया? परन्तु उसको मेरी कोई कद्रदानी नहीं... मेरा प्रेम घटता जाता है।' प्रेम होता तो नहीं घटता! वह प्रेम नहीं था, राग था!

कोई कहता है : 'मेरा उसके प्रति प्रेम दुनिया जानती है!' दुनिया तुम्हारे प्रेम को कैसे जानेगी? प्रेम स्थूल नहीं है, सूक्ष्म है! सूक्ष्म तत्त्व को दुनिया नहीं जान सकती। दुनिया की दृष्टि में प्रेम तत्त्व आ ही नहीं सकता। राग आ सकता है, मोह आ सकता है।

कोई कहता है : 'मुझे तो कोई सच्चा प्रेम करने वाला मनुष्य ही नहीं मिला है। सब स्वार्थ के प्रेमी हैं....।' जब तक अपना स्वार्थ सिद्ध होता हो, तब तक प्रेम...। सही बात कही इसने! उसको सब लोग स्वार्थी नजर आए! क्यों, जानता है? उसका स्वयं का स्वार्थ किसी व्यक्ति ने पूर्ण नहीं किया, इसलिए! स्वयं जो स्वार्थी होते हैं यानी कोई न कोई इच्छा, कामना, अभिलाषा लिए फिरते हैं और वे इच्छाएँ अपूर्ण रहती हैं... तब वह दूसरों पर 'स्वार्थी' का आरोप मढ़ देते हैं।

क्या तू किसी का निःस्वार्थ प्रेमी बना है? बिना स्वार्थ का प्रेम किसी को दिया है? तो फिर तुझे निःस्वार्थ प्रेम कहाँ से मिलेगा? प्रेम सदैव निःस्वार्थ ही होता है। स्वार्थ वाला तो राग होता है।

एक भाई ने मुझे कहा : 'दुनिया में सब स्वार्थी हैं इसलिए मैं तो किसी से प्रेम नहीं करता। मैं तो परमात्मा से प्रेम करता हूँ, बस!'

मैंने उसको पूछा :

परमात्मा को तुमसे कोई स्वार्थ नहीं है, परन्तु तुम्हें परमात्मा से कोई स्वार्थ है या नहीं?'

'परमात्मा से तो स्वार्थ है मुझे!'

'इसका अर्थ यह हुआ कि तुमसे स्वार्थ रखने वाले स्वार्थी और तुम परमात्मा से स्वार्थ रखो वह निःस्वार्थ? यूँ कहो कि तुम्हें कुछ भी दूसरों को देना नहीं है, दूसरों से लेना है! जो तुम्हें देते नहीं वे स्वार्थी लगते हैं! यदि परमात्मा ने भी तुम्हारी इच्छा पूर्ण नहीं की तो एक दिन तुम परमात्मा को भी स्वार्थी कह दोगे! परमात्मा को छोड़ दोगे!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिसकी तरफ से हमें कुछ भी नहीं मिलता हो, उसके प्रति प्रेम करना प्रेम है। ऐसा प्रेम आत्मदृष्टि प्राप्त हुए बिना सम्भव नहीं। शुद्ध आत्मदृष्टि चाहिए। सच्चिदानंदपूर्ण आत्मदृष्टि ही ऐसे दिव्य प्रेम का माध्यम है।

आत्मज्ञानी मनुष्य ही ऐसा प्रेमी हो सकता है। अथवा यूँ कहो कि ऐसा प्रेमी ही आत्मज्ञानी कहा जा सकता है। कोरा शास्त्रज्ञानी कभी भी ऐसा प्रेमी नहीं कहा जा सकता।

एक प्रकाण्ड शास्त्रज्ञानी ने मुझे कहा : 'मैंने अपने शिष्यों को पढ़ाये, विद्वान बनाए, परन्तु उनका मेरे प्रति कोई भक्तिभाव नहीं, समर्पणभाव नहीं... सब स्वार्थी बन गए..!' उनको अपने ही शिष्य स्वार्थी नजर आए! यानी शिष्यों पर प्रेम नहीं रहा। कैसे रहता? प्रेम होता तो रहता। प्रेम ही नहीं। शिष्यों से भक्तिभाव की कामना थी! प्रेम कामनारहित होता है! उन्हें शास्त्रों का शब्दज्ञान था, परन्तु आत्मा की अनुभूति नहीं थी। वे प्रेम पाना चाहते थे, प्रेम देना नहीं चाहते थे। जो उनसे प्रेम करे वे उनके प्रति प्रेम कर सकते हैं! परंतु उसको प्रेम कैसे कहा जाये? वह तो राग ही है। राग अपवित्र है।

आत्मज्ञानी होना पड़ेगा। सच्चिदानंदपूर्ण आत्मा की अनुभूति करनी होगी। जगत को पूर्ण देखना होगा। जब तक अपूर्णता नजर आएगी, सच्चा आत्मप्रेम प्रकट ही नहीं होगा।

'सच्चिदानंदपूर्णेन पूर्णं जगदवेक्ष्यते।'

'ज्ञानसार' का यह प्रतिपादन बहुत ही अर्थपूर्ण है। जगत को पूर्ण देखना होगा। इसलिए सच्चिदानंद से पूर्ण बनना पड़ेगा। थोड़ी क्षणों के लिए भी ऐसा बनना पड़ेगा। इसलिए प्रतिदिन -

'शुद्धात्मद्रव्यमेवाहं शुद्धज्ञानं गुणो मम।'
'मैं शुद्ध आत्मद्रव्य हूँ, शुद्धज्ञान मेरा गुण है!'

इस सूत्र को रटना पड़ेगा। इस भाव में बहना पड़ेगा। शुद्ध आत्मस्वरूप के भाव में बहते रहोगे, जगत पूर्ण प्रतीत होगा। पूर्ण के प्रति अनुभवात्मक, सूक्ष्मतर प्रेम जागृत होगा। उसका प्रदर्शन नहीं होगा। तुम्हारे उस प्रेम को दुनिया नजरअंदाज नहीं कर सकेगी। दुनिया को अपने प्रेम की प्रतीति कराना आवश्यक भी नहीं है।

जब तक आत्मस्वरूप का अज्ञान है, तब तक प्रेमतत्त्व पाया नहीं जा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सकता। अज्ञानी प्रेम कर ही नहीं सकता। वह राग कर सकता है, मोहित हो सकता है, प्रेम नहीं कर सकता। भले हजारों शास्त्रों का ज्ञान हो परन्तु आत्मस्वरूप का ज्ञान न हो, आत्मानुभूति न हो, वह अज्ञानी ही कहलाएगा। आत्मज्ञानरहित, अध्यात्मरहित शास्त्रज्ञानी प्रेमतत्त्व को समझ ही नहीं सकता। प्रेम की गहरी अनुभूति कर ही नहीं सकता।

तू ऐसा प्रेमतत्त्व पाना चाहता है? तो तुझे आत्मज्ञानी बनना होगा। तुझे ऐसा प्रेम दूसरों से चाहिए? तो आत्मज्ञानी महापुरुषों से मिलेगा। ऐसे आत्मज्ञानी महापुरुष विरल हैं इस संसार में। परन्तु हैं जरूर! आत्मद्रष्टा निष्काम योगी पुरुष किस रूप में, किस वेश में मिले, यह मैं नहीं बता सकता...! मैं तो यह कहता हूँ कि तू ऐसा बन जा! आत्मद्रष्टा बन जा। निष्काम योगी बन जा! तेरे लिए कठिन नहीं है। कठिन मानना भी नहीं।

कड़ा संकल्प कर और कर्तव्यमार्ग पर चलता रहे। तू प्रेममय बन जाएगा। अनन्त सुख, अनन्त आनंद पा लेगा।

जीवों के गुण-दोषों का दर्शन करते रहेंगे... उसमें ही उलझे रहेंगे तो प्रेमतत्त्व की अनुभूति कभी नहीं होगी। राग-द्वेष के विषचक्र में कुचलते रहेंगे। गुणदोषों का दर्शन राग-द्वेष पैदा करता है। परद्रव्य के गुण-दोष देखो ही मत। परद्रव्य को देखना ही क्यों? देखना यानी विचार करना! परद्रव्यों का विचार ही क्यों करना?

तू कहेगा : 'संसार में रहते हैं तो विचार तो आ ही जाते हैं! परद्रव्यों के आधार पर तो जीवन जी रहे हैं!'

ऐसा क्यों होता है, जानता है? जन्म-जन्मान्तर से ऐसे ही करते आए हैं, ऐसा ही अभ्यास हो गया है, इसलिए। दूसरा अभ्यास शुरू करना होगा। मैं परद्रव्यों का विचार किए बिना भी जीवन जी सकता हूँ, ऐसा मानसिक संकल्प करना होगा। परद्रव्यों का उपयोग करना अलग बात है, उनके गुण-दोषों का विचार करना अलग बात है। जिस वस्तु का उपयोग करना पड़े उसका विचार करना ही पड़े, उसके गुणदोषों का चिन्तन करना ही पड़े, ऐसा नियम नहीं है।

'मुझे अखंड... अविच्छिन्न और सूक्ष्मतर प्रेम की अनुभूति करनी है', ऐसा दृढ़ संकल्प करने पर मार्ग स्पष्ट और सरल बन जाएगा। मात्र विचार या इच्छा से कार्य सिद्ध नहीं होता है। संकल्प के चरणों में सिद्धि नमन करती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राग-द्वेष के द्वंद्वों में घोर बेचैनी हुई होगी, तो यह संकल्प शीघ्र हो जाएगा। राग-द्वेष के द्वंद्व प्रिय लगते होंगे, तो यह संकल्प नहीं हो सकेगा। राग-द्वेष कर्तव्य रूप लगेंगे, तब तक प्रेमतत्त्व की पिपासा ही नहीं जगेगी।

प्रिय मुमुक्षु! परायी चिन्ताओं से मुक्त कर दे मन को। अपने शुद्ध आत्मस्वरूप का... निर्विकार आत्मस्वरूप के चिन्तन में जोड़ दे मन को। 'शांतसुधारस' की वे दो पंक्ति मेरे हृदय को बड़ी अच्छी लगती है...।

'परिहर परचिन्तापरिवारम्।
चिन्तय निजमविकारम् रे!'

आत्मज्ञानी बनने की यह अनिवार्य शर्त है। परद्रव्यों की चिन्ताओं से मन को मुक्त करना! मुक्त मन निजानंद की मस्ती अनुभव करेगा। प्रेमरस का प्याला भर-भर कर पियेगा और दूसरों को पिलायेगा।

वर्षावास पूर्ण हो रहा है। अनेकविध प्रवृत्तियों में चार मास व्यतीत हो गये... समय दौड़ता ही रहता है...! अनादि और अनन्त! आत्मा को कालातीत होना होगा। समयातीत होना होगा। देश और काल के बंधनों से मुक्त आत्मा ही परम प्रेमरस की अनुभूति कर सकता है न!

प्रत्युत्तर देगा न? इस विषय में तू कहाँ तक पहुँच सकता है, लिखना। तेरी कुशलता चाहता हूँ।

१-११-७६

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *विशुद्ध हृदय की गहराइयों में ही सच्चे प्रेम का उद्‌भव हो सकता है।*
- *व्यावहारिक और हार्दिक प्रेम में गहरा अंतर है! दुनिया में अधिकांश लोग व्यावहारिक प्रेम को ही प्रेम मान लेते हैं।*
- *प्रेम में यदि शिकायत या फरियाद का दौर आता है, तो समझ लेना चाहिए कि प्रेम का सही रूप खो गया है!*
- *हृदय को विशुद्ध बनाने के लिए मैत्री, प्रमोद, करुणा व माध्यस्थ भावनाओं को अपनाना ही होगा।*
- *मैत्री के लिए शत्रुता नहीं होना, इतना ही पर्याप्त नहीं है... वरन् सभी जीवों के साथ भीतरी स्नेह का नाता भी जुड़ा होना जरूरी है! वह स्नेह भी निःस्वार्थ और अकारण होना चाहिए।*

पत्र : १२

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

मेरी कल्पना के अनुसार ही तेरा पत्र आया। निराशा से भरपूर और शिकायतों से भरपूर! शिकायतों से तो मुझे आनंद हुआ, परंतु निराशा से कुछ ग्लानि हुई। ऐसा प्रेम कि जिसका मैं वर्णन कर रहा हूँ, नारद के भक्ति सूत्र कर रहे हैं, वैसा प्रेम करना तुझे संभव नहीं लगता, इसलिए तू निराश हो गया। ऐसा प्रेम तुझे कहीं से भी नहीं मिल रहा है - इसकी शिकायतें तूने की... अच्छा है, इस बहाने भी दिल तो खुल गया तेरा!

मैं जिस प्रेम की बात लिख रहा हूँ, उस प्रेम का उद्‌भव स्थान है, विशुद्ध हृदय। ज्यों-ज्यों हृदय शुद्ध बनता जाएगा, त्यों-त्यों प्रेम भी विशुद्ध बनता जाएगा। अशुद्ध हृदय से शुद्ध प्रेम प्रगट नहीं हो सकता। अशुद्ध हृदय बाह्य रूप, गुण आदि की ओर आकृष्ट होता है। शुद्ध हृदय सहजभाव से दूसरी आत्माओं के प्रति प्रवृत्त होता है।

संसार में प्रेम की आवश्यकता क्यों है? मनुष्य यदि प्रेम की आवश्यकता समझता है तो इसलिए कि उसको दोष और दुःखों से बचना है। प्रेम में वह शक्ति है, इसलिए जीवात्मा प्रेम चाहता है। स्वयं को दोष और दुःखों से बचाने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की भावना से दूसरों के प्रेम की अपेक्षा करना- अशुद्ध प्रेम है। दूसरों को दोष और दुःखों से बचाने की भावना से प्रेम करना शुद्ध प्रेम है।

स्वार्थ की भावना अशुद्ध हृदय है। परमार्थ की भावना शुद्ध हृदय है। प्रेम की बातें करने वालों को देखना। अपने दोषों को, अपनी भूलों को जो सहन कर ले, दुनिया के सामने प्रगट न करे, अपने दुःखों को जो दूर करे अथवा सहानुभूति प्रगट करे... इसलिए ज़्यादातर लोग प्रेम चाहते हैं!

एक युवा मेरे पास आया। उसने कहा : 'मेरी माता का मेरे ऊपर बहुत प्रेम है।' मैंने पूछा : 'माँ क्या करती है?' उसने कहा : 'मेरी माता, मैं कितना भी खर्च कर दूँ, मुझे कुछ कहती नहीं है। मैं रात को कितने भी बजे घर पर जाता हूँ, माता मुझे पूछती नहीं है कि 'तू क्यों इतनी देरी से आया... कहाँ गया था....' कुछ भी पूछती नहीं है। मेरी कोई गलती हो जाये, माँ देख भी ले, पिताजी को कहती नहीं है।

माँ का ऐसा प्रेम चाहता है पुत्र! व्यावहारिक प्रेम! तुम्हारे हृदय में कुछ भी हो, स्नेह हो या शत्रुता हो, तुम व्यवहार अच्छा करते हो, हो गया प्रेम! और, तुम्हारे हृदय में वास्तविक प्रेम हो, परंतु यदि उसके साथ उसका मनचाहा व्यवहार नहीं किया, तो वह मान लेगा 'मेरे प्रति प्रेम नहीं है!' जो मनुष्य बुद्धिमान नहीं है, जो स्थिरचित्त नहीं है, जो ज्ञानी नहीं हैं, ऐसा मनुष्य व्यावहारिक प्रेम को ही प्रेम मानता है। वह वास्तविक प्रेम नहीं होता है। कार्यसाधक दृष्टि से किया गया प्रेम, प्रेम का आभासमात्र होता है।

एक लड़के ने कहा : 'मेरे पिताजी का मेरे प्रति प्रेम नहीं है। वे मुझे पैसा नहीं देते। वे मेरी बुराई करते हैं।' ऐसे उसने कई कारण बताए। यदि उस लड़के को पिता खूब पैसा देता और उसकी प्रशंसा करता होता तो लड़का कहता कि 'मेरे पिता का मेरे प्रति खूब प्रेम है!' एक लड़का ऐसा है कि जिसको मैं जानता हूँ, वह अपने घरवालों से नफरत करता है। वह कहता है कि 'मेरे माता-पिता, भाई-बहन... भाभी... किसी का मेरे प्रति प्रेम नहीं। सब मेरे दोष देखते हैं, मेरी गलतियाँ बताते हैं...' इत्यादि बातें बताई। युवा होते हुए ये भाईसाहब कोई काम नहीं करते, कोई पढ़ाई नहीं करते। सुखी-संपन्न परिवार है इसलिए दूसरी तकलीफें उसको हैं नहीं। उनको वे लोग अच्छे और प्रेमी लगते हैं, जो उससे मीठी-मीठी बातें करते हैं! जो उसको प्रिय शब्दों से भरे पत्र लिखते हैं। जिन लोगों का इसके जीवननिर्माण में कोई योगदान नहीं है, वे लोग इसको प्रिय लगते हैं। मैं इस लड़के के माता-पिता को जानता हूँ।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लड़के के प्रति उनको कितना प्रेम है, यह भी मैं जानता हूँ। लड़का यह मानने को तैयार नहीं! मैंने उसके माता-पिता को कहा : 'इसको आप करुणा भावना से, घर से मुक्त करो। उसको उन लोगों के पास जाने दो, जिनको यह 'प्रेमपूर्ण' मान रहा है। वहाँ उनके संग रहने दो। इस आवारागर्दी से वह वहाँ कब तक टिक सकता है और वे प्रेमी लोग कब तक इसको खिलाते-पिलाते हैं, अनुभव करने दो इसको।'

परंतु वे माता-पिता थे न! उनका हृदय प्रेमपूर्ण था। उनकी आँखें डबडबा गई। इस लड़के का जीवन बर्बाद न हो जाये... दुर्लभ मानव जीवन व्यर्थ चला न जाये... दुर्व्यसन और दुष्टसंगति से जीवन पापमय न बन जाये...' ऐसी बातें प्रेम के बिना कौन करता भला? परंतु उस लड़के को समझाना मुश्किल था!

व्यावहारिक प्रेम और हार्दिक प्रेम में बहुत बड़ा अन्तर है। संसार में ज़्यादातर लोग व्यावहारिक प्रेम को ही प्रेम मानते हैं। विशुद्ध हृदय के शुद्ध प्रेम को कौन जानता है? नारद भक्तिसूत्र के माध्यम से इस शुद्ध प्रेम को समझाते हैं। प्रेम गुणरहित, कामनारहित होना चाहिए। प्रतिक्षण बढ़ता रहना चाहिए। अविच्छिन्न, सूक्ष्मतर और अनुभवस्वरूप होना चाहिए। इस प्रकार का प्रेम ही सच्चा प्रेम है।

मेरे खयाल से तेरी शिकायतों का समाधान हो जाएगा। जिसके भी मन में व्यावहारिक प्रेम की कल्पनाएँ होती हैं, वे लोग इस प्रकार की शिकायत करते ही रहते हैं। विशुद्ध प्रेम की परिभाषा इसीलिए तो मैं समझा रहा हूँ।

निराश होने की आवश्यकता नहीं है। 'ऐसा विशुद्ध प्रेम तो नहीं हो सकता।' इस विचार को दिमाग से बाहर फेंक दे। अशक्य का कर्तव्यरूप प्रतिपादन महर्षि नहीं करते। शक्य है, ऐसा हृदय बनाना और ऐसा प्रेमरस प्रगट करना। हाँ, तू दूसरों से ऐसे प्रेम की अपेक्षा करता रहेगा तो ऐसा प्रेम तुझे कहीं पर भी नहीं दिखाई देगा। चूँकि यह प्रेम देखा नहीं जा सकता। यह तो अनुभव की बात है। तू स्वयं अनुभव कर सकेगा।

हृदय को विशुद्ध करने के लिए मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ्य इन चार भावनाओं से तेरे मन को भावित कर दे। जब तक एक जीवात्मा के प्रति भी शत्रुता का भाव रहेगा, हृदय विशुद्ध नहीं बनेगा। 'मेरा कोई शत्रु नहीं है। सब जीव मेरे मित्र हैं।' इस प्रकार समग्र जीवसृष्टि के प्रति मित्रता की स्निग्ध

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दृष्टि बनी रहनी चाहिए। मित्रता क्या है? स्नेह! प्रेम! एक ज्ञानी पुरुष ने मित्रता की परिभाषा इस प्रकार की है : **स्नेहपरिणामो मैत्री।**

शत्रुता नहीं होना, इतना ही पर्याप्त नहीं है, स्नेह होना अनिवार्य है। सभी जीवों के प्रति स्नेह! हम एक जीव से शत्रुता नहीं करते हैं, ठीक है, परंतु स्नेह नहीं करते, यह अपराध है! यह स्नेह व्यावहारिक नहीं होगा, हार्दिक होगा। विशुद्ध हृदय का प्रेम होगा। विशुद्ध हृदय के प्रेम के पात्र सब जीव होंगे। स्वर्ग और नर्क में रहे हुए, निगोद में रहे हुए, अव्यवहार राशि में रहे हुए... तिर्यंचगति और मनुष्यगति में रहे हुए सब जीव!

इस विषय में मैं आगे लिखूँगा। विशुद्ध प्रेम का आधार है, विशुद्ध हृदय। हृदय को विशुद्ध करने का अमोघ उपाय है, मैत्री आदि चार भावनाओं का सतत स्मरण। आज इस पत्र में इतना ही लिखता हूँ।

हम अगाशी तीर्थ में आए हैं। परमात्मा मुनिसुव्रतस्वामी की श्याम प्रतिमा मन को मोह लेती है। उद्यानों का ही यह गाँव है। शांति है, स्वस्थता है। उपधान तप की ४७ दिन की धर्मआराधना हो रही है। कड़ी तपश्चर्या है उपधान की। छोटे बच्चे भी हैं, युवा हैं और वृद्ध भी हैं। दो महीने बीत जाएँगे यहाँ पर।

तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा। चिंताएँ नहीं करना। चिंतन करना। मन की निरोगिता की दवाई है, तत्त्वचिंतन! फालतू विचारों से मन को अशक्त और रोगी नहीं बनाना चाहिए। प्रसन्नता बनी रहे- यही शुभ कामना।

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जीवन जीने के लिए सोच-समझकर आयोजन करना चाहिए। स्वयं यदि न बना सके तो किसी श्रद्धेय व्यक्ति को अपना मार्गदर्शक चुन लेना चाहिए।*
- *जीवन संसारी का हो या साधु का, यदि आनंद व प्रसन्नता की मस्ती में झूमते हुए जीना है, तो हृदय को अनासक्त, अलिप्त एवं विरक्त बनाना ही होगा।*
- *जिन्दगी क्या है? अभिनय मात्र! जीना ऐसे है जैसे अभिनय कर रहे हैं... और अभिनय भी जानदार करना है... अभिनय करने वाले घटनाओं की गलियों में घूमते जरूर है... भटक नहीं जाते!*
- *दुनिया में 'आत्मा' के अलावा वास्तविक है क्या? कुछ भी नहीं! 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' यहाँ पर सत्य लगता है!*

पत्र : १३

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

दो महीने धार्मिक महोत्सव में व्यतीत हो गए। पत्र लिखने का विचार तो कई बार आया परन्तु नहीं लिख सका। दो महीनों में मनोमंथन तो खूब हुआ, कई दिव्य विचार भी आए.. अभिव्यक्ति तो समय मिलने पर ही हो सकती है।

मनुष्य को सर्वप्रथम यह निर्णय करना चाहिए कि उसको कैसा जीवन जीना है। यदि स्वयं निर्णय करने की बुद्धि-शक्ति हो तो स्वयं निर्णय करें, यदि वैसी बुद्धि-शक्ति नहीं है, तो अपने श्रद्धेय व्यक्ति के निर्णय को मान्य कर लेना चाहिए। या तो स्वयं गाड़ी चलाना सीखो अथवा ड्राइवर को गाड़ी सौंप दो। द्विधा में नहीं रहना चाहिए।

जीवन का मार्ग स्पष्ट होने पर मैं तुझे स्पष्ट मार्गदर्शन दे सकता हूँ। फिर भी एक बात कह दूँ कि जीवन संसारी का हों या साधु का, यदि प्रसन्नतापूर्वक आनंदपूर्ण जीवन व्यतीत करना हो तो हृदय को निर्मम निःसंग बनाना होगा। परद्रव्य का संग और ममत्व ही तो भयंकर अशुद्धि है!

बाह्य जीवन में पर द्रव्यों का संग रहेगा ही। ममत्व भी दिखाना पड़ेगा। पाँच इन्द्रियों के अनेक विषयों का संपर्क होता रहता है, इन्द्रियों से भले संपर्क

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हो, हृदय से संपर्क नहीं होना चाहिए। प्रिय विषयों की इच्छाओं से हृदय भर गया तो अशांति, क्लेश और संताप से भर जाओगे!

कहीं भी हृदय से बंधना नहीं! निर्बंधन रहो। बाह्यदृष्टि से भले बंधन दिखे दुनिया को, हम को निर्बंधन रहने का! अशक्य नहीं है यह बात। आन्तरिक पुरुषार्थ से संभवित है, शक्य है। मिथिला के राजा जनक का एक प्रसंग याद आता है। जनक 'विदेह' कहलाते थे। देहधारी थे, फिर भी 'विदेह' कहलाते थे। इसका अर्थ समझा तू? दुनिया उनको देहधारी देखती थी, जनक स्वयं **'यह देह मैं नहीं हूँ, देह से भिन्न सच्चिदानंद स्वरूप आत्मा हूँ मैं।'** ऐसा मानते थे, समझते थे। उनको आत्मानुभूति हुई थी। इसको 'भेदज्ञान' कहते हैं। जनक राजा थे, राज्य को संभालते थे, प्रजा का पालन करते थे, अपने सभी कर्तव्यों का भी पालन करते थे। परन्तु उनका हृदय था निर्लेप और निःसंग।

एक बार मिथिला में एक विद्वान संतपुरुष आए। संत अच्छे प्रभावशाली प्रवक्ता थे। हजारों नगरजन उनका प्रवचन सुनने जाते थे। संतपुरुष की एक विशेषता यह थी कि वे प्रवचन देना तब शुरू करते थे, जब महाराजा जनक पधारते थे! यदि जनक देरी से आते तो प्रवचन देरी से शुरू होता, यदि समय पर आते तो प्रवचन समय पर शुरू हो जाता। दूसरे श्रोताओं को यह पद्धति अखरती थी। आपस में लोग संतपुरुष की इस आदत की आलोचना भी करते थे। संत को श्रोताओं की मनःस्थिति का ज्ञान था।

एक दिन की बात है। संत का प्रभावशाली प्रवचन हो रहा था, महाराजा जनक और नगरवासी हजारों लोग ज्ञानगंगा में निमग्न थे। अचानक दो आदमी दौड़ते हुए प्रवचन मंडप में घुस गए और जोर से चिल्लाए : 'दौड़ो...दौड़ो... नगर में भयंकर आग लगी है! महाराजा के अंतःपुर में भी आग लगी है...!'

सभी लोग घबराए और उठ-उठकर भागने लगे। सारा प्रवचन मंडप खाली हो गया...मात्र महाराजा जनक बैठे रहे, वे नहीं गए। संत का प्रवचन चलता रहा। लोग सब अपने-अपने मुहल्ले में पहुँचे। देखा तो आग का नामोनिशान नहीं था! लोगों ने सोचा कि 'उन दो पुरुषों ने अपना उपहास किया...।' धीरे-धीरे लोग प्रवचन मंडप में आने लगे। जब प्रवचन पूर्ण हुआ, संत ने जनक को पूछा :

'आग लगने के समाचार सुनकर ये सब लोग चले गए, आप क्यों नहीं गए? आप के अन्तःपुर में भी आग लगने के समाचार दिए थे उन पुरुषों ने।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महाराजा जनक ने प्रत्युत्तर दिया : **'हे महात्मन्, जब मैं यहाँ आता हूँ, जूता बाहर उतार कर आता हूँ, वैसे ममता भी बाहर उतार कर आता हूँ। किसका महल? किसका अन्तःपुर? किसका परिवार? मैं जो हूँ इस पार्थिव दुनिया से भिन्न हूँ। इस शरीर से भी भिन्न हूँ। गुरुदेव, जो मेरा नहीं है, जो मैं नहीं हूँ, वह जल भी जाए तो मुझे क्या? मेरा कुछ भी जलता नहीं है। फिर मैं क्यों जाऊँ यहाँ से?'**

संत प्रसन्न हो गए। उन्होंने दूसरे श्रोताओं को कहा : 'अब आप लोग समझ गए होंगे कि मैं, महाराजा जनक के आने के बाद ही प्रवचन क्यों शुरू करता हूँ।' लोग नतमस्तक हो गए।

जनक ने अपना हृदय कैसा निःसंग बनाया होगा? हम को अपना हृदय वैसा निःसंग और निर्लेप बनाना होगा, तभी शांति, स्वस्थता और प्रसन्नता का अनुभव कर सकेंगे। जनक की बात यदि बहुत पुरानी लगती हो और अंतरात्मा को स्पर्श नहीं करती हो तो दूसरा उदाहरण तेरे सामने है।

सिनेमा और नाटक में काम करने वाले अभिनेता और अभिनेत्रियाँ होती है न? मंच पर वे लोग सब प्रकार का अभिनय करते हैं, परन्तु उनका हृदय बिल्कुल निर्लेप रहता है! वे लोग हँसते हैं और रोते हैं, क्या उनका हृदय हँसता है? रोता है? नहीं, हँसने का मात्र अभिनय! रोने का मात्र अभिनय! वे लोग 'मंच' पर शादी भी करते हैं और मर भी जाते हैं! क्या वे हृदय से शादी करते हैं? मृत्यु की वेदना हृदय अनुभव करता है क्या? नहीं, शादी का मात्र अभिनय! मरने का भी अभिनय! देखने वालों के हृदय पर भले आघात हो, अभिनेता के हृदय पर कोई आघात नहीं!

यह संसार एक रंगमंच है, 'स्टेज' है। उस पर हम भिन्न-भिन्न प्रकार के अभिनय कर रहे हैं! जन्म-जीवन और मृत्यु... सब अभिनय है। वास्तविकता कुछ नहीं!

उपाध्याय श्री यशोविजयजी ने 'ज्ञानसार' में कहा है :

पश्यन्नेव परद्रव्यनाटकं प्रतिपाटकं।
भवचक्रपुरस्थोऽपि नामूढः परिखिद्यते।।

'संसार की गली-गली में परद्रव्यों का नाटक देखो! देखते ही रहो! दर्शक बने रहो! आपको क्लेश नहीं होगा!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुझे यह तत्त्वज्ञान इतना अच्छा और वास्तविक लगा है कि मैं तुझे किन शब्दों में लिखूँ? इसकी प्रशंसा के शब्द मेरे पास नहीं हैं। मुझे बता, यह संसार एक नाटक नहीं है तो क्या है? एक अभिनेता अपने जीवन में जितने अभिनय करता है, उससे अनेक ज़्यादा अभिनय जीवात्मा करता है। फर्क इतना है कि जीवात्मा को ज्ञान नहीं है कि वह अभिनय कर रहा है। अभिनेता को ज्ञान होता है कि वह अभिनय कर रहा है। जीवात्मा जो कुछ करता है वास्तविक मान, कर करता है।

संसार में क्या वास्तविक है? आत्मा के अलावा सब मिथ्या है, असत् है, काल्पनिक है। **'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या!'** वेदान्त का यह सूत्र इस संदर्भ में कितना सत्य और परिपूर्ण है। जगत् को मिथ्या समझो, असत् समझो। एक अभिनेता सम्राट अशोक बनकर नाटक के रंगमंच पर आता है, दर्शकों की दृष्टि में वह सम्राट अशोक होता है, परन्तु वह स्वयं अपने आपको समझता है कि वह कौन है। वह अपने आपको 'सम्राट अशोक' सत्यरूप में नहीं मानता है, इसलिए परदे के भीतर जब वह जाता है, तो बिना हिचकिचाहट के सम्राट की वेशभूषा उतार देता है। यदि उसको बाद में भिखारी का अभिनय करना होता है, तो वह भिखारी बनकर रंगमंच पर जाएगा। उसके दिल में कोई रंज नहीं होगा।

हम तो सच्चिदानंद स्वरूप आत्मा हैं। हम मानवरूप में अभिनय कर रहे हैं, दूसरे जीव, कोई पशुरूप में, कोई नारकरूप में, कोई देवरूप में अभिनय कर रहे हैं। अपने में से कोई पिता का, कोई माता का, कोई पुत्र का, कोई पति का, कोई पत्नी का... अभिनय कर रहा है। कोई धनवान का, कोई गरीब का, कोई बलवान का, कोई निर्बल का... अभिनय कर रहा है। सच कुछ भी नहीं है, सच है मात्र आत्मा!

यदि यह दृष्टि खुल जाये तो ही हृदय निर्लेप और निःसंग रह सकेगा। हृदय से निर्लेप और निःसंग रहने के लिए यह चिन्तन सतत करना होगा। बन गया हृदय निर्लेप, बस, फिर दुनिया में कुछ भी हो जाए! कैसा भी खून-खराबा पिक्चर में आए, हम को क्या होता है? कुछ नहीं। वैसे दुनिया में कुछ भी हो जाये, अपने शरीर को कोई जला भी दे, अपना सारा परिवार नष्ट हो जाये, सारी सम्पत्ति चली जाये, कुछ भी हो जाये, निर्लेप और निःसंग हृदय दुःखी नहीं होगा।

अशुद्ध हृदय, जड़संगी और विषवासना से लिप्त हृदय ही दुःखी और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अशांत बनता है। प्रिय आत्मन्! आज मैंने नई ही बात तुझे लिखी है। तेरे प्रश्न के अनुसन्धान में जो मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ्य, इन भावों पर लिखना है, सो आगे लिखूँगा। लिखने का 'मूड' भी अब धीरे-धीरे आ रहा है। चिन्तन खूब चल रहा है। अभी कुछ समय सागर किनारे के रमणीय प्रदेश में आह्लादक वातावरण में व्यतीत हो रहा है।

तेरी कुशलता चाहता हूँ।

१६-२-७७

- श्री प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *निःसंग, निर्लेप और अनासक्त हृदय में शुष्कता या रुक्षता नहीं होती... वहाँ पर करुणा की आर्द्रता रहती है...स्नेह की सिक्तता रहती है!*
- *एषणा और एतराजी हमेशा स्वार्थ व शोषण का ताना-बाना बुनते रहते हैं!*
- *मैत्री का अर्थ है, औरों के हित की चिन्ता करना। दूसरों की भलाई के बारे में मात्र सोचना ही नहीं... वरन् प्रयत्न भी करना।*
- *सहनशीलता एवं समर्पण की सुदृढ़ नींव पर ही मैत्री का महल स्थिर रह सकता है।*
- *कामनारहित, स्पृहारहित और इच्छारहित हृदय से ही मैत्री का रिश्ता रचाना संभव हो सकेगा।*

पत्र : १४

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला।

गतानुगतिक जीवन व्यतीत करने वालों के लिए यह मार्गदर्शन नहीं है। मात्र वैषयिक और काषायिक जीवनयापन करने में आनंद मानने वालों के लिए यह प्रेरणा-स्रोत नहीं है।

निःसंग और निर्लेप जीवन के विषय में एक भ्रमणा फैली है कि 'वैसा जीवन शुष्क होता है, वैसे जीवन में कोई आनंद नहीं होता।' यह मात्र भ्रमणा है, मिथ्या कल्पना है। निःसंग और निर्लेप हृदय में शुष्कता नहीं होती है, परंतु करुणा होती है, आर्द्रता होती है। वहाँ निराशा नहीं होती है, परंतु जीवमैत्री का दिव्य आनंद होता है। तू स्थिर चित्त से गहराई में जाकर सोचेगा तो ही यह बात समझ में आएगी। अच्छा, क्षणभर मान लें कि निःसंग और निर्लेप जीवन में मजा नहीं आता है, तो क्या रागपूर्ण और आसक्ति पूर्ण जीवन में मजा आता है? राग और आसक्ति कितना मानसिक तनाव पैदा करती है, क्या मुझे बताना पड़ेगा? दुनिया क्यों दुःखी है? क्यों हर व्यक्ति दुःख और अशांति की शिकायत करता है? सुखों के प्रति राग है, प्राप्त सुखों में प्रगाढ़ आसक्ति है। दुःखों के प्रति द्वेष है और दुःखों की कल्पना का भय है। इसी से मनुष्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुःखी है। मानना ही पड़ेगा। इसलिए निःसंग और निर्लेप हृदय से जीवन व्यतीत करने को कहता हूँ।

संसार के जीवों के प्रति मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ्य भाव भी ऐसे ही हृदय में जागृत होते हैं। निःसंग और निर्लेप हृदय में ही दूसरे जीवों के हित का, सुख का विचार आ सकता है। चूँकि उनका स्वयं का कोई स्वार्थ नहीं होता, स्वयं की कोई एषणा नहीं होती। जिसको स्वयं का हित साधना होता है, वह दूसरे जीवों का हित-विचार नहीं कर सकता।

मैत्री की अनिवार्य शर्त है, परहितचिन्ता। दूसरे जीवों का अहित न हो, यह भी हितचिन्ता ही है। 'मेरे से किसी भी जीव का अहित न हो,' यह भावना निर्मोही और असंगी आत्मा में ही जागृत हो सकती है। **मोहान्ध और पुद्गलसंगी जीव तो अपने ही सुखों का विचार करता है। अपने ही स्वार्थ साधने का सोचता है।** इसका अर्थ यह है कि मैत्रीभाव... सच्चा मैत्रीभाव निर्मोही और असंगी हृदय में ही जागृत होता है।

श्रेष्ठी सुदर्शन का हृदय ऐसा ही होना चाहिए, अन्यथा रानी अभया को बचाने के लिए कलंक और सजा अपने पर नहीं लेते। अभया ने सुदर्शन को संकट में डाल दिया था। सुदर्शन का अपहरण करवाया था और अपने महल में, रात्रि के समय अभया ने सुदर्शन से कामक्रीड़ा की प्रार्थना की थी। जब सुदर्शन मौन रहे, निर्विकार रहे, अभया ने स्त्रीचरित्र आजमाया... हो-हल्ला कर दिया और सुदर्शन को सैनिकों से पकड़वा दिया। सारे नगर में सुदर्शन श्रेष्ठी का नाम था। नगर में सुदर्शन की निन्दा होने लगी। सुदर्शन को राजसभा में राजा के सामने खड़े कर दिए गए। राजा ने कहा : 'सुदर्शन, आप महान श्रावक हैं। आप के प्रति मेरे हृदय में स्नेह और श्रद्धा है। आप कभी असत्य नहीं बोलते। कहिए, इस बात में सत्य क्या है। आप जो कहेंगे, मैं उसे ही सत्य मानूँगा।'

सुदर्शन ने सोचा : यदि मैं सत्य बात कह दूँगा तो रानी अपराधिनी सिद्ध होगी। कामवासना-परवश रानी ने सब कुछ किया है... **मोहवासना में जीव अन्धा हो जाता है।** अन्धा मनुष्य कभी भी गिर जाता है... उसमें ज्ञान भी नहीं है। राजा रानी को शूली पे लटका देगा... आर्तध्यान और रौद्रध्यान में रानी मरेगी... मर कर दुर्गति में चली जाएगी.. दुःखी-दुःखी हो जाएगी..। नहीं, नहीं, मैं उसका नाम नहीं दूँगा.. अपराध को मौन स्वीकार कर लूँगा..'

सुदर्शन का हृदय निःसंग और निर्लेप था, इसलिए उनको अपने जीवन का, अपनी पत्नी का, पुत्रों का विचार नहीं आया... अपराधिनी रानी का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विचार आया! 'वह मरकर दुर्गति में न चली जाये...' 'रानी का अहित न हो'- यह विचार आया। यदि हृदय में अपने सुखों की ममता होती, अपने जीवन के प्रति मोह होता तो उनको दूसरा ही विचार आता! 'राजा पूछता है तो मुझे सच-सच बता देनी चाहिए... मैं क्यों झूठ बोलूँ? रानी ने मेरे साथ घोर अन्याय किया है... मैं निर्दोष हूँ... मेरे ऊपर झूठा कलंक मढ़ दिया...भले वह अपने पाप का फल भोगे... चढ़ने दो शूली पे...।' ऐसा एक भी विचार सुदर्शन को नहीं आया। कैसे आता? **निःसंग और निर्लेप हृदय वाले मनुष्यों के विचार दिव्य होते हैं, निराले होते हैं। उसकी मैत्री अद्वितीय और पवित्रतम होती है।**

सहनशीलता और समर्पण की सुदृढ़ नींव पर मैत्री का महल टिक सकता है। खड़ा रह सकता है। सुदर्शन की सहनशीलता कितनी अपूर्व थी? उनका समर्पण कितना भव्य था? अभया के हित का विचार उनके एक-एक आत्मप्रदेश में व्याप्त हो गया था। राजा ने शूली पर चढ़ने की सजा सुनाई.. सुदर्शन शूली पर चढ़ने चल दिये... उस दृश्य को कल्पना में लाकर देखो तो सही... उनके हृदय में मैत्रीभाव का महासागर हिलोरे ले रहा होगा... उनके मुख पर तेज चमक रहा होगा... उनके एक-एक कदम में दृढ़ता और वीरता प्रतीत होती होगी। अपराधिनी ऐसी रानी के प्रति ऐसा मैत्रीभाव? निरपराधी के प्रति अपने हृदय में ऐसा मैत्रीभाव प्रकट होता है? **दूसरे जीवों का अहित न हो, ऐसा विचार आता है? जीवमात्र के प्रति प्रेम जागृत हुए बिना मैत्री कैसी होगी?**

किसी का भी मित्र बनने का दावा करने से पूर्व अपने हृदय को टटोलना। हृदय स्पृहारहित, कामनारहित, ममतारहित बना है? यदि ऐसा हृदय नहीं है, तो तू दूसरों को मित्र के रूप में धोखा ही देगा। जहाँ तुझे तेरा हित नहीं दिखेगा, तेरा कोई स्वार्थ नष्ट होता हुआ देखेगा, मित्रता हवा बन कर आकाश में उड़ जाएगी। मित्र बनाने की भी यह दृष्टि अपनाना। असंख्य कामनाओं से और स्पृहाओं से भरे हुए मनुष्यों को यदि मित्र बनाए और विश्वास कर लिया तो बुरी तरह फँस जाएगा। परंतु तू भी किसी न किसी स्वार्थ से प्रेरित होकर मित्रता चाहता है न? तेरा हृदय निःस्वार्थ कहाँ है? है हृदय निःस्वार्थ? तेरी इच्छाएँ, तेरी वासनाएँ जो पूर्ण करते हैं, वे मित्र!

जिसको 'प्रेम' कहा जाता है, वह प्रेम निर्मोही और निःसंग हृदय में ही हो सकता है। प्रेम का एक रूप है मैत्री, दूसरा रूप है करुणा, तीसरा रूप है प्रमोद और चौथा रूप है माध्यस्थ। ये चारों भाव प्रेम के ही विभिन्न रूप हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रेम के बिना ये चारों में से एक भी भाव टिक नहीं सकता। प्रेम विराट है। कोई एक-दो या पाँच-पचास व्यक्ति में सीमित नहीं रह सकता। जीव मात्र के प्रति प्रेम फैलता है। प्रेम का क्षेत्र है, संपूर्ण ब्रह्मांड, परिपूर्ण जीव राशि।

सौराष्ट्र में 'मस्तराम' नाम के एक संत हो गए। उनके शरीर में एक फोड़ा हुआ। फोड़े में असंख्य कीड़े पड़ गए। उनको वेदना होती थी परन्तु ज़्यादा चिन्ता होती थी उन असंख्य कीड़ों की। 'ये बेचारे भूखे मर जाएँगे..' इसलिए वे बेसन-चने का आटा लाकर उस फोड़े में भरते थे। मस्तरामजी की ज्ञानदृष्टि उन कीड़ों में भी 'आत्मा' का दर्शन करती थी। उन कीड़ों के प्रति प्रेम था। उस प्रेम में वे अपनी शारीरिक वेदना भूल गए! वेदना की अनुभूति होने पर सहनशीलता का सहारा लेते। कोई औषध-उपचार नहीं करवाया। किसी भक्त को फोड़ा बताया भी नहीं। परन्तु भावनगर के महाराजा तख्तसिंहजी मस्तरामजी के परम भक्त थे। उन्होंने अंग्रेज सर्जन के द्वारा, मस्तरामजी को बेहोश करके, फोड़े का ऑपरेशन करवा दिया! जब मस्तरामजी होश में आए.. और उनको मालूम हुआ कि फोड़े को काट दिया गया है और सब कीड़े मार दिए गए हैं... उनको इतना गहरा आघात लगा कि तुरन्त ही उनकी मृत्यु हो गई।

जिनके प्रति सच्ची मैत्री या करुणा होती है, उनके दुःख से दुःखी हुए बिना नहीं रह सकता। उनका दुःख दूर करने का प्रयत्न हुए बिना नहीं रहता। स्वयं दुःख सहन करके भी दूसरों का दुःख दूर करने का प्रयत्न हो ही जाता है! प्रेम करवाता है वह प्रयत्न। चैतन्य के प्रति प्रेम, जीवत्व के प्रति प्रेम तेरे हृदय को आनंद से परिपूर्ण कर देगा, प्रयोग करके देखना।

हृदय को निःसंग और निर्मोही बनाने का प्रयत्न करेगा? उस प्रयत्न में अनित्य, अशरण, एकत्व, अन्यत्व और अशुचि आदि बारह भावनाओं का प्रतिदिन चिंतन करना। इस चिंतन में **'शांत सुधारस'** नाम का संस्कृत गेय महाकाव्य तेरे लिए उपयोगी बनेगा। इसका गुजराती एवं हिन्दी भाषा में अनुवाद-विवेचन भी छप गये हैं।

स्वास्थ्य अनुकूल है। इन दिनों में परमात्मतत्त्व के प्रति विशेष आकर्षण और शरणभाव प्रगट हो रहा है। मन की प्रसन्नता बढ़ती जाती है। तेरी कुशलता चाहता हूँ।

९-३-७७

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *दुःखों से डरकर पलायन कर जाना... कोई बुद्धिमत्ता या सुज्ञता नहीं है... समताभाव में रचपच कर दुःखों का और प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना, यही वीरता की निशानी है।*
- *कल्पनाओं का ही नहीं वरन् वास्तविक स्वर्ग भी तो अल्पजीवी होता है... फिर उसका भी आकर्षण क्या?*
- *अक्सर प्रतिकूल स्थिति में प्राण परमात्मा का नैकट्य पाने के लिए पूरी तरह विह्वल हो उठते हैं!*
- *निर्वैर भाव की साधना-आराधना अनिवार्य है इस जीवन में! इसके बिना मैत्री का भाव स्थिर बनना असंभव है।*
- *परमात्मा के अचिन्त्य अनुग्रह के लिए अंतःकरण से प्रार्थना करते रहना... यही एक सहारा है, दुनियादारी के जलते रेगिस्तान में जीने के लिए!*

पत्र : १५

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला।

पत्र लिखने में विलंब हो ही गया! तेरी शिकायत उचित है... मुझे पत्रलेखन में विलंब नहीं करना चाहिए, मैं मानता हूँ। अब मेरा यह प्रयत्न रहेगा कि विलंब न हो। पत्र लिखते-लिखते तेरी निर्दोष और स्नेह पूर्ण मुखाकृति मेरे सामने साकार बन जाती है, हृदय प्रसन्नता से भर जाता है।

तेरे सामने अपार पारिवारिक समस्याएँ हैं, फिर भी तू उदासीन भाव में अपने कर्तव्यों का पालन कर रहा है और परमात्मतत्त्व के प्रति भक्तिपूर्ण बनता जा रहा है... यह जानकर मैं प्रसन्न हो गया। तेरी ज्ञानपूत सहनशीलता की कितनी सराहना करूँ? तेरा पत्र पढ़ते-पढ़ते मेरा मन तीव्र उद्वेग से भर गया था और 'घर छोड़कर मेरे पास चले आने का' लिखने की प्रबल इच्छा हो आयी थी, परन्तु मैंने सोचा कि इस प्रकार दुःख-भय से भागना उचित नहीं। इसमें बुद्धिमत्ता नहीं, ज्ञान का मार्ग नहीं। दुःखों से दूर भागने की इच्छा ही कमजोरी है। दुःखों को समताभाव से सहन करने में वीरता है। सचमुच तूने वीरता की मुझे प्रतीति करा ही दी!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तू लिखता है कि 'उसके प्रति अब मैत्रीभाव जागृत नहीं होता है... कभी-कभी मन में उसके प्रति घृणा हो जाती है...।' मनुष्य स्वभाव में यह सब होना स्वाभाविक है। अपने प्रति तिरस्कार करने वालों के प्रति, अपना तेजोवध करने वालों के प्रति, अपनी कटु आलोचना करने वालों के प्रति मैत्री का, प्रेम का भाव टिकना अति मुश्किल है। उनके प्रति घोर घृणा होना भी अस्वाभाविक नहीं। उनके साथ जीवन व्यतीत करना भी यातनापूर्ण लगता है। तेरे प्रति वात्सल्य और स्नेह होने से, तुझे इस प्रकार की यातनाओं से मुक्त करने की प्रबल इच्छा हो जाती है। परन्तु जब मैंने थोड़े दिन पूर्व सोचा तो मेरे मन में विचार आया कि 'क्या मैं उसको अपने पास बुला लूँ तो उसकी यातनाओं का अन्त आ जाएगा? मानसिक वेदनाओं से मैं उसको मुक्त कर सकूँगा? उसके उजड़ते जीवन को हराभरा बना सकूँगा? यदि हाँ, तो यहाँ क्या कभी भी उसके मन में विकल्प पैदा नहीं होंगे? यहाँ कभी भी मानसिक व्यथा पैदा नहीं होगी? यदि होगी तो फिर वह कहाँ जाएगा?' ऐसे तो अनेक विचार आए! खैर, तू यदि मेरे पास आ जाये तो मैं विशेष रूप से सहयोगी बन सकूँगा और तेरी मानसिक दुनिया को बदल भी दूँगा..परन्तु अभी क्या यह संभव है? ठीक है, थोड़े दिनों के लिए तू आ सकता है, फिर भी वहाँ जाना पड़ेगा न? न चाहते हुए भी जाना पड़ेगा न? मनुष्य के जीवन में ऐसा होता ही रहता है।

तू जानता है कि वह अभी सुधरने वाला नहीं है। उसका स्वभाव भी सुधरने वाला नहीं है। तेरे प्रति उसकी जो दोषदृष्टि बनी हुई है, वह मिटने वाली नहीं है। उसकी बुरी आदतें सुधरने वाली नहीं हैं...ऐसी परिस्थिति में तुझे जीवन जीना है! तू जीवन जी रहा है! लाख-लाख धन्यवाद है तुझे! तेरा कहना यथार्थ है कि 'रहने को बड़ा बंगला है, दो-दो कार, खर्च करने को पैसे हैं, मनचाहे वस्त्र मिल सकते हैं...घर में नौकर हैं... यह सब होते हुए भी मैं अपने आपको दुःखी और अशांत महसूस करता हूँ... मुझे यह वैभव नहीं मिलता तो कोई अफसोस नहीं होता...मनवांछित स्नेह और सद्भाव, त्याग और समर्पण मिल जाता तो...'

तो क्या होता? तुझे स्वर्ग मिल जाता, शायद? परन्तु मोक्ष नहीं मिलता। स्वर्ग भी तो क्षणिक है न! स्वर्ग शाश्वत नहीं! मोक्ष-मुक्ति शाश्वत है। जब तक बंधनों में सुख की कल्पना बनी हुई है तब तक मुक्ति प्रिय नहीं लगती। तू यह विचार कर कि यदि तेरे परिवार के सदस्यों का प्रेम तुझे मिलता तो तू परमात्मा के प्रेम को पाने का इतना प्रयत्न करता? परमात्मभक्ति में इतनी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लीनता आती? आज तू जिस प्रकार दर्दपूर्ण हृदय से और अश्रुपूर्ण नयनों से परमात्मा को पुकारता है, क्या यह संभव होता?

उसके प्रति घृणा नहीं, वैर नहीं, परन्तु निर्वैरभाव बनाए रखना है। भले मैत्री या स्नेह जागृत न हो, निर्वैरभाव जागृत कर ले। 'मुझे उसके प्रति कोई रोष नहीं है, शिकायत नहीं है, वह भी कर्माधीन मनुष्य है। वह कर्मप्रेरित होकर भूल कर रहा है, उसकी आत्मा का कोई दोष नहीं है। क्या मेरे पापकर्मों का उदय तो उसकी भूलों में निमित्त नहीं होगा? मेरे मन में उसके प्रति कोई वैरभावना नहीं चाहिए।' इस प्रकार की विचारधारा तेरे आत्मभाव को निर्मल बना देगी।

उस महासती अंजना का जीवनचरित्र तूने पढ़ा है न? बाईस-बाईस वर्ष तक पति पवनंजय का विरह सहन करने वाली उस अंजना के हृदय में पवनंजय के प्रति कोई रोष नहीं हुआ! पवनंजय के हृदय में अंजना के प्रति घोर घृणा थी, तिरस्कार था, परन्तु अंजना का हृदय निर्वैर था। अंजना भी मानव स्त्री थी न? वह भी संसारी नारी थी। संसार के वैषयिक सुखों की कामना से तो उसने पवनंजय से शादी की थी, यानी वह कोई विरक्त साध्वी नहीं थी। ऐसी राजकुमारी अंजना ने, उसका त्याग कर देने वाले पति के प्रति २२-२२ वर्ष तक कोई शिकायत नहीं की थी, कोई द्वेष नहीं किया था।

यह संभवित बात है, असंभवित बात नहीं है। ज्ञानदृष्टि खुलने पर यह संभव है। निर्वैरभाव की आराधना जीवन में अति आवश्यक है। जीवन में तप है, त्याग है, शील है, शास्त्रज्ञान है परन्तु निर्वैरभाव नहीं है तो भवसार में डूब जाएँगे। दुर्गतियों में चले जाएँगे। तप-त्याग और संयम हमें बचा नहीं सकेगा। दान-शील हमारी रक्षा नहीं कर सकेगा। उस समरादित्यकेवली चरित्र में अग्निशर्मा का पात्र आता है न? इतना उग्र तप करने वाला, इन्द्रियनिग्रह करनेवाला, अनेक व्रतनियम धारण करने वाला वह अग्निशर्मा क्यों भवसागर में डूब गया? वैरभाव ने उसको दुर्गति में पटक दिया। राजा गुणसेन के प्रति वैरभाव जागृत हो गया, गुणसेन को वह क्षमा नहीं दे सका, भटक गया संसार के बीहड़ जंगल में।

हाँ, अपनी कोई भूल नहीं है, सामने वाले की भूल है, फिर भी उसके प्रति वैरभाव नहीं रखना है। वैरभाव की भूल नहीं हो जाये, इस बात की प्रतिपल जागृति रहनी चाहिए। उसके प्रति भले प्रेम न हो, भले मैत्री न हो, परन्तु निर्वैरभाव तो चाहिए ही। अपराधी का हम हित नहीं कर सकें, चलेगा, अहित तो नहीं करें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा गुणसेन जागृत था, उसको खयाल था कि अग्निशर्मा उसके प्रति घोर द्वेष धारण किए बैठा है, फिर भी गुणसेन ने उसके प्रति द्वेष नहीं किया।

इससे गुणसेन आत्मविकास करते रहे और नौवें भव में सर्वज्ञ-वीतराग बन गए! भवसागर को तैर गए।

प्रिय मुमुक्षु, तेरी वर्तमान परिस्थिति में इतनी जागृति होना अति आवश्यक है। तेरी सहनशीलता निर्वैरभाव से ज़्यादा दृढ़-निश्चल बनेगी। तेरी मानसिक दुनिया सुखपूर्ण बनेगी। मेरे इस पत्र का अर्थ यह मत समझना कि मैं तुझे अपने पास रखना नहीं चाहता। मैं तो चाहता हूँ कि तू मेरे पास ही रहे। मेरे पास रहने से मुझे बहुत प्रसन्नता रहेगी, और जब परमात्मा का अचिन्त्य अनुग्रह होगा तब तू मेरे पास आ ही जाएगा! तुझे कोई नहीं रोक सकेगा। तू जब चाहे तब मेरे पास आ सकता है। मेरे हृदय के द्वार तेरे लिए खुले ही हैं।

तेरे पास समय है, तू समय का सदुपयोग कर। कुछ तत्त्वज्ञान की पुस्तक पढ़ ले। कुछ लिखना भी चालू कर। तू 'ग्रेज्युएट' है, अच्छा लिख सकता है। तेरे विचारों को लिख कर मेरे पास भेजता रहे। उस व्यक्ति के विचार ही नहीं आएँगे तेरे मन में। अच्छा, तू तो गीत भी लिखता है न? परमात्मभक्ति के कितने अच्छे गीत लिखे हैं तू ने? मेरे पास भेजना वे गीत, मैं भी गाऊँगा उन गीतों को। तेरा बनाया हुआ गीत मैंने एक भाई के कंठ से सुना है! बहुत प्यारा लगा था वह गीत।

तेरी प्रसन्नता बनी रहे, यही मेरी हार्दिक कामना।

२४-४-७७,

झगडीया तीर्थ

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जिन्दगी कभी भी बोझ न बने... तनाव या खिंचाव का शिकार न बने... इस तरह अपने आपको समझा लेना चाहिए।*
- *जीवन का रस सूखना नहीं चाहिए... जीवन एकाध पल भी नीरस या शुष्क नहीं हो जाना चाहिए। जीवन का हर एक पल रसानुभूति से सराबोर रहे यह ज़रूरी है!*
- *किसी भी प्रकार का व्यसन नहीं चाहिए। व्यसनों की गुलामी में फँस कर आदमी अपने आपको दुःखी एवं अशांत बना डालते हैं!*
- *किसी के भी साथ बातचीत करते समय वादविवाद में नहीं उलझना चाहिए! संवाद में मजा है... इसके लिए अपनी ही बात का आग्रह खतरा बन जाता है।*

पत्र : १६

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

वहाँ पहुँचने के पश्चात तेरा लिखा हुआ पत्र मिला। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है, विहारयात्रा निराबाध रही है। तू मेरे पास आया और चला गया... तेरी उद्विग्न आत्मा प्रशांत बनी, तेरा संतप्त मन शीतल बना, बस, मैं यही चाहता हूँ। जीवन बोझिल नहीं बनना चाहिए, भाररूप नहीं बनना चाहिए। कोई तनाव नहीं! कोई तीव्रता नहीं!

तेरे जाने के बाद एक साधक पुरुष मिले। करीबन २० वर्ष से उन्होंने संसार त्याग कर, त्यागमय जीवन जीना प्रारम्भ किया। वे त्यागी हैं, वे वैरागी भी हैं, वे तपस्वी भी हैं...परन्तु जब उनसे मेरी बात हुई...रात के दो बजे तक हम बातें करते रहे, उनका हृदय भारी-भारी था! उनका मन संतप्त था! उनको अनेक शिकायतें थीं, उनकी अपनी कई आकांक्षाएँ थी, जो, अपूर्ण थी'...इससे वे बेहद अशांत थे! जीवन... त्यागमय जीवन भी उनको भार रूप बन गया था! मुझे लगा कि वे जीवन को घसीट रहे थे... उनका जीवन स्वाभाविक नहीं था, अस्वाभाविकता को वे बनाए रखना चाहते थे। उनके पास रटे हुए कुछ ग्रन्थों का ज्ञान था परन्तु अनुप्रेक्षा से आत्मसात किया हुआ ज्ञान नहीं था। वे मानते थे कि उनके पास सम्यग्दर्शन है परन्तु वे किसी को भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सम्यग्दृष्टि से देख नहीं सकते थे! वे किसी व्यक्ति के विषय में गुणदृष्टि से सोच नहीं सकते थे। सहवर्ती साधकों की बाह्यक्रियाओं के आधार पर, बाह्य कार्यकलापों पर वे अपनी धारणा निश्चित कर लेते थे। सर्वत्र बुराई ही बुराई उनको नजर आती थी।

मैंने उनको एक किस्सा सुनाया : आपने मक्का और मदीना का नाम सुना होगा। मदीना में हुसेन बसराई नाम का फकीर प्रसिद्ध था। पहुँचा हुआ फकीर था। एक बार हुसेन फिरते हुए एक नदी के किनारे पहुँचे। नदी के किनारे एक युवा बैठा था, उसके पास एक प्रौढ़ा स्त्री बैठी थी। युवक के पास एक बोतल थी, बोतल वह पी रहा था। हुसेन एकटक उस पुरुष को देख रहे थे, उनके मुख पर घृणा के भाव आ गए। 'यह स्वयं शराब पीता है और महिला को भी शायद पिलाएगा...।' हुसेन फकीर थे, उनको शराब और शराबी के प्रति घृणा होना स्वाभाविक था। इतने में दूसरी घटना बनी नदी के प्रवाह में। एक नाव में सात व्यक्ति बैठकर नदी पार कर रहे थे, मार्ग में नाव उलट गई। सातों व्यक्ति डूबने लगे। उस युवक ने इस करुण दृश्य को देखा। उसका हृदय द्रवित हो गया। वह पानी में कूद पड़ा, तैरता हुआ आगे बढ़ा। डूबते हुए उन सात मनुष्यों में से छः मनुष्यों को उसने बचा लिया।

फकीर हुसेन देखते रह गए! इतने में उस युवक ने आकर हुसेन को कहा : ओ महापुरुष, तुम बड़े आदमी हो न? जाओ सातवें पुरुष को तुम बचा लो... कूद पड़ो पानी में! तुम अपने आपको बहुत उच्च पुरुष मानते हो...दूसरों को हल्की दृष्टि से देखते हो... तुमने मुझे शराबी समझा है न? फकीर, इस बोतल में शराब नहीं परन्तु नदी का पानी है और यह औरत दूसरी कोई नहीं है, मेरी माँ है! तुम भूल गए फकीर, कि तुम्हें अपने आपको उच्च नहीं परन्तु निम्नस्तर का मानना चाहिए। तुम अच्छे नहीं थे इसलिए फकीर बने हो न? अच्छे ही होते तो फकीर बनने की जरूरत ही नहीं थी।'

हुसेन नतमस्तक हो गए। उस युवक के चरणों में गिर गए। अपनी दोषदृष्टि का उनको ख्याल आ गया। जो मनुष्य अपने आपको संत, महात्मा, ज्ञानी... मानता है, वे दूसरों के प्रति हीन दृष्टि से देखता है... इससे उसका 'अहं' ही पुष्ट होता है। वह गिरता है। मैंने जब यह किस्सा सुनाया, वे विचार में पड़ गए। परन्तु मुझे कोई परिवर्तन की आशा नहीं है। ये महात्मा तो कुछ सरल हृदय के थे परन्तु गूढ़ हृदय वाले कई ऐसे 'महात्मा' हैं कि जो बोलते कुछ नहीं... परन्तु उनका जीवन बोझिल होता है। वे सहज-स्वाभाविक जीवन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीना पसंद ही नहीं करते! ऐसे कई दूसरे स्त्री-पुरुष भी दिखाई देंगे। जब दिमाग पर असह्य भार आ जाता है, तब ऐसे लोग 'पागल' बन जाते हैं या 'ब्रेन-हेमरेज' के शिकार बन जाते हैं। उस महात्मा की बात तो प्रासंगिक तुझे लिख दी, तेरे जाने के बाद तुरन्त वह घटना घटी थी इसलिए लिख दी। तुझे अपने हृदय को, मन को, मस्तिष्क को निर्बोझ रखना है, इसलिए मैंने जो-जो उपाय बताए हैं, उन उपायों को भूलना मत। जीवन का रस सूखना नहीं चाहिए। प्रतिकूलताओं से भरा हुआ जीवन भी नीरस नहीं बने, तो मानना कि ज्ञानदृष्टि प्राप्त हुई है। साधु जीवन स्वीकार करने में जो अनेक प्रकार की योग्यताएँ अपेक्षित होती हैं, उन योग्यताओं में यह भी एक महत्वपूर्ण योग्यता अपेक्षित है! प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जीवन नीरस नहीं लगे। खाली... खाली नहीं लगे। परन्तु वह सरसता भी वासनाजन्य नहीं होनी चाहिए, कषायजन्य नहीं होनी चाहिए। अपने श्रमणजीवन के शैशवकाल में मैंने एक महात्मा ऐसे देखे थे... उनको दूसरों की निन्दा करने में भरपूर रस मिलता था। जब देखो तब दोषदर्शन और दोषकथन! 'परवृत्तान्तान्धमूकबधिरः' नहीं थे वे, वे तो स्ववृत्तान्तान्धमूकबधिर थे। ज्ञानी पुरुषों ने दूसरों के लिए अन्ध, मूक और बधिर बने रहने को कहा है, वे अपने ही विषय में अन्ध, मूक और बधिर बने रहते थे! परन्तु जीवन उनका सरस था! वह रस था निन्दा का! दोषदर्शन का! मैं ऐसा सरस जीवन बनाने को नहीं कह रहा हूँ। गुणदर्शन का रस चाहिए। आत्मगुणों का रस चाहिए। जो रस अशुभ कर्मबन्ध नहीं कराए वैसा रस चाहिए। साधक यदि जागृत नहीं होता है तो विकथाओं का रस उसे खूब पसन्द आ जाता है। विकथाओं को तो तू जानता है न? स्त्री-कथा, भोजनकथा, देशकथा और राजकथा। आगे चलकर भक्तकथा, उपाश्रयकथा... वगैरह अनेक प्रकार की बातें चलती रहती हैं। बातें करने का भी एक मजेदार रस है। परन्तु यह रस अशुभ कर्मो का ऐसा प्रगाढ़ बंध करवाता है कि आत्मा का भविष्य दुःखमय बन जाये। यह रस ज्ञानोपासना का रस पैदा नहीं होने देता है। ध्यान में बाधक बन जाता है। जिस किसी मनुष्य को ज्ञान और ध्यान में लीन होना है, उसमें से रसानुभूति करना है उसको इन फालतू बातों में, अपना समय नहीं बिगाड़ना चाहिए, विकथाओं से दूर रहना चाहिए। चित्त में अनेक विकल्प पैदा करने वाली बातों से अलिप्त रहना चाहिए। तू संसारी है, तेरे लिए यह बात थोड़ी सी मुश्किल रहेगी। संसार में जहाँ भी जाओ... 'विकथा' सामान्य होती है। 'विकथा' कोई बुरी बात है - यह कोई नहीं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मानता! जानता भी है तो 'यह नियम तो साधुपुरुषों के लिए है'- ऐसा सोचकर मजे से विकथा का रस लूटते हैं। फिर जब विकथायें करने वाली 'कम्पनी' नहीं मिलती है तब वह 'नीरस' बन जाता है। बातें करने वाला कोई नहीं मिलता है तब वो ऊब जाता है। इसलिए इस विकथा के व्यसन में मत फँसना। व्यसनों के सहारे रसवृत्ति का पोषण करने वाले अपने आपको दुःखी और अशांत करते हैं। ताश खेलने का रस, सिनेमा देखने का रस... वगैरह बुरे व्यसन हैं। सात्त्विक प्रवृत्ति में रसानुभूति होनी चाहिए। मानो कि निवृत्ति में मजा नहीं आता है तो सत्प्रवृत्ति में मजा लो। क्रियात्मक धर्म का क्षेत्र भी विशाल है। तेरे पास तो गीतरचना की भी प्रवृत्ति है। परमात्मभक्ति के भावपूर्ण गीतों की रचना कर, उन गीतों को परमात्ममंदिर में मधुर कंठ से गाता रहे! खूब मजा आएगा। जब-जब फुरसत मिले, काव्य की दुनिया में चले जाना! आत्मसंवेदन के भी अनेक काव्य तू बना सकता है। तेरे हृदय के भावों को इस प्रकार अभिव्यक्ति कर सकता है। वैसे दूसरी प्रवृत्ति है - अच्छे तात्त्विक आध्यात्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करने की। भारतीय दर्शन के हजारों ग्रन्थ हैं। हर विषय के ग्रन्थ हैं। तुझे तो फिलोसोफी में रस है। अध्ययन के बाद रोजाना 'नोट्स' भी लिख सकता है। जब किसी सात्त्विक प्रकृति के विद्वान का संयोग मिले तब उनके पास जाकर विनम्रता से तेरी जिज्ञासाएँ भी संतुष्ट कर सकता है।

आगे बढ़कर कुछ मित्रों को एकत्र कर तात्त्विक चर्चा कर सकते हैं। जैसे, नवतत्त्वों में से एक-एक तत्त्व लेकर उस पर चर्चा कर सकते हो। इस चर्चा में एक सावधानी बरतने की होती है : विवाद में नहीं उलझना, विवाद का स्वरूप आ जाये कि चर्चा बन्द कर देना। विवादास्पद बात नोट कर लेना और किसी विद्वान से समाधान पा लेना। इससे मित्रता अखंड रहेगी और मित्रों को तत्त्वरसिक बनाए जाएँगे। तेरा जीवन रसमय बनता जाएगा।

जब दीर्घ समय का अवकाश मिले तब तीर्थयात्रा करने निकल जाना। प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर ऐसे कई पवित्र तीर्थधाम हैं, चले जाना उधर और मन को सात्त्विक आनंद से भर देना। आबू-देलवाड़ा, अचलगढ़, राणकपुर, तारंगाजी, नाकोडाजी... इत्यादि तीर्थधाम ऐसे हैं कि वहाँ मन... आत्मा...आनंद से भर जाते हैं। तीर्थयात्रा के विषय में कभी लिखूँगा विस्तार से।

फिर भी मन नहीं माने तो मेरे पास चले आना। ठीक है न? यहाँ तो तेरा तन-मन प्रफुल्लित हो ही जाता है। जीवन को मिथ्या कल्पित विकल्पों से

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बोझिल मत बनाना। प्रफुल्लित हृदय से जीवन के क्षण रसमय बनाना। हम बड़ौदा आए हैं, यहाँ दस दिन के 'शिविर' का आयोजन किया गया है। युवावर्ग का उत्साह सराहनीय है। युवावर्ग में तत्त्वजिज्ञासा जागृत होना उज्ज्वल भविष्य के प्रति इशारा नहीं है? तेरी कुशलता चाहता हूँ।

बड़ौदा,

२६-५-७७

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *मानव मन की यह कितनी बड़ी कमजोरी है : जो सुख उसके पास है... उसको वह महसूस नहीं करता...और जो सुख या सुख के साधन उसकी पहुँच के बाहर हैं...उस पर अपनी निगाहें जमाए रखता है...और मन ही मन दुःखी रहता है।*
- *जिन्दगी में बनती-बिगड़ती घटनाओं को बड़ी कठोरता से नहीं लेना चाहिए।*
- *अनेक काँटों के बीच खिला हुआ एक गुलाब हमारी आँखों में प्रसन्नता भर सकता है... पर अनेकों के प्रेम के बीच एकाध का दुर्व्यवहार हमें पीड़ा का शिकार बना डालता है...कितनी विचित्रता है यह!*
- *अतृप्ति हमें नए-नए सुखों के पीछे भटकाती है और आसक्ति मिले हुए सुखों में पागल बनाती है...।*

पत्र : १७

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

जब तेरा पत्र मिला तब आकाश में से उदासी टपक रही थी, राजमार्ग भी कुछ बेचैन से लगते थे और सामने ही एक निराशा में डूबा हुआ आदमी बैठा था, जो वातावरण को वेदनामय बना रहा था। जब तेरा पत्र पढ़ा... मुझे लगा कि वह दिन भी वैसा ही विषादग्रस्त था!

तेरा चित्त वेदना से कितना कराह रहा होगा... इसकी कल्पना करके मेरा हृदय भर गया है। कैसा संसार है! सर्वज्ञ परमात्मा ने संसार को जैसा दुःखमय बताया है, वैसा ही व्याधि-वेदनाओं से दुःखपूर्ण है। संसार के सुखों से भी दुःखों की शक्ति अपार है! मनुष्य के पास सौ सुख हों और एक दुःख हो, तो भी मनुष्य अपने आपको दुःखी मानता है! हाँ, सौ सुख होने पर भी वह अपने आपको सुखी नहीं मानता! सौ सुखों में से एक सुख चला जाता है... मनुष्य रोने लगता है! ९९ सुख पास होते हुए भी वह रोता है... बिलखता है! मात्र एक सुख चला गया... फिर भी!

मनुष्य मन की कैसी आदत है यह! जो सुख मनुष्य के पास होता है, उससे वह सन्तुष्ट नहीं रहता। जो सुख उसके पास नहीं होता है, वह सुख पाने के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिए सदैव चिन्ताग्रस्त रहता है! जो सुख चला गया उसको याद करता हुआ रोता है! बड़े-बड़े लोग रोयें हैं! भगवान अजितनाथ के भ्राता सगर चक्रवर्ती का एक सुख चला गया था... पुत्रसुख चला गया था... तब वे कितने बेचैन बन गए थे? श्री राम का चित्त कैसा विभ्रान्त हो गया था, जब लक्ष्मणजी की मृत्यु हो गई थी। महासती सीता ने कैसा कल्पान्त किया था, जब रावण उसका अपहरण करके ले जा रहा था। एक-एक सुख का अभाव मनुष्य को दुःखी कर देता है।

अभी-अभी थोड़े दिन पहले एक भाई मेरे पास आए थे, मेरे परिचित थे। उसके मुख पर ग्लानि थी। कुछ औपचारिक बातें होने के बाद उन्होंने कहा :

'महाराज साहब, अभी इन दिनों में बहुत अशांति है... कुछ उपाय बताइए।' मैंने पूछा : 'किस बात की अशांति है आपको?' मैं जानता था कि उनके पास चार-पाँच लाख रूपये हैं, बंगला है, कार है, मार्केट में दुकान है, दो लड़के हैं... पत्नी है... इज्जत है... फिर भी वह महानुभाव अशांति की शिकायत ले कर आए थे! उन्होंने कहा :

'दूसरा तो कोई दुःख नहीं है, पर लड़के अब मेरा कहा नहीं मानते! मेरा तिरस्कार कर देते हैं... मुझे घोर दुःख होता है।' उस पचपन साल के प्रौढ़ पुरुष की आँखें गीली हो गई... बात करते-करते।

'आप क्यों इस बात को इतनी Hard and Fast लेते हैं? मन पर इतना भार क्यों ढोते हो? आपकी धर्मपत्नी तो आपका कहा मानती है न? आपका नौकर आपका अपमान नहीं करते हैं न? समाज के लोग आपकी इज्जत करते हैं न? तो फिर आप क्यों अशांत बनते हो? दो लड़के भले आपका कहा न मानें! आप उन दोनों से बात ही मत करो। जो लोग आपसे अच्छा व्यवहार करते हैं उनसे बातें करो, हँसो और मन को हल्का करो।'

'परन्तु महाराज साहब, क्या बताऊँ आपको... जब वे लड़के मेरे सामने आते हैं...मेरे सामने देखते हैं...मुझे लगता है कि उनकी विषैली आँखें मेरा...' वे रो पड़े। मैंने उनको रोने दिया। दो तीन मिनट मैं मौन रहा। उन्होंने रोना बंद किया तब मैंने कहा :

'आप क्यों भूल जाते हो कि आपके पास कितने सुख हैं! आप उन सुखों का अच्छा उपयोग करें। एक सुख नहीं है तो कोई परवाह नहीं, दूसरे अनेक सुख हैं, आप इस पुण्योदय का उपयोग करें। हाँ, एक बात है, आप आत्मनिरीक्षण करें, यदि आपको अपनी कोई गलती मालूम पड़े तो उस गलती को दूर करने का प्रयत्न करें।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फिर तो एक घन्टे तक वार्ता चलती रही। वे हृदय में नया उल्लास और नई उमंगे भर कर गए। धर्मप्रवृत्ति में उनका मन स्थिर होने लगा। घर में दूसरों के मन भी प्रसन्न रहने लगे।

जो सुख हमारे पास नहीं, उस सुख का अभाव हमारे ऊपर इतना 'हावी' नहीं हो जाना चाहिए कि हम शून्यमनस्क बन जाएँ! हमारा मन अशांति से जलता रहे। मानसिक तनावों से हम हतप्रभ हो जायें। तेरी स्थिति भी कुछ ऐसी ही हो रही है, नहीं? एक व्यक्ति के दुर्व्यवहार से तू तंग आ गया है और घोर परेशानी अनुभव कर रहा है। तू विचार कर कि उस व्यक्ति के अलावा दूसरे कितने मनुष्यों का तुम्हारे प्रति स्नेह और सद्भाव है। अनेकों का स्नेह और सद्भाव तेरे हृदय को प्रसन्न नहीं कर सकता, एक व्यक्ति का दुर्व्यवहार तुम्हारे मन को परेशान कर रहा है। इस परेशानी से मुक्ति के लिए तुझे प्रयत्न करना चाहिए। परिस्थिति बदल सकती है। ऐसी ही परिस्थिति कायम रहने वाली नहीं है। 'कब तक ऐसी परेशानियाँ सहन करता रहूँगा?' ऐसा विचार नहीं करना चाहिए। तृप्ति और अनासक्ति का सहारा लेकर जीवनकाल को आनंद से व्यतीत करना है।

अतृप्ति और आसक्ति ही अपने मन को व्यथित करती है। तू स्थिर चित्त से सोचेगा तो यह बात तेरी समझ में आ जाएगी। ऐसा भी नहीं है कि अतृप्ति और आसक्ति से छुटकारा नहीं मिल सकता। मिल सकता है छुटकारा। अपना संकल्प चाहिए छुटकारा पाने का। तेरे लिए यह कार्य कठिन नहीं है। बाहरी प्रतिकूल संयोगों से छुटकारा पाने की बजाय अन्तरंग अतृप्ति और आसक्ति से छुटकारा पा लेना ज़्यादा श्रेयस्कर है। जितने सुख है अपने पास, उन सुखों में तृप्ति और उन सुखों में अनासक्ति!

अतृप्ति नए-नए सुखों के प्रति आकर्षण पैदा करती है और आसक्ति प्राप्त सुखों में सुध-बुध खो देती है। बस, मनुष्य इसमें उलझ जाता है। इसमें उलझा हुआ मनुष्य फिर धर्म क्रियाएँ भी करे, उसका मन धर्म क्रियाओं में स्थिरता और प्रसन्नता नहीं पाता है। धर्म क्रियाएँ नहीं, दूसरी भी संसार की क्रियाएँ वह स्थिरता से नहीं कर पाता है। कुछ न कुछ गलती कर देता है। रावण का पतन क्यों हुआ था? हजारों रूपरानियाँ उसके अन्तःपुर में थीं, फिर भी तृप्त नहीं हुआ, सीताजी का अपहरण करके ले आया लंका में। सीता के रूप में वह इतना आसक्त बन गया था कि विभीषण तथा मंत्रिमंडल के समझाने पर भी उसने सीता को वापस नहीं लौटाया । रावण इतना चंचल हो गया था कि राज्यकार्य में भी उसका मन लगता नहीं था।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक बात तू अन्तःकरण में बिठा ले कि तू इस संसार में असहाय नहीं है। असहायता की कल्पना दूर फेंक दे। एक व्यक्ति तेरे प्रति अच्छा व्यवहार नहीं करता है, इससे क्या हो गया? दूसरे कितने अच्छे आदमी तेरे प्रति स्नेह और सद्‌भाव धारण करते हैं, उनका विचार कर। तू तृप्त बनेगा। दिव्य दृष्टि से देखेगा तो अनन्त सिद्ध परमात्मा तुझे प्रति समय देख रहे हैं! तुझे जान रहे हैं! तू उनकी तरफ देख तो सही! वे शुद्ध-बुद्ध-मुक्त आत्माएँ निरन्तर अपनी ओर देख रही हैं और हम को बुला रही हैं... कितनी उत्तम आत्माएँ हैं वे!

कैसा है, मनुष्य मन का स्वभाव। एक रागी, द्वेषी और अज्ञानी मनुष्य अपनी तरफ नहीं देखता है, उसका दुःख अनुभव करते हैं और वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा जो निरन्तर अपनी ओर देखते हैं, उनकी ओर देखने की भी हमें फुरसत नहीं! ज़्यादातर लोगों को यह ज्ञान ही नहीं होता कि अनन्त-अनन्त शुद्ध, बुद्ध आत्माएँ हमें देख रही हैं!

उन अनन्त मुक्तात्माओं की ओर देखने का प्रयत्न करना, तुझे आनंद आएगा। इसके लिए तुझे 'ध्यान' में जाना पड़ेगा। थोड़ी क्षणों के लिए इन्द्रियों को बाह्य दुनिया से खींच लेना और मन को समझा कर अपने पास रख लेना। कल्पना के आलोक में स्फटिक रत्न की विशाल सिद्धशिला दिखाई देगी। वहाँ कोई स्थूल आकृति नहीं दिखाई देगी... परन्तु अनन्त-अनन्त ज्योति के दर्शन होंगे... उस ज्योति में पूर्ण चैतन्य का आविर्भाव दिखाई देगा... बस, देखते ही रहना... तू अपूर्व आनंद का अनुभव करेगा। अगम अगोचर प्रदेश में विचरण करने का कैसा दिव्यानंद होता है... तुझे उसका अनुभव होगा।

इस प्रकार प्रतिदिन ४-५ मिनिट भी ध्यान करता रहेगा तो उसका गहरा असर तेरे हृदय पर होगा। कई पापकर्मों के बंधन टूट जाएँगे, कई दिव्य गुण आत्मा में जागृत होंगे। तेरे मुख पर ऐसी आभा छा जाएगी कि हिंसक पशु भी तुम से प्यार करने लगेंगे। तेरे हृदय से हिंसा पलायन हो गई होगी... न होगा द्वेष और न होगी वैर भावना। तेरी दृष्टि करुणा का अमृत बहाती होगी। तेरी वाणी समता की वृष्टि करती होगी। तू दूसरों की दया-करुणा की याचना नहीं करेगा, तू संसार के जीवों को दया-करुणा प्रदान करेगा।

क्या मेरी बात पसन्द आई? क्यों पसन्द नहीं आएगी? तुम्हारी मेरे प्रति जो अगाध श्रद्धा है, दिव्य समर्पण है, ये श्रद्धा और समर्पण मेरी एक-एक बात तेरे अन्तःकरण में पहुँचाते हैं। पूर्णानन्दी आत्माओं के साथ 'ध्यान' में मिलन होने से तेरी आत्मा भी पूर्णानंद के महोदधि में तैरने लगेगी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक दूसरी बात याद आ गई! तू जब मेरे पास आया था, तूने मुझे एक बात कही थी : 'मेरा मन आपके पास रहता है और मेरा तन घर में... इससे हृदय कितनी व्यथा अनुभव करता है... आपको कैसे बताऊँ? इसलिए या तो आप मुझे अपने पास रख लो, अथवा मुझे परलोक यात्रा करने दो!' कहा था न? हालाँकि उस समय तू भावावेश में बोल रहा था। शायद तुझे तेरे शब्द याद नहीं होंगे। तेरे हृदय के वे शब्द थे। मैं तुझे अपने पास क्यों न बुला लूँ? मेरे हृदय में तेरे प्रति पूर्ण सद्भाव है, मैं तेरे आत्मविकास में पूर्णरूपेण सहायक बन सकता हूँ, परन्तु तू जानता है न कि यदि तू मेरे पास आ जाएगा तो उसकी प्रतिक्रिया क्या आ सकती है। तेरे आसपास के लोग कितना घोर विरोध करेंगे और अर्थहीन बवंडर पैदा करेंगे। क्या तू उस समय तूफान के लिए तैयार है? रागियों को विराग का मार्ग पसन्द नहीं! भोगी को त्याग का पथ पसन्द नहीं! यदि तेरी पूरी तैयारी हो, दृढ़ मनोबल हो तो तू पत्र मिलते ही मेरे पास चले आना। मैं तो ऐसे बवंडरों से कभी नहीं डरा। राग-विराग का, भोग-त्याग का युद्ध चलता ही रहता है!

परलोक-यात्रा का विचार फालतू है। तू ऐसा विचार करेगा? सहनशीलता का पूरा परिचय देना चाहिए। घरवालों के साथ थोड़ा सा 'को-ओपरेशन' कर लेना चाहिए। ऐसा करने से उन लोगों का व्यवहार कुछ बदल सकता है। यदि परिवर्तन नहीं आता है, तो फिर सोचेंगे। तू चिन्ता नहीं करना। मेरा सहयोग किसी भी समय तुझे मिलेगा ही। अब तो वर्षाकाल आ गया है। पाँच महीने यहाँ डभोई में ही हमारी स्थिरता है। जब अनुकूल संयोग मिले तू यहाँ आ जाना कुछ दिनों के लिए।

वर्षाकाल के पूर्व एक महीना वडोदरा में रुके थे। १५ दिवसीय स्थानिक ज्ञानसत्र का वहाँ आयोजन हुआ था। खूब आनंद आया। युवावर्ग में धर्मतत्व के विषय में गहरी जिज्ञासा पाई। प्रातः ६ बजे पाँच सौ युवक-युवती उपस्थित हो जाते थे। शांति से सुनते थे। अनुशासन का चुस्त पालन करते थे। नोट्स भी लिखते थे। स्कूल कॉलेजों की कोई बुराई वहाँ नहीं दिखाई दी। जाप और ध्यान भी एक दिन कराया... सबने किया! इस ज्ञानसत्र में डॉक्टर, वकील, इंजीनियर, ग्रेज्युएट्स वगैरह अच्छी तादात में थे।

मेरा और सहवर्ती मुनिवरों का स्वास्थ्य अच्छा है। दैनिक कार्यक्रम सुचारू रूप से चल रहा है। तेरे तन-मन की प्रसन्नता चाहता हूँ।

२०-६-७७ डभोई [गुजरात]

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *झरना कितनी सहजता से बहता रहता है... पत्थर की चट्टानों से गुजरता है... तो रेत के टीलों को भी लाँघ जाता है... पर बहता रहता है... हमें भी वैसे ही जीना है! झरने की भाँति!*
- *स्वयं की कोई मान्यता नहीं...कोई आग्रह या दुराग्रह नहीं... जो कुछ सहजता से सामने आता है... उसे स्वीकार कर लेना!*
- *स्वीकार में शांति है... सहजता में प्रसन्नता है.. इन्कार में अशांति है... आग्रह में व्यथा है...*
- *सहज रूप से परमात्मा के चरणों में अपने आप को पूरी तरह समर्पित कर दो... परमात्मा का अचिन्त्य अनुग्रह स्वतः बरसने लगेगा।*
- *परमात्मसमर्पण हमें साहजिक बनाता है... जिन्दगी को सहजता से जीना ही सबसे बड़ी साधना है।*

पत्र : १८

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ!

तुझे मालूम भी नहीं होगा कि तेरा पत्र मुझे ४ अगस्त को मिलेगा! यह भी तू नहीं जानता होगा कि ४ अगस्त मेरा जन्म दिन है। कैसा अच्छा योगानुयोग बना? खूब प्रसन्नता हुई। इस पत्र में तूने लिखा कि : 'अब तो परमात्मा की पूर्ण ज्ञानदृष्टि में जीवन जीना है! उस परम करुणानिधान के सहारे ही जीवन जीना है।'

कितनी अच्छी बात लिख दी तूने! परमात्मा के प्रति संपूर्ण समर्पण कर दिया तूने। समर्पण के दिव्य दीपक की ज्योति है, सहजता। कोई तनाव नहीं, कोई दबाव नहीं... सहजता से बहता निर्झर का सलिल। बस, बहते रहो निरन्तर! रास्ते में पत्थर आए, तो पत्थर के ऊपर से बह जाओ, रास्ते में गड्ढा आए, तो गड्ढे में से होते हुए बह जाओ....। अपने गन्तव्य के प्रति बहते रहो।

परमात्मसमर्पण से सहजता आती ही है। अपनी निजी कोई आग्रह नहीं, अपना स्वयं का कोई दुराग्रह नहीं, अधिकार नहीं। कितनी सहजता से सीताजी ने वनवास में श्री राम का अनुसरण किया था। सीताजी ने श्री राम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

को आग्रह नहीं किया था कि 'आप वन में मत जाइए, आप अयोध्या में ही रहें, राज्य का अपना अधिकार मत छोड़ें।' समर्पित हृदय में ऐसे विकल्प पैदा ही नहीं होते।

सहजता में कोई शिकायत नहीं होती है। जहाँ स्वीकार होता है वहाँ शिकायत कैसे हो सकती है? शिकायतें अशांति में से उत्पन्न होती हैं, स्वीकार में अशांति होती ही नहीं। स्वीकार में तो अपूर्व शांति का आस्वाद होता है। सीताजी ने वनवास में श्री राम के सामने कैकेयी के विरुद्ध या दशरथ के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं की थी। जंगल के कष्टों को लेकर भी कोई शिकायत नहीं की थी। हर परिस्थिति का स्वीकार। हर संयोग का स्वीकार। ऐसी सहजता समर्पण के बिना नहीं आ सकती है। समर्पणभाव प्रगट होते ही सहजता आ जाती है। सहजता के साथ ही सब शिकायतें शांत हो जाती हैं। यदि तेरे हृदय में परमात्मा के प्रति समर्पण भाव जागृत हो गया है, तो ऐसा समत्व अवश्य तेरे मन में आ जाएगा।

जब हर परिस्थिति में सहजता आती है, तब दुःख सहन करने की शक्ति स्वतः जागृत होती है। शिकायत के बिना सहजता से मनुष्य दुःख सहन कर लेता है। 'मैं सहन कर रहा हूँ,' ऐसा भी विचार उनको नहीं आता है। तू अनुभव करेगा कि पूर्वजीवन में जिन दुःखों में तू बेचैनी और संत्रास अनुभव करता था, उन दुःखों में अब तू बेचैन नहीं बनेगा। संत्रस्त नहीं होगा। हाँ, दूसरे जीवों के दुःख देखकर तुझे दुःख होगा, करुणा का भाव तुझे दूसरों के दुःखों से दुःखी करेगा, बेचैन बनाएगा, परन्तु अपने दुःखों से तू कभी अशांत नहीं होगा।

तू सोच सकता है कि 'संसार में ऐसा जीवन संभव हो सकता है?' हाँ, हो सकता है। समर्पणभाव के विकास के साथ यह सब स्वतः संभव होता जाएगा। तुझे संभव बनाना नहीं होगा, संभव बन जाएगा। जब तेरे मन में यह संकल्प हो गया है कि 'अब मुझे परमात्मा के सहारे ही जीवन व्यतीत करना है और आनंद पाना है।' तब आन्तरिक विकास का प्रारम्भ हो ही गया समझना। अब तुझे कुछ नहीं करना है, उस परमशक्ति को तेरे ऊपर काम करने दे।

समर्पित आत्मा परमात्मा के प्रति अभिमुख बनती है। अभिमुख आत्मा में परमात्म-अनुग्रह अवतरित होता है। परमात्म अनुग्रह भी काम करता है। तू उसका काम करने देना। सूर्य आकाश में प्रकाशित है, तू अपना मकान खुला

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रखेगा तो सूर्य का प्रकाश तेरे मकान में आएगा और मकान को गर्मी से भर देगा। मकान बंद रखेगा तो सूर्य का प्रकाश प्राप्त नहीं होगा। तूने अपना हृदय परमात्मा के सामने खोल दिया है, तो परमात्मा की अचिन्त्य कृपा तेरे हृदय में बरसेगी ही और वह कृपा काम करेगी। करने देना जो कुछ करना हो उस दिव्य चेतना को! तू तो अनुभूति करते रहना। जो नई-नई परिस्थितियाँ पैदा हो, उसमें से सहजता से गुजरना। परिवर्तन में नई परिस्थितियाँ पैदा होती ही हैं। घबराना मत। यह तेरे लिए अभिनव अनुभव होगा। नए प्रदेश में पैर रखते ही जैसा रोमांच होता है, जैसा अव्यक्त आनंद होता है... वैसा ही रोमांच और आनंद इस अनुभव में होगा।

परमात्म समर्पण का तत्त्व ही अनूठा है। परमात्मप्रीति और परमात्मभक्ति से भरपूर परमात्मप्रेमी परमात्मा के चरणों में मन-वचन काया से समर्पित हो जाता है।

सहनशीलता भी सहज हो जाएगी। सहनशीलता स्वभावभूत बन जाएगी। उसके साथ-साथ गंभीरता और उदारता भी जीवन-सहचरी बन जाएगी। वर्तमान जीवन के सभी कर्तव्यों का पालन करते हुए भी इस प्रकार का जीवन बन जाएगा। जीवन के सभी कर्तव्यों के पालन में तुम्हारी सहज-स्वाभाविक सहनशीलता, गंभीरता और उदारता उद्‌भासित होगी। सीताजी की सहज सहनशीलता का दर्शन वनवास में होता है, तो उनकी स्वाभाविक गंभीरता अपने पुत्रों के सामने अभिव्यक्त होती है। कभी भी उन्होंने लव-कुश के सामने श्री राम के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं बोला। चूँकि उनके हृदय में श्री राम के प्रति कोई रोष ही नहीं था। जो कुछ भी उनके जीवन में घट रहा था, वह सहजता से स्वीकार करते चली थी। पुत्रों के सामने श्री राम के विरुद्ध बोलने की चंचलता आएगी ही कहाँ से?

जब श्री राम ने सीताजी को 'दिव्य' करके अपने सतीत्व की प्रतीति, अयोध्या की प्रजा को करानी चाही, तब भी सीताजी ने स्वीकार कर लिया। स्वाभाविकता से स्वीकार कर लिया था। श्री राम के साथ कोई बहस नहीं, कोई बात नहीं। इतना भी नहीं कहा कि अब क्या सतीत्व की परीक्षा ले रहे हो? जब जंगल में त्याग करवा दिया, धोखा देकर, उस समय परीक्षा लेते तो बुद्धिमत्ता थी...' नहीं, कुछ भी नहीं बोली सीताजी। भड़भड़ आग में कूद पड़ने में कोई हिचकिचाहट नहीं, कोई भय नहीं, जीवन का कोई मोह नहीं। पूर्ण गंभीरता!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इतना ही नहीं, अग्नि की खाई पानी का सरोवर बन गया और सतीत्व सिद्ध हो गया, बाद में जब श्री राम क्षमा माँगने लगे, तो क्षमा भी एक क्षण में दे दी। कुछ भी कहे बिना... सहजता से क्षमा दे दी और संसार त्याग कर चल पड़ी चारित्र पथ पर। पति, देवर, पुत्र वगैरह के प्रति कोई ममत्व नहीं रहा... ममत्व के बंधन भी सहजता से तोड़ दिए!

ऐसी सहजता... स्वाभाविकता आ जाए जीवन में, तो काम हो जाए। स्वाभाविक गंभीरता, स्वाभाविक उदारता। कोई कृत्रिमता नहीं... कोई दंभ नहीं, दिखावा नहीं। कोई भय नहीं, जीवन का कोई मोह नहीं। जहर का प्याला भी सहजता से पी जायें... वैसा जीवन जीने का मजा है।

तेरे मन में जो अपूर्व पवित्र भाव जागृत हुआ है परमात्म-समर्पण का, उस पवित्र भाव को सुदृढ़ बनाए रखना। उस भाव को प्रबुद्ध करते रहना। वह भाव मंद न हो जाये, नष्ट न हो जाये, उसका पूरा ध्यान रखना। भावों को, सद्भावों को टिकाना और बढ़ाना सरल नहीं हैं। लाखों करोड़ों की संपत्ति को टिकाना सरल है, पवित्र भावों को सुरक्षित रखना मुश्किल है। तुझे जो समर्पण का अपूर्व भाव मिला है, चिन्तामणि रत्न की तरह उसको सुरक्षित रखना।

इसके लिए परमात्म-नाम का स्मरण, परमात्म-प्रतिमा का दर्शन-पूजन और परमात्मगुणों का कीर्तन करते रहना। इससे समर्पण भाव को अनुकूल वातावरण मिल जाएगा। शुभ भावों को यदि अनुकूल वातावरण मिल जाए तो शुभ भाव टिकते हैं। विरुद्ध वातावरण में सामान्य मनुष्य शुभ भावों को टिका नहीं सकते। परमात्मसमर्पण की मान्यता का विरोध करने वालों का संपर्क नहीं रखना, अन्यथा कभी भी तेरा समर्पण खंडित हो सकता है।

समर्पणभाव को पुष्ट करने हेतु तू परमात्मा की ही बातें करते रहना। परमात्मा की कथाएँ सुनते रहना। तुझे परमात्म विषयक बातें सुनने में बड़ा आनंद आएगा। हाँ, कभी कोई परमात्मा की निन्दा भी करे, उनके प्रति भी द्वेष मत करना। उसके प्रति भी दया भाव रखना। 'बेचारा परमात्मा की निन्दा कर घोर पापकर्म बाँधता है, जब वे कर्म उदय में आएँगे.. कितने दुःख भोगने पड़ेंगे इसको।' निन्दक के साथ उलझना मत। झगड़ना मत। इतनी सावधानियाँ बरतना। तेरा परमात्मसमर्पण का शुभ भाव बढ़ता जाएगा।

छोटी सी जिन्दगी में... अनिश्चित जिन्दगी में यदि इतनी उपलब्धि भी हो जाये तो जीवन सफल बन जाये... परलोकयात्रा का प्रयाण भी प्रसन्नतापूर्वक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हो जाये। परमात्मा का सहारा कभी नहीं छोड़ना। जनम-जनम उनके चरणों की सेवा मिलती रहे... यही मनोकामना करना।

यहाँ कुशलता है। कई दिनों से आकाश बादलों से छाया हुआ है। बरसात ही बरसात है। तपश्चर्या करने वाले मजे से तपश्चर्या कर रहे हैं... अनुकूल वातावरण मिल गया है न?

तेरी कुशलता चाहता हूँ।

१०-८-७७

डभोई

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जब तक अपनी आत्मा देह के बंधन से आबद्ध है... तब तक परमात्मा की ज्योति में अपनी आत्मज्योति नहीं मिल सकती! परमात्मा विदेह है... उनमें समा जाने के लिए हमें भी विदेह होना पड़ेगा।*
- *मुक्ति के लिए प्रत्येक आत्मा को अपना निजी पुरुषार्थ करना होता है। औरों से मार्गदर्शन मिल सकता है... पर प्रयत्न तो स्वयं को ही करना पड़ता है।*
- *चारों तरफ बंधन ही बंधन है... कुछ बंधन तो प्रिय लगने लग गए हैं। जैसे बंधन, बंधन ही नहीं लगते! बंधनों की दुनिया में मुक्ति-निर्वाण जैसे की विस्मृति के सागर में खो गए हैं!*
- *अर्थहीन परंपराएँ और शास्त्र विहीन रूढ़ियों को तोड़ना ही होगा!*

पत्र : १९

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

परमात्मा की परम कृपा से यहाँ कुशलता है, प्रसन्नता है। तेरा पत्र मिला है। 'अरिहंत' का उधर अच्छा प्रचार हो रहा है, जानकर प्रसन्नता हुई। हिन्दी-भाषी प्रदेशों में जहाँ-जहाँ 'अरिहंत' जाता है, लोग काफी जिज्ञासा से पढ़ते हैं। शुभ प्रयत्न की सफलता के सन्देश सुनने से शुभ प्रयत्नों में उत्साह बढ़ जाता है।

वर्षाकाल पूर्ण होने जा रहा है। किधर जाना होगा... कुछ निश्चित नहीं! उत्तर और दक्षिण दोनों का आग्रह है। अभी तो उस विषय का कोई विचार ही नहीं आता है। कल रात परमात्मा महावीर प्रभु के निर्वाण-चिन्तन में व्यतीत हुई। आनंद की अनुभूति हुई। तू जानता है न कि दीपावली का पवित्र दिन परमात्मा का निर्वाण कल्याणक का दिन है?

कार्तिक-अमावस्या की मध्यरात्रि का समय निर्वाण का समय था। सदेह तीर्थंकर विदेह हो गए उस रात में...।

उनके प्रति अन्तरंग प्रीतिवाले हजारों साधु-साध्वी, लाखों श्रावक-श्राविका और करोड़ों अनुयायी.... जिनको-जिनको महावीर के निर्वाण के समाचार मिले थे, घोर उदासी में डूब गए थे। फूट-फूट कर रोए थे। सब जानते थे कि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महावीर की आत्मा की मृत्यु नहीं हुई है, आत्मा तो सिद्ध-बुद्ध और मुक्त बन कर अनन्त-अनन्त में रम रही है। परन्तु दुनिया उनको देख नहीं सकती! दुनिया उनको सुन नहीं सकती! वर्षों तक महावीर को देखे थे... वर्षों तक महावीर को सुने थे... अब दुनिया कभी भी महावीर को देख नहीं सकेगी... सुन नहीं सकेगी। जो आत्मा विदेह बन जाती है, शरीर के बन्धनों से संपूर्ण मुक्त बन जाती है, वह आत्मा पुनः सदेह नहीं बनती है। सदेह महावीर के दर्शन हमको नहीं होंगे! हाँ, जब हमको केवलज्ञान होगा, केवलज्ञान के पूर्ण प्रकाश में... भूतकालीन पर्याय के रूप में दर्शन होगा! जब हम भी देह के बंधन से मुक्त बनेंगे तब परमात्मा की ज्योति में अपनी ज्योति अभेदभाव से मिल जाएगी। फिर कभी भी वियोग नहीं होगा।

२५०० वर्ष पूर्व श्रमण परमात्मा महावीर देव का निर्वाण हो गया। मात्र ७२ वर्ष की आयु में ही वे देहमुक्त हो गए। 'अन्तरायकर्म' के क्षय से अनन्त वीर्य, अनन्त शक्ति का आविर्भाव हो गया था, परंतु वे अपना आयुष्य बढ़ा नहीं सके! चूँकि वे वीतराग थे, इसलिए आयुष्य बढ़ाने की या कम करने की इच्छा उनमें नहीं थी, परन्तु सर्वजीवहिताय भी उन्होंने आयुष्य नहीं बढ़ाया! जब इन्द्र ने प्रभु से प्रार्थना की थी : 'भगवंत, थोड़ा आयुष्य बढ़ा देने की कृपा करें, ताकि 'भस्मराशि' नाम के ग्रह का असर आपके धर्मशासन पर ज़्यादा नहीं रहे।' परमात्मा ने स्पष्ट कह दिया था : 'इन्द्र, आयुष्य कर्म समाप्त होने पर कोई भी उसे बढ़ा नहीं सकता, मैं भी नहीं बढ़ा सकता।'

निर्वाण हो गया भगवंत का। अब कभी भी उनका जन्म नहीं होगा इस संसार में। परमात्मा अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, वीतराग और अनन्तवीर्यसंपन्न तो थे ही, निर्वाण होने पर वे अरूपी हो गए। जन्म-मृत्यु से परे हो गए। अनन्त अव्याबाध सुख पा लिया उन्होंने। उच्च-नीच से पर 'अगुरुलघु' बन गए।

प्रिय मुमुक्षु, सर्व दुःखों का अन्त है, निर्वाण में। जब तक निर्वाण नहीं होगा अपना, हम दुःखों से मुक्त नहीं रहेंगे। श्रेष्ठ पुण्यकर्म का उदय होने पर भी कोई न कोई दुःख तो रहेगा ही संसार में। सर्वोत्कृष्ट पुण्यकर्म का भी अन्त ही आएगा। अनादिकालीन यह विषचक्र चलता ही रहा है। तोड़ना होगा इस विषचक्र को। श्रमण परमात्मा महावीर ने २५०० वर्ष पूर्व तोड़ दिया यह विषचक्र... और वे अमृतमय बन गए। उनको पूछा होगा किसी शिष्य ने : 'भगवंत! आप अनन्त शक्ति के मालिक हैं, हमारा भी संसार चक्र तोड़ दो! हमको भी मुक्तिपद दिला दो... इतनी कृपा कर दो...।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भगवंत ने कहा : 'हे भिक्खु! यदि ऐसा हो सकता होता तो मेरे पूर्व के तीर्थंकरों ने सब जीवों को मोक्ष में भेज दिया होता! चूँकि गुण, ज्ञान, और शक्ति में सभी तीर्थंकर समान होते हैं। परन्तु विश्वव्यवस्था में ऐसा हो ही नहीं सकता है कि एक आत्मा दूसरी आत्मा के कर्मबन्धन तोड़े और उसको मुक्तिपद दिला दे! हर आत्मा को अपने व्यक्तिगत पुरुषार्थ से ही मुक्ति मिलती है। मैं तो पुरुषार्थ में मार्गदर्शक बन सकता हूँ। मुक्ति का ज्ञान दे सकता हूँ।'

कितना निराश हो गया होगा वह श्रमण? नहीं, भगवंत ने उसको निराश नहीं किया था, पुरुषार्थ के लिए प्रेरित किया था। परावलंबन को छोड़कर स्वावलंबी बनने हेतु उत्साहित किया था। इससे तो उस श्रमण की परमात्मा के प्रति प्रीति और भक्ति खूब बढ़ गई होगी। मुक्तिपथ की आराधना में वह पुरुषार्थशील बन गया होगा।

मुक्ति की बात लिख रहा हूँ... निर्वाण की बात लिख रहा हूँ... परन्तु हृदय में एक प्रश्न उठता है... 'तुझे बंधन प्रिय हैं, या मुक्ति? तुझे जीवन प्रिय है, या निर्वाण?' मैं अपनी बात बताता हूँ तुझे। गहन चिन्तन में जब-जब डूब जाता हूँ, तब मुक्ति... निर्वाण प्रिय लगता है। जब बाह्य दुनिया के सम्पर्क में मन और इन्द्रियाँ आती है, तब बंधन प्रिय लगते हैं। कितनी-कितनी जड़-चेतन वस्तुओं से बंध गया है मन!! क्या बताऊँ तुझे? हाँ, कभी-कभी इन सारे बंधनों को तोड़ कोई नीरव... निर्जन जंगल में... या कोई शांत.... प्रशांत गुफा में जाकर शेष जीवन व्यतीत करने की तीव्र तमन्ना जाग उठती है। परन्तु कोई न कोई बन्धन रोकता रहा है....।

आज हमारा जीवन भी ज़्यादा सामाजिक बन गया है। साधु को सामाजिक प्राणी नहीं बनना चाहिए, साधु को तो सदैव आध्यात्मिक बना रहना चाहिए। परन्तु आज वैसी व्यवस्था भी नहीं कि साधु सदैव आध्यात्मिक वातावरण में पलता रहे और बढ़ता रहे। हर बात विशेषकर सामाजिक दृष्टि से सोची जा रही है। बन्धन ही बन्धन! लक्ष्य मुक्ति का दिया जा रहा है... जीवन बन्धनों में जकड़ा जा रहा है! कुछ बंधन तो बहुत प्रिय बन गए हैं। कुछ बंधनों को अनिवार्य मान लिया गया है। अनिवार्य बंधनों से प्यार हो जाता है। इस उलझन में मुक्ति और निर्वाण, विस्मृति के सागर में डूब गए हैं!

आज जो निर्वाण की बात लिख रहा हूँ... वह तो परमात्मा का निर्वाण-कल्याणक कार्तिक-अमावस्या को आ रहा है... इसलिए याद आ गया! अन्यथा निर्वाण में प्राण रमते ही कहाँ हैं!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सच कहता हूँ, कभी-कभी मन उग्र विद्रोह से बिदकता है। अर्थहीन और शास्त्रों से विपरीत बन्धनों को तोड़ डालने की अति आवश्यकता है। गलत परम्पराओं की पाइप-लाइनें, कि जिनमें गंदा पानी बह रहा है, तोड़ डालनी चाहिए।

कुछ बन्धनों को सामाजिक प्रतिष्ठा मिल गई है! जितनी प्रतिष्ठा निर्वाण को नहीं मिली है, उससे ज़्यादा प्रतिष्ठा बंधनों को! समाज ऐसा ही है। समाज में ज़्यादा लोग ज्ञानप्रकाश से रहित हैं। समाज के लोग तत्त्वदृष्टि से सोच ही नहीं सकते! साधक जीवन में तत्त्वदृष्टि का ही चिन्तन चाहिए! यह बड़ा विरोधाभास है। जाने दो इन बातों को। अरण्यरुदन जैसी ये बातें हैं!

परमात्मा महावीर स्वामी के निर्वाणकल्याणक की अच्छे भाव से आराधना करना। निर्वाण की रात उस परमकृपानिधि परमात्मा के नामस्मरण में व्यतीत करना। निर्वाण की दिव्य ज्योत का दर्शन करना। कम से कम उस रात को तो परमात्मा की स्मृति में... भावसलिल से आर्द्र स्मृति में व्यतीत करना ही। तेरे लिए यह काम सरल भी है। अभी-अभी तेरा मन परमात्मभक्ति में विशेष तल्लीन बना है न! भक्त बन गया है तू! अच्छा है, निष्काम भक्ति का फल अद्‌भुत होता है। तेरी निष्काम भक्ति तेरे आध्यात्मिक विकास में पूर्णरूपेण सहायक बनेगी। बाह्य अवरोध... रुकावटें भी दूर हो जायेंगी।

आज ज़्यादा नहीं लिखूँगा। आजकल एक उपन्यास लिख रहा हूँ। प्राचीन कथावस्तु पर आधारित है। एक ऋषि कन्या के आसपास सारी कहानी फैली है।

परिवार को धर्मलाभ सूचित करना। तूने 'कार्य सेवा' बताने को लिखा, परन्तु अभी कोई विशेष कार्य नहीं है। ऐसा कार्य उपस्थित होने पर लिखूँगा। यहाँ हम सभी कुशल हैं, प्रसन्न हैं।

डभोई १-११-७७

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *विपरित परिस्थितियों में स्वस्थ एवं संतुलित रहने के लिए 'भेदज्ञान' यानी आत्मा एवं अन्य पदार्थों का भिन्नत्व समझ लेना, समझ कर उसको स्वीकार कर लेना आवश्यक है।*
- *संसार में रहकर भी सांसारिक उलझनों से अलग जीना, दुनिया में रहकर भी दुनियादारी से ऊपर उठकर जीना कोई मामूली बात नहीं है... पर असंभव भी नहीं है!*
- *व्यवहार की विधि में विसंवाद की व्यथा घेरेगी ही!*
- *'एकत्वभाव' एवं 'अन्यत्वभाव' का गहरा चिंतन आत्मा को विरह एवं वियोग की क्षणों में स्वस्थ रख सकता है।*
- *हृदय को किसी भी व्यक्ति या पदार्थ से बांधना नहीं! निर्बंधन होकर जीते रहना।*

पत्र : २०

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला, मन प्रसन्न हुआ। डभोई से विहार कर बड़ौदा आए हैं। यहाँ प्रतिदिन प्रवचन होते हैं। अभी कुछ दिन यहाँ स्थिरता होगी।

दो दिन पूर्व एक वृद्ध पुरुष मेरे पास आए। यहाँ प्रतिदिन वे प्रवचन सुन रहे हैं। उन्होंने एक प्रश्न पूछा। प्रश्न क्या था, हृदय की गहरी वेदना थी। उनकी उम्र है ७७ वर्ष की। तीन महीने पूर्व उनकी ७३ वर्षीय पत्नी का स्वर्गवास हो गया है। पति-पत्नी दो ही थे, अब ये अकेले हो गए हैं। उनकी वेदना यह है कि उनको पत्नी की स्मृति बार-बार आती है! पत्नी का विरह उनको व्यथित कर रहा है। हैं, ये वृद्ध सज्जन परमात्मा के भक्त। प्रतिदिन परमात्मा का पूजन करते हैं और दूसरी भी धर्मक्रियाएँ करते हैं।

मैंने उनको बड़े प्रेम से आश्वासन दिया और विरह व्यथा से मुक्त होने के उपाय भी बताएँ, परन्तु मेरे मन में कुछ प्रश्न पैदा हो गए! उस रात को इस बात पर चिन्तन भी किया। '७७ वर्ष की वृद्धावस्था में पत्नी के विरह की वेदना? परमात्मपूजन वगैरह धर्मक्रियाएँ करने वाले के हृदय में व्यथा? क्या धर्मक्रियाएँ मनुष्य के हृदय को ऐसी परिस्थिति में व्यथारहित नहीं रख

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सकती?' ऐसे-ऐसे प्रश्न मन में उठने लगे... वहाँ मेरे एक मित्र मुनि की कही हुई एक बात याद आ गई! एक प्रसिद्ध विद्वान आचार्य के एक शिष्य हृदय रोग से स्वर्गवासी हो गए थे... प्रिय शिष्य था, शिष्य की मृत्यु होने पर आचार्य फूट-फूट कर रो पड़े थे! संसार के त्यागी और धर्मग्रंथों के अभ्यासी आचार्य भी रो पड़े थे!

जब यह घटना स्मृतिपटल पर आई तब उस वृद्ध सज्जन के प्रति सहानुभूति बढ़ गई! संसारत्यागी साधु यदि प्रियजन के विरह से व्याकुल बन जाता है, तो फिर संसारी अज्ञानी जीवों की तो बात ही क्या करना? परन्तु ऐसा क्यों बनता है? पचास-पचास वर्षों की धर्मआराधना मनुष्य के हृदय को अनासक्त नहीं बना सकती? संसार की आसक्ति मिटा नहीं सकती?

प्रिय मुमुक्षु! उस वृद्ध सज्जन के प्रति मेरे हृदय में खूब सहानुभूति है और उनकी वृद्धावस्था में उनकी समता-समाधि बनी रहे, ऐसी मेरी शुभकामना है, परन्तु उनकी बात ने मुझे गम्भीर चिन्तन की ओर प्रेरित कर दिया है।

यह संसार है, संसार में स्वजनवियोग, परिजनवियोग, वैभववियोग और शरीरवियोग... होना स्वाभाविक है। संसार में ऐसे वियोग होते रहते हैं, इसका असर मनुष्य पर होता है...मनुष्य व्यथित हो जाता है, बेचैन हो जाता है, विरहव्यथा से व्याकुल हो जाता है। ऐसी व्यथा और व्याकुलता का शिकार कौन बनता है? अज्ञानी मनुष्य! ज्ञानी जो होगा, नहीं बनेगा। सच्चा ज्ञानी होगा तो नहीं बनेगा। मात्र शास्त्रों का ज्ञानी नहीं, शास्त्रों के उपदेश को आत्मसात करने वाला ज्ञानी! मात्र धर्मक्रियाएँ करने वाला मनुष्य व्यथा और वेदना का शिकार बन जाएगा, यदि वह भावना ज्ञान से भावित है, तो नहीं बनेगा! मात्र तपश्चर्या करने वाला दुःखी हो जाएगा, यदि वह आत्मज्ञानी है, तो दुःखी नहीं बनेगा।

जो मनुष्य समझता है कि 'मैं स्वजनों से, परिजनों से, वैभव से और शरीर से भिन्न हूँ,' वह मनुष्य कभी भी शोकाक्रान्त नहीं बनेगा। यह समझ आत्मसात हो जानी चाहिए, अर्थात प्रतिदिन इस विचार को, इस सत्य को याद कर चिन्तन करना चाहिए। इसको **'भेदज्ञान'** कहते हैं। अपनी आत्मा से यह सारा संसार भिन्न है, संसार के किसी भी पदार्थ का संयोग शाश्वत नहीं है, इस सत्य को अपने विचारों में ओतप्रोत कर देना चाहिए। यदि नहीं किया जाए तो वियोग की वेदना सहन करनी ही पड़ेगी।

संसार में रहना, संसार में जीना और हृदय को संसार से अलिप्त रखना,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सरल काम तो नहीं है, परन्तु असम्भव काम भी नहीं है। संसार से हृदय को अलिप्त रखने का मार्ग ज्ञानी पुरुषों ने बताया है। अनेक उपाय बताए हैं... परन्तु हमको अलिप्त होने की तमन्ना चाहिए! लिप्तता में जब तक आनंद माना है, सुख माना है, तब तक अलिप्तता प्रिय कैसे लगेगी? संसार के अनेक पदार्थों के साथ हृदय को बाँध लिया है। व्यवहार को सत्य मान कर हृदय से संसार को जोड़ दिया है।

संसार मिथ्या है, वैसे संसार के सारे व्यवहार भी मिथ्या हैं! व्यवहार तो मात्र व्यवस्था के लिए है। व्यवस्था तंत्र का हृदय के साथ कोई संबंध नहीं है। इसलिए तो तीर्थंकर भगवन्तों ने 'निश्चय' का मार्ग बताया है। निश्चय दृष्टि से आत्म स्वरूप को समझाया है। इस दृष्टि के बिना हृदय अलिप्त, अनासक्त, निराकुल नहीं बन सकेगा। तू गृहस्थ है न? तुझे जैसे व्यवहारमार्ग का ज्ञान होना चाहिए वैसे निश्चय मार्ग का भी ज्ञान होना चाहिए। निश्चय का मार्ग आत्मशांति का मार्ग है। निश्चय दृष्टि नहीं है और मात्र व्यवहार दृष्टि है, तो फिर आत्मशांति नहीं मिलेगी। क्योंकि व्यवहार में विसंवाद रहेंगे ही। व्यवहार में द्वन्द्व रहेंगे ही। इन द्वन्द्वों का, विसंवादों का तेरे हृदय पर प्रभाव पड़ेगा ही, यदि तेरे पास निश्चय दृष्टि नहीं होगी तो!

दुर्भाग्य है आज अपना...। मनुष्य आज ऐसा ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं चाहता। अन्तरात्मा की शांति, समता और प्रसन्नता प्रदान करने वाला ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं चाहता। आज तो मनुष्य को चाहिए अर्थ प्राप्ति कराने वाला ज्ञान! तुच्छ मनोरंजन देने वाला ज्ञान! क्षणिक आनंद देनेवाला ज्ञान! दुनिया की कुछ जानकारी देने वाला ज्ञान! कौन चाहता है, निश्चय और व्यवहार का ज्ञान? कौन चाहता है 'उत्सर्ग' और 'अपवाद' का ज्ञान? जीवन अर्थप्रधान और कामप्रधान बन गया है। ज़्यादा से ज़्यादा पैसा कमाना और ज़्यादा से ज़्यादा विषयसुख भोगना!

धर्मक्रियाएँ करनेवाले भी आज ज़्यादातर अर्थप्रधान और कामप्रधान दिखते हैं। धर्मक्रिया करते हैं, परन्तु मोक्षसुख पाने के लिए नहीं, संसारसुख पाने के लिए! फिर उनको अन्तरात्मा की शांति कैसे मिले? चित्त की प्रसन्नता कैसे मिले? संसारी हो या साधु हो, ज्ञानदृष्टि के बिना समता-समाधि नहीं मिल सकती।

जिस वृद्ध पुरुष की बात कर रहा हूँ, उस वृद्ध पुरुष ने कभी ऐसा भेदज्ञान पाया ही नहीं है! निश्चय-व्यवहार का ज्ञान प्राप्त किया ही नहीं है... फिर पत्नी का विरह उनको व्यथित नहीं करेगा तो क्या करेगा?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीवन की उत्तरावस्था... वृद्धावस्था तो समता-समाधि में व्यतीत होनी ही चाहिए न? यूँ भी आजकल मनुष्य की वृद्धावस्था ज़्यादा दुःखरूप बन रही है। वृद्धों के प्रति उनके परिवारों का स्नेह, सद्भाव घटता जा रहा है। अमरीका U.S.A. में तो वृद्धों की दुर्दशा खूब बढ़ गई है। वहाँ 'एकत्व' का भावनाज्ञान नहीं है और एकत्व में जीना अपरिहार्य बन गया है। बहुत से वृद्ध तो आत्महत्या कर लेते हैं। हाँ, बाह्य सुख-सुविधा होने पर भी उन वृद्धों के चित्त में घोर अशांति होती है। वहाँ के वृद्धों को कोई चाहता नहीं, वृद्धों से कोई प्रेम करता नहीं! वृद्धों ने अपने मन को अनासक्त बनाया नहीं होता है।

'एकत्वभावना' और 'अन्यत्वभावना' से अन्तरात्मा को ऐसा भावित कर लेना चाहिए कि अकेला भी रहना पड़े, जीना पड़े, तो मन में कोई व्यथा न हो, वेदना न हो। सबके साथ जीवन जीने का और सबसे अपना हृदय अलिप्त रखने का! हृदय को किसी भी जड़-चेतन से बाँधने का नहीं। निर्बंधन रखना हृदय को। निर्बंधन हृदय ही समता-समाधि का अमृत अनुभव कर सकता है।

प्रिय मुमुक्षु! आज जब पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय परिस्थितियाँ बदल रही हैं, मानवता, नैतिकता, धार्मिकता और आध्यात्मिकता के मूल्यांकन बदल रहे हैं, स्नेह, सद्भाव, वात्सल्य और करुणा जैसे जीवनरस को परिपुष्ट करनेवाले तत्त्व विलीन होते जा रहे हैं... तब समझदार... बुद्धिमान मनुष्य को अपनी आन्तरिक परिस्थिति सुदृढ़ बना लेनी चाहिए। आन्तरिक आनंद मात्र बाह्य सुख-साधन पर निर्भर नहीं है, यह बात समझ लेना।

पुण्यकर्म और पापकर्म के अधीन जीवात्मा, यदि थोड़ी भी अपनी स्वाधीनता प्राप्त नहीं करेगा, तो कर्मसत्ता उसको कुचल डालेगी। ऐसा कुछ स्वाधीन सुख, स्वाधीन आनंद होना चाहिए कि कैसी भी परिस्थिति में अशांत, क्लेश और सन्ताप हमें सताए नहीं।

तेरे प्रश्नों का उत्तर आज नहीं लिखता हूँ... आज तो मेरे मन की बातें... अभी-अभी किया हुआ चिन्तन ही लिख दिया! तेरे प्रश्नों के उत्तर अवश्य लिखूँगा। तेरे मन की प्रसन्नता चाहता हूँ। यहाँ हम सब कुशल हैं, स्वस्थ हैं। तेरा धर्मध्यान निरन्तर चलता रहे, यही मंगल कामना...।

बड़ौदा

२०-१२-७७

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *घटनाएँ तो बनती रहती हैं... परिस्थितियाँ तब्दील होती ही रहती हैं... उनमें कैसे सोचना... कैसे विचारना... यह कला हमें हस्तगत कर लेनी चाहिए, ताकि व्यर्थ के संघर्षों से बचा जा सके।*
- *विचारों में यदि क्रोध-मान-माया और लोभ का पुट नहीं मिला है, तो कर्मबंध इतना सख्त या प्रगाढ़ नहीं होगा।*
- *हमारा दर्शन जब वास्तविक नहीं होता है, तब वह निरा प्रदर्शन बन कर रह जाता है। वस्तु का यथा स्वरूप दर्शन ही हमें रागद्वेष से बचा सकता है।*
- *कभी किसी का दोष निगाहों में आ जाए तो भी सोचना कि दोष आत्मा के नहीं हैं... दोष तो शरीर के हैं... और शरीर तो जड़ है!*
- *आत्मा की विभावदशा की जानकारी के साथ-साथ स्वभावदशा की जानकारी भी जरूरी है।*

पत्र : २१

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

बड़ौदा, आणंद वगैरह गाँव-शहरों में दो मास परिभ्रमण कर हम वापस यहाँ डभोई में आ गए हैं। यहाँ आते ही तेरा पत्र मिला था, परंतु तुरंत ही प्रत्युत्तर नहीं लिख सका।

तेरे पूर्वपत्र में तूने तीन प्रश्न पूछे हैं, आज तो उन प्रश्नों का ही प्रत्युत्तर लिख रहा हूँ, दूसरी बातें भी लिखनी हैं, परंतु आज नहीं लिखूँगा। आज तो तेरे तीन प्रश्नों के उत्तर भी संपूर्ण लिख सकूँ तो बहुत है!

तेरा पहला प्रश्न : प्रतिदिन अनेक प्रकार के प्रसंग, अनेक घटनाएँ मेरे आस-पास घटती हैं, उन घटनाओं पर मैं कैसे-कैसे विचार करूँ कि जिससे पापकर्मों का बंध न हो।

तेरा प्रश्न महत्वपूर्ण है। किस प्रसंग में हमें क्या सोचना चाहिए, किस घटना में हमें कौन से विचार करने चाहिए-यह सोचने की कला हस्तगत... मनोगत हो जाये तो पापकर्म का बन्धन तो रुक जाये, पाप-कर्मों की निर्जरा (नाश) भी होती रहे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रसंग एक ही होता है, भिन्न-भिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न दृष्टि से उसको देखते हैं और सोचते हैं। एक पापकर्म बांधता है, दूसरा पाप-कर्म तोड़ता है! एक मन को बोझिल बनाता है, दूसरा मन को हलका बनाता है। एक हृदय को गन्दा करता है, दूसरा हृदय को पवित्र बनाता है!

पहले एक बात स्पष्ट कर दूँ : दुनिया में दो प्रकार की घटनाएँ घटती हैं : १. अपने जीवन को स्पर्श करने वाली २. दूसरों के जीवन को छूने वाली। एक घटना जब अपने जीवन को छूती हो, उस समय जो विचार किया जाता है, वही घटना दूसरे के जीवन को छूती हो तब वैसा विचार नहीं किया जाता, दूसरा ही विचार किया जाता है। एक उदाहरण से समझाता हूँ : रास्ते पर एक मनुष्य दूसरे को मार रहा है, तू देख रहा है, यह घटना तेरे जीवन को छूती नहीं है, यदि तू ऐसा सोचेगा कि : अच्छी लड़ाई हो रही है... देखने में मजा आ रहा है... अथवा 'इस दुष्ट को मारना ही चाहिए... ठीक मार खा रहा है... उसके पापकर्म के फल उसको भोगने दो...' तू व्यर्थ ही पापकर्म बाँधेगा। परंतु यदि तू सोचेगा कि : ओहो... कषायों की कैसी प्रबलता है...? कषाय परवश जीव, कैसी जीवहिंसा कर देता है? एक समय ये दोनों मित्र थे... आज शत्रु बन गए... संसार में कौन कायम मित्र रहता है? मेरा चले तो जाकर दोनों को शांत करूँ.. कषाय से बचा लूँ..।' ऐसे विचारों से तू कर्मनिर्जरा करेगा, पुण्यकर्म का बंध करेगा।

मानों कि तू स्वयं रास्ते से गुजर रहा है, और किसी ने तुमको गाली बोल दी, अपशब्द बोल दिए, उस समय तू क्या सोचेगा? तू बलवान है, गाली बोलने वाला निर्बल है, तू क्या करेगा? यदि तूने दूसरे अज्ञानी लोगों की तरह सोचा : 'कैसा नालायक है... अभी एक चाँटा मार दूँगा तो बत्तीसी बाहर आ जाएगी..' तो पापकर्म ही बंधेगे। ऐसे प्रसंग पर इस प्रकार सोचना चाहिए कि : 'बेचारा अपनी वचनशक्ति का दुरुपयोग कर रहा है... उसकी गाली मुझे चिपकती नहीं है... यदि मैं बिना द्वेष किए सुन लेता हूँ, तो मेरी कर्मनिर्जरा होती है... मुझे क्षमाधर्म का पालन करने का यह अवसर देता है...।'

यदि अपने विचारों में क्रोध नहीं है, अभिमान नहीं मिला है, माया-कपट की मिलावट नहीं है, लोभ घुला-मिला नहीं है, तो पापकर्मों का बंध नहीं होगा। अपने विचारों में जीवमात्र के प्रति मैत्री, करुणा, प्रमोद और माध्यस्थ्य भाव ओतप्रोत कर दो। जिस विचार में इन चार भावों में से एक भी भाव होगा, विचार शुद्ध कहलाएगा। विचार पवित्र कहलाएगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तेरा दूसरा प्रश्न : समग्र विश्व में... जड़-चेतन सब पदार्थों में आत्मा कैसे देखी जाये? यदि सर्वत्र आत्मदर्शन हो जाये तो मन में परम शांति स्थापित होगी न?

जो जड़ पदार्थ हैं, उनमें चैतन्य का दर्शन कैसे होगा? जड़ में जड़ देखना और चेतन में चैतन्य देखना वास्तविक दर्शन है। हालाँकि पृथ्वी, जल, तेज वायु और वनस्पति दिखते हैं जड़, परंतु हैं चेतन! इन पृथ्वी वगैरह में चैतन्य का दर्शन किया जाता है। वैसे जो पशु, पक्षी और मानव हैं, उनमें आत्मवत दर्शन करने से अपना मन दिव्य शांति का अनुभव कर सकता है। परंतु चैतन्य का दर्शन करोगे कैसे? शब्दों में बोलना सरल है, व्यवहार में लाना इतना सरल नहीं है।

प्रत्येक जीवात्मा में विशुद्ध आत्मस्वरूप का दर्शन करने की आदत डालनी पड़ेगी। इसलिए एक अच्छा उपाय है : गुणदर्शन का।

गुणदर्शन, आत्मदर्शन है। दोषदर्शन, देहदर्शन है! जब तक देह है, तब तक दोष है। जब देह नहीं रहेगी, दोष भी नहीं रहेंगे। शुद्ध आत्मस्वरूप में एक भी दोष नहीं है। शुद्धात्मा गुणस्वरूप है। जीवात्मा में गुण देखा यानी आत्मदर्शन किया! जैनदर्शन गुण और गुणी को अपेक्षा से अभिन्न मानता है। मात्र मान्यता ही नहीं, वास्तविकता है। सब जीवों में विशुद्ध आत्मदर्शन करने का यह 'प्रेक्टीकल' उपाय है। प्रतिदिन... प्रतिक्षण इस उपाय को आजमाया जा सकता है।

इसका प्रारम्भ करना तेरे परिवार से। जिस परिवार के साथ तू रहता है, उस परिवार के एक-एक सदस्य के कोई न कोई गुण देखने का प्रयत्न करना। याद रखना, प्रत्येक जीवात्मा में गुण होते ही हैं। अपने पास गुणदृष्टि होगी तो गुण दिखेंगे ही।

किसी के दोष दृष्टिपथ में आ जाये तो सोचना कि 'दोष देह के हैं, आत्मा के नहीं!' दोषों को महत्व नहीं देना। दोष दूर करने का प्रयत्न अवश्य करना, परंतु दोषों के प्रति द्वेष नहीं करना यानी दोषित व्यक्ति के प्रति विद्वेष नहीं करना। परिवार के प्रत्येक सदस्य के विशिष्ट गुण याद रखना। उसके बाद मित्र एवं स्नेहीजनों के गुण देखना। गुणदर्शन से तेरा मन प्रफुल्लित रहेगा।

साथ-साथ विशुद्ध आत्मस्वरूप का, कर्मरहित शुद्धात्मा का ध्यान करना। शुद्ध आत्मद्रव्य का स्वरूप तो जानता है न? मौलिक आठ गुणों का ज्ञान तो है न? उन गुणों के माध्यम से आत्मद्रव्य का ध्यान करना चाहिए।

तेरा तीसरा प्रश्न : 'मेरी आत्मा ही परमात्मा है,' ऐसा विचार कर सकते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं? ऐसा विचार करने से अभिमान नहीं आता? मुझे ऐसा विचार करना चाहिए क्या? मेरी मनःस्थिति से आप परिचित हैं।

विचार अच्छा तो है परंतु अपूर्ण है! मूल स्वरूप में मेरी आत्मा परमात्मा है, वर्तमान में... अनादिकाल से मेरी आत्मा कर्मों के बंधनों से मलीन है... यदि मैं कर्मों के बंधन तोड़ दूँ तो परमात्म-स्वरूप प्रगट हो सकता है। 'ज्ञानसार' ग्रन्थ में कहा गया है कि **'शुद्धात्मद्रव्यमेवाहं' मैं शुद्ध आत्मद्रव्य हूँ** - इस विचार से पुनः-पुनः भावित होना चाहिए। अपने मूल - 'ओरिजिनल'स्वरूप का ज्ञान अपने धर्मपुरुषार्थ में प्रेरक बनता है।

अपने लोगों में आत्मा की विभावदशा का ज्ञान तो है, स्वभाव दशा का इतना ही अज्ञान है! विभावदशा का ज्ञान कर्मग्रन्थों के अध्ययन से प्राप्त होता है और कुछ लोग प्राप्त करते भी हैं, परंतु स्वभावदशा का ज्ञान जिन ग्रन्थों में से मिलता है, वे ग्रन्थ लोग पढ़ते ही नहीं! 'मेरा वास्तविक स्वरूप ऐसा ज्ञानमय है, ऐसा गुणमय है', यह जानने से वैसा स्वरूप प्राप्त करने की तमन्ना पैदा होती है। कर्मजन्य सुखों से आत्मा का अपना सुख बहुत ज़्यादा है, शाश्वत है, अविनाशी है-यह जानने से अनित्य और नाशवंत सुखों की तृष्णा कम होती है।

तू शुद्ध आत्मस्वरूप का ध्यान कर सकता है। कर्मरहित शुद्ध आत्मद्रव्य का चिन्तन करने से तेरी आध्यात्मिक प्रगति अच्छी होगी। आन्तर आनंद में अभिवृद्धि होगी। परंतु शुद्ध आत्मस्वरूप का ज्ञान अच्छी तरह प्राप्त कर लेना। ज्ञान के बिना ध्यान नहीं हो सकता। शुद्ध आत्मस्वरूप का ज्ञान गहराई में प्राप्त करना होगा। कैसे प्राप्त करेगा। यदि थोड़ा समय निकाल कर मेरे पास आ जाये तो? अभी कुछ दिन यहाँ रुकने का है। यदि तू आता हो तो दूसरे जिज्ञासु भी यहाँ आ सकते हैं और सबको इस विषय में मार्गदर्शन मिल सकता है।

अभी तो यहाँ अंजनशलाका-प्रतिष्ठा का महोत्सव शुरू होगा। परमात्मभक्ति का खूब अच्छा आयोजन हुआ है। अनेक साधु पुरुष भी यहाँ पधारे हैं। महोत्सव में आएगा तो प्रभुभक्ति का अवसर मिलेगा, बाद में अनुकूलता हो तो बाद में भी आ सकता है। तेरे तीन प्रश्नों का संक्षिप्त प्रत्युत्तर लिखा है। आत्मा में परमात्मस्वरूप का ध्यान करने की प्रक्रिया, मैं रूबरू बताऊँगा। प्रक्रिया बहुत अच्छी है, तू कर सकेगा।

स्वास्थ्य अच्छा है। सारे कार्यकलाप सुचारु रूप से चल रहे हैं। तेरी कुशलता चाहता हूँ।

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *प्रेम की यथार्थ अभिव्यक्ति परमात्मा के प्रति समर्पण में ही समाहित है।*
- *ज्यों-ज्यों आत्मा का परमात्मा के साथ तादात्म्य बढ़ता है... त्यों-त्यों दिव्य अनुभूतियों का आलोक उतरने लगता है, आत्मा की अवनि पर!*
- *कभी श्रमण भगवान महावीर के साथ घटी ग्वाले के द्वारा कानों में कील ठोंकने की घटना के बारे में गहराई से सोचा है? उस पीड़ा की अनुभूति महसूस की है? गहराई में उतरने पर यह संभव हो सकता है।*
- *परमात्म-समर्पण का रास्ता जितना भावुक एवं भावनाशील हृदय के लिए है... उतना तर्क-वितर्क की जाल में फँसे हुए बुद्धिजीवियों के लिए नहीं है!*
- *ध्यान खंड में, भावों के आलोक में परमात्मा से मिलन शक्य होता है! ठीक है, शुरू-शुरू में वह मिलन बिजली के कौंधने जैसा ही क्यों न हो? पर होता जरूर है।*

पत्र : २२

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र पढ़ते-पढ़ते हृदय गद्‌गद हो गया। परमात्म-मिलन की तीव्र अभीप्सा से तेरी चेतना का ऊर्ध्वीकरण हो रहा है। परमात्मप्रीति ही प्रेम की यथार्थ अभिव्यक्ति है। 'प्रेम' विश्व की शाश्वत यथार्थता है। मानव ने उस 'प्रेम' के स्वरूप को विकृत करके रख दिया है। प्रेम में संकीर्णता, क्षणिकता, क्षुल्लकता और मोहान्धता की विकृतियाँ प्रविष्ट हो गई हैं। इन विकृतियों से मुक्त 'प्रेम' विश्व में बहुत-बहुत कम लोगों में पाया जा सकता है।

समग्रता से परमात्मा के प्रति प्रेम कर लेना जरूरी है। परमात्मा के लिए ही जीवन है... परमात्मा के लिए ही अपना हृदय है, परमात्मा के लिए ही अपने तन-मन हैं, यह निर्णय कर लेना चाहिए। 'प्रेम का विशुद्धीकरण करना होगा। ज्यों-ज्यों प्रेम का विशुद्धीकरण होता जाएगा, त्यों-त्यों उसका ऊर्ध्वीकरण होता चलेगा, साथ-साथ चेतना का भी ऊर्ध्वीकरण होता जाएगा।

उपास्य से उपासक का, आराध्य से आराधक का ज्यों-ज्यों तादात्म्य बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों उपासक अगम-अगोचर दिव्य अनुभूतियाँ करता है! उसकी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनःसृष्टि दिव्य बन जाती है **'सायकोलॉजी ऑफ रिलीजन'** के लेखक **'श्री थूलेस' ने 'सेन्ट कैथराइन'** का प्रामाणिक विवरण दिया है। जब कैथराइन ईशुमसीह से तादात्म्य पाती थी, उसके शरीर के विभिन्न भागों में वैसी ही पीड़ा होती थी, जैसी पीड़ा ईशुमसीह को क्रॉस पर कील से ठोंकते समय हुई थी! ऐसी अवस्था में एक डॉक्टर को उनकी देखभाल करनी पड़ती थी। डॉक्टरी जाँच में पाया गया कि कैथराइन की पीड़ा वास्तविक थी।

प्रिय मुमक्षु! यदि अपना ऐसा तादात्म्य भगवान महावीर से हो जाये... और मनःसृष्टि में वह घटना... ग्वाले ने भगवान महावीर के कान में कील ठोके थे... आ जाये... प्रगाढ़ तादात्म्य हो जाए तो हम को भी वैसी ही पीड़ा की अनुभूति हो सकती है। वैसी विभिन्न अनुभूतियाँ हो सकती हैं। भगवान महावीर का उपदेश भी वैसे सुना जा सकता है! शुद्ध चैतन्य का परमात्मा के साथ वैसा प्रगाढ़ तादात्म्य स्थापित होना चाहिए! परंतु कब होगा वैसा तादात्म्य... पता नहीं।

जब कभी क्षणिक तादात्म्य भी हुआ है, मैंने ऐसी दिव्य अनुभूति की है। वह अनुभूति क्षणिक होती है... कभी-कभार होती है, परंतु मैंने अपूर्व आनंद पाया है। सेन्ट कैथराइन जैसी प्रगाढ़ और दीर्घकालीन अनुभूति कब होगी, नहीं जानता हूँ। चाहता अवश्य हूँ... लेकिन मात्र चाह से क्या होता है?

परमात्मा के ऐसे प्रगाढ़ ध्यान में लीन हो जाना है कि मेरी देह के अणु-अणु में परमात्मा प्रतिबिंबित हो जाये! कोई मेरी आँखों में देखे तो उसको परमात्मा के ही दर्शन हो! यह असंभव तो नहीं है!

अभी-अभी मैंने एक अमरीकी नागरिक **'टेड सेरियम'** का किस्सा पढ़ा है। टेड सेरियम में ऐसी चेतना विकसित हुई है कि वह कैमरे के लेन्स में दृष्टि कर देता है, फिर वह जिस वस्तु की कल्पना, ध्यान करता है 'क्लिक' करने पर कैमरे में वही फोटो आ जाता है! यह कोई धोखा या चालबाजी नहीं है। मनोवैज्ञानिक **डॉ. जूले आइसेनवेड** की एक कमिटी ने अनेक परीक्षण किए और उपलब्ध प्रमाण **'दी वर्ल्ड ऑफ टेड सेरियम'** के नाम से १९६७ में प्रकाशित कराया।

अलग-अलग कैमरे, प्लेटें और उसके चारों ओर लोह-आवरण खड़े करके भी चित्र खिंचवाए गए, जो सर्वथा वास्तविक मिले। इन फोटों को विश्व प्रसिद्ध पत्रिका **'लाइफ'** में प्रकाशित किया गया तथा अमरीका के अतिरिक्त अनेक देशों के टेलिविजन कार्यक्रमों में भी ये दिखाए गए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुछ वैज्ञानिकों ने तो ऐसे व्यवधान खड़े किए कि रेडियो-तरंगें भी प्रवेश न कर सके, तब भी टेड सेरियम ने मानसिक कल्पना के चित्र उतार दिए! उनकी शैली ध्यान की है। किसी वस्तु का वह तन्मयता तथा प्रगाढ़ एकाग्रता से ध्यान करता है, उस स्थिति में कैमरे को उनकी आँखों में 'फोकस' कर चित्र लिया जाता है, तो फोटो उनके चेहरे या आँखों का न आकर, उसी वस्तु का आता है, वह जिसका ध्यान करता है! वैज्ञानिक मान गए हैं कि टेड की ईमानदारी संदिग्धता से परे है। यह बात नहीं समझ पाए हैं कि यह कैसे होता है! आध्यात्मिक चेतना की जाँच भौतिक विज्ञानशास्त्री कैसे कर पाएँगे?

'टेड सेरियम' जैसी तन्मयता और प्रगाढ़ता अपने ध्यान में आ जाये तो!! परमात्मतत्त्व की दिव्य अनुभूतियाँ हुए बिना न रहें।

अपने धर्मग्रन्थों में जहाँ 'ध्यान' की चर्चा की गई है, लिखा है कि जिस समय मनुष्य समग्रता से जिस वस्तु का ध्यान करता है, उस समय वह उस वस्तु जैसा बन जाता है। भाव-ध्यान में ध्येय के साथ ध्याता का अभेद हो जाता है। ध्याता ध्येय रूप बन जाता है! ध्यान में जितनी प्रगाढ़ता उतना तादात्म्य प्रबल होता है।

आज वैज्ञानिक तौर पर यह बात सही सिद्ध हो गई है। सही सिद्ध होने से हमको क्या लाभ? उस दिशा में हम पूर्ण लगन से आगे बढ़े और सहानुभूति करने लगें, तो लाभ है। तेरे लिए चेतना के ऊर्ध्वीकरण का मार्ग सरल बन सकता है। परमात्मप्रीति और परमात्मभक्ति के क्षेत्र में तेरा प्रवेश हो गया है। अब परमात्मध्यान की दिव्य सृष्टि में प्रवेश पाने का भरसक प्रयत्न शुरू कर दे।

तेरा हृदय इतना कोमल है, सरल है, भावुक है कि तू इस दिशा में प्रगति कर सकता है। परमात्मसमर्पण का मार्ग जितना बुद्धिमानों का नहीं है, उतना भावनाशीलों का है। जितना तर्क-वितर्क का नहीं है, उतना श्रद्धा का है। जितना वाणी का नहीं है, उतना हृदय का है।

बस, इस मार्ग में एक ही भयस्थान है, संसार की माया-ममता और मृगजल का! संसार की सर्वथा भ्रान्त माया-ममता की छलना में यदि मन उलझ गया, भ्रान्ति को वास्तविकता मान लेने की भूल हो गई, तो मार्गभ्रष्ट होने में देरी नहीं होगी। भ्रान्ति में विसंवाद हो या संवाद हो, इससे क्या? भ्रान्ति में सुन्दरता हो या कुरूपता हो, तो भी क्या? भ्रान्ति में अनुकूलता क्या और प्रतिकूलता क्या?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यदि ऐसा चिन्तन-मनन चलता रहे... संसार की अर्थहीनता से हृदय परिचित हो जाये... तो परमात्मप्रीति का, परमात्मशक्ति का मार्ग सरल बन जाये! तू जानता है न कि क्षण-प्रतिक्षण संसार वेदनामय होता जा रहा है? अशांतिमय होता जा रहा है? पारिवारिक जीवन और सामाजिक जीवन कितना अस्त-व्यस्त एवं क्लेशपूर्ण बन रहा है? राष्ट्रीय जीवन और वैश्विक जीवन कितना भयानक बन रहा है? चारों ओर भय और त्रास का आतंक फैलता जा रहा है। इस परिस्थिति में शांति-समता का आस्वाद कहाँ से मिलेगा? परमात्म-समर्पण ही शांति-समता का आस्वाद करा सकता है। दूसरा कोई मार्ग नहीं है, दूसरा कोई उपाय नहीं है।

परमात्मा के स्मरण, दर्शन, स्तवन, पूजन के साथ परमात्मा का ध्यान भी अत्यन्त आवश्यक है। 'ध्यानखंड' में परमात्मा से मिलन होता है। भावालोक में मिलन होता है। भले, अभी वह मिलन क्षणिक हो... विद्युत के चमक जैसी हो, परन्तु वह क्षण जीवन को, प्राण को... हृदय को आनंद से भर देता है।

आजकल ध्यानमार्ग की अपने संघ में उपेक्षा हो रही है। ध्यानमार्ग की उपेक्षा का परिणाम है, चित्त की चंचलता और विक्षिप्तता। भले ही मनुष्य दर्शन-पूजन करे, तप-त्याग करे, शास्त्रों का अध्ययन करे, परंतु परमात्मध्यान नहीं करता है तो उसका मन शांत, प्रशांत नहीं बन सकता है। तुझे ज्ञान है कि कई ऐसे त्यागी-तपस्वी लोग भी शिकायत करते हैं कि 'हमारा मन स्थिर नहीं रहता, मन में शांति नहीं मिल रही...।' कई शास्त्रवेत्ताओं की मनःस्थिति भी ऐसी ही है। ध्यान कक्ष में वे पहुँचते ही नहीं! ध्यान कक्ष में ही परमात्मतत्त्व से मिलन होता है!

तू प्रतिदिन ध्यान कक्ष में जाना, थोड़ी क्षणों के लिए भी जाना! तू जा सकेगा, चूँकि तेरे प्राणों में परमात्म-चाह जगी हुई है। झूठे संसार के प्रति तेरी ज्ञानदृष्टि खुली हुई है। संसार के सुख तेरे पास भरपूर होने पर भी संसार के प्रति तेरे हृदय में कोई प्रबल आकर्षण नहीं है। इसलिए कहता हूँ कि तू ध्यान खंड में प्रवेश कर सकेगा और परमात्मा से तेरा सुखद मिलन हो जायेगा।

दुनिया की भ्रमणाओं में उलझना मत। यदि जागृत नहीं रहा तो उलझने में देरी नहीं लगेगी। उलझते हुए कइयों को देखता हूँ। त्यागी-तपस्वी भी उलझ जाते हैं...! भ्रमणाओं में खो जाते हैं... तब हृदय सावधान हो जाता है... 'कहीं मैं न उलझ जाऊँ!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दैनिक जीवनचर्या सुचारु रूप से चल रही है। 'योगोद्वहन' प्रसन्नता से हो रहा है। शारीरिक और मानसिक स्वस्थता है। अभी-अभी कुछ वर्षों से कुदरत ही आन्तर मंथन की ओर प्रेरित कर रही हो, ऐसा लगता है। आन्तर आनंद की यात्रा प्रारम्भ हो रही है! ऐसा लगता है।

तेरी कुशलता चाहता हूँ।

डभोई

१ मार्च, १९७८

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *तत्त्वज्ञान के प्रकाश में अनेक मानसिक गुत्थियाँ सुलझ जाती हैं... और फिर अपूर्व आनंद की भीतरी दुनिया आलोकित होने लगती है।*
- *सच्चे एवं समर्पित हृदय से की गई परमात्मा की प्रार्थना कभी निष्फल नहीं जाती!*
- *परमात्मा की आज्ञा का समुचित पालन उनकी कृपा के सहारे ही शक्य होता है।*
- *पाप औरों के नहीं वरन स्वयं के देखो... ताकि पश्चात्ताप का झरना फूट निकले भीतर में! दुःख देखना हो तो औरों के देखो ताकि करुणा की गंगा बहती रहे अंतःकरण में!*
- *संबंधों को बोझ मत बनने दो। ताल्लुकात यदि सख्त हो जाएँगे तो दिल-दिमाग भी तंग रहेंगे। संबंधों को मुलायम रखो... पथरीले मत होने दो।*

पत्र : २३

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरी कुशलता के समाचार मिले, प्रसन्नता हुई। मैं भी प्रसन्न हूँ। तू जानता है कि मुझ से तपश्चर्या नहीं होती है और अभी 'योगोद्वहन' में मैं तपश्चर्या कर रहा हूँ, इसलिए तुझे चिन्ता होना स्वाभाविक है। परन्तु चिन्ता मत करना, किसी प्रकार की शारीरिक-मानसिक व्यथा के बिना और तन-मन की प्रफुल्लता के साथ तपश्चर्या हो रही है। 'योगोद्वहन' की विशिष्ट क्रियाएँ भी सुचारु रूप से हो रही हैं।

प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकाल... प्रसन्नता के पुष्प खिलते रहते हैं। दीनता, उदासीनता... विकलता... मानो पलायन ही हो गए हैं! उस कवि ने कहा है न...

अवधू! सदा मगन में रहना!

अभी मगनता है। ज्ञानमग्नता है। कुछ ऐसी गुत्थियाँ सुलझ रही है मन की, कुछ ऐसा तत्त्वप्रकाश प्राप्त हो रहा है... इस से अपूर्व आन्तर आनंद, अनुभव कर रहा हूँ। जिस तरह प्राकृतिक दृश्य सूरज की रोशनी के अनुसार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपना रूप ग्रहण करते हैं, उसी तरह हमारा आन्तर आनंद भी तत्त्वप्रकाश से वृद्धि पाता है। बाह्य पदार्थ और बाह्य व्यक्ति पर अब आनंद निर्भर नहीं रहा। प्रिय-अप्रिय और अनुकूल-प्रतिकूल पर अब आनंद आधारित नहीं रहा।

वर्षों तक यह मेरी उलझन बनी रही। प्रिय और अनुकूल के संयोग में आनंद अनुभव करता था, अप्रिय और प्रतिकूल के संयोग में विषाद होता था। प्रिय के वियोग में उदासीनता घेर लेती थी। इससे... उदासीनता से मुक्ति पाने को मन वर्षों से तड़पता था। प्रिय-अप्रिय में सम स्थिति चाहता था चित्त की। तप-त्याग और ज्ञान-ध्यान से भी मैं यही सम स्थिति प्राप्त करना चाहता था... परंतु असफल रहा! प्रिय और अनुकूल स्थिति ने मुझे जहाँ हँसाया था... अप्रिय और प्रतिकूल स्थिति ने मुझे रुलाया भी है। मैं हमेशा मेरी यह कमजोरी मानता रहा। मेरी विवशता समझता रहा... परंतु 'ज्ञानसार' के अनुचिंतन ने मेरी कमजोरी को मिटा दिया है। मेरी विवशता नष्ट कर दी है। परमात्मा ने मानो कि मेरी पुकार सुन ली है। परमात्मा की अचिन्त्य कृपा के बिना मात्र चिन्तन-अनुचिन्तन से मेरी दीनता... उदासीनता दूर नहीं हो सकती थी। मैं कई वर्षों तक परमात्मा से प्रार्थना करता रहा हूँ। मेरी प्रार्थना मानो कि सुन ली गई है। मुझे इससे अत्यंत प्रसन्नता है।

सच्चे हृदय से की हुई परमात्म-प्रार्थना निष्फल नहीं जाती है, इसका मुझे अनुभव है। देर हो सकती है, परन्तु गलत नहीं है। परमात्मा से उनकी ही आज्ञाओं का पालन करने की क्षमता प्राप्त करने की प्रार्थना करना सर्वथा उचित है। चित्त को समस्थिति में रखना, उनकी ही आज्ञा है। उनकी परम कृपा से उस आज्ञा का पालन संभव है। इसलिए तुझे भी मैं यही कहता हूँ कि तू प्रार्थना के द्वारा अपनी चित्तस्थिति को सम बनाने का प्रयत्न कर।

अभी... अभी... थोड़े दिन पूर्व एक प्रश्न का स्वयंभू समाधान प्राप्त हुआ। मनुष्य की एक बहुत पुरानी आदत है कि वह दूसरों के पाप देखता है और अपने दुःख देखता है। दूसरों के पाप देखकर उनके प्रति द्वेष, तिरस्कार और धिक्कार जैसी मनोवृत्ति धारण करता है और अपने दुःखों को रोता फिरता है। अपने दुःखों को दूर करने के लिए अनेक पापाचरण भी करता है... फिर भी वह पाप तो दूसरे मनुष्यों के ही देखता है। इससे वह सदैव अशांत, अस्वस्थ और व्याकुल बना रहता है।

यदि मनुष्य को शांति, स्वस्थता और प्रसन्नता से जीवन व्यतीत करना है, तो उसको यह आदत बदलनी होगी। उसको पाप अपने स्वयं के देखने होंगे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और दुःख दूसरों के देखने होंगे। दूसरों के पाप देखे नहीं और अपने दुःखों को देखे नहीं, तो शांति का मार्ग मिल जाये। धर्म का मार्ग मिल जाये।

दूसरों के दुःख देखने से उसके हृदय में दया और करुणा उभड़ेगी। अपने पाप देखने से पश्चात्ताप होगा और पापमुक्त होने के विचार आएँगे।

परंतु यहाँ एक प्रश्न पैदा होता है। दूसरों को... जिनकी हमारे ऊपर जिम्मेदारी होती है, उनके पाप नहीं देखें तो उनको कैसे सुधारेंगे? उनको पापों से कैसे बचाएँगे? यदि उनको नहीं बचाएँ तो जिम्मेदारी का पालन नहीं होगा।'

आश्रितों के पाप देखे जा सकते हैं, परंतु उनके प्रति द्वेष नहीं होना चाहिए। बीमार को डॉक्टर देखता है... परंतु बीमार के प्रति रोष नहीं करता है। प्रेम से उसका निदान करता है और दवाई देता है। रोग शरीर के हैं, तो पाप आत्मा के हैं। शरीर से रोगी के प्रति करुणा करते हैं, तो आत्मा से पापी के प्रति करुणा क्यों नहीं? करुणा से उसको समझाया जाये और पापमुक्त करने के उपाय बताए जायें। उपाय वह करे तो अच्छा है, नहीं करें तो भी उसके प्रति धिक्कार की भावना मत रखो।

किसी की भी जिम्मेदारी इतनी सख्त रूप से अपने सिर पे मत ले लो कि जिससे आप व्याकुल बन जाओ। वास्तव में हर मनुष्य की जिम्मेदारी उसकी स्वयं की है। हम तो फालतू ही सारी दुनिया की जिम्मेदारी सिर पे चढ़ाए फिरते हैं। 'सब जीव पापमुक्त हो जाये', वैसी भावना रखना उचित है, परंतु जो पापमुक्त नहीं बनते हैं, उनके प्रति रोष या क्रोध करना अनुचित है। दुनिया के सारे संबंध एक नाटक के संबंध जैसे तो हैं। नाटक में जो संबंध दिखाए जाते हैं... क्या वे सच होते हैं? नहीं। वैसे, इस भवनाटक के संबंध भी सच नहीं होते। यह तो मात्र व्यवहार दशा है। निश्चय से तो आत्मा निर्बंध है और अलिप्त है। इस विचार को हृदय में सुरक्षित रखकर जीवन व्यतीत करना आवश्यक है। मुझे तो मेरी मनःशांति में इस तत्त्वविचार ने अच्छा सहयोग दिया है। संबंधों के व्यापक बंधन और जिम्मेदारियों ने मनुष्य को इतना मूढ़ बना दिया है कि वह अपने आपको खो बैठा है। जैसे उसका स्वयं का कोई अस्तित्व ही न हो। जो है, वह संबंध है। जो है, वह दुनिया है। परंतु समझ लेना चाहिए कि संबंधों के लिए हम नहीं है, अपने लिए संबंध है। दुनिया के लिए हम नहीं हैं, अपने लिए दुनिया है। अपने आपको खो दिया... तो फिर संबंध किसलिए?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीवन जीने की कला प्राप्त कर ले। कुछ ऐसे विचारों का परिवर्तन कर ले। दुःखपूर्ण संसार में भी ज्ञानी पुरुष आनंद से जी सकता है। उसको दुःख होता है, तो दूसरों को दुःखी देख कर। सुखी जीवन जीने के उपाय... मार्ग होने पर भी जो जीव उस मार्ग पर नहीं चल रहे हैं और दुःखी होते हैं, उनको देखकर ज्ञानी पुरुषों का हृदय दुःखी होता है। उनको अपने स्वयं के कोई दुःख नहीं होते। वे मानसिक सृष्टि के स्वर्ग में जीते हैं।

जो मनुष्य अपने आपको दुःखी नहीं मानता है, वह स्वर्ग में ही जीता है। जो मनुष्य अपने आपको दुःखी मानता है, वह नरक में जीता है। क्यों जानबूझकर नरक में जीना? स्वर्ग में जीना सीख लो। तत्त्वज्ञान से ही यह संभव है। परमात्मकृपा से ही यह संभव है।

क्या लिखना था और क्या लिख दिया! तेरे पत्र के प्रत्युत्तर तो सबके सब रह गए। और मैंने मेरी बातें ही लिख दी। यूँ तो तेरा पत्र आने से पूर्व ही यह सब लिखना था, परंतु 'परमात्म-प्रतिमा-प्रतिष्ठा' महोत्सव में व्यस्त होने से नहीं लिख सका। तेरे प्रश्नों के उत्तर लिखूँगा, परंतु आज नहीं... आगे लिखूँगा।

'योगोद्वहन' में एक 'कालग्रहण' की विशिष्ट क्रिया करने की होती है। शास्त्र-अध्ययन में 'कालशुद्धि' को कितना महत्त्व दिया है ज्ञानी पुरुषों ने! 'कालशुद्धि' न हो तो शास्त्राध्ययन नहीं हो सकता है। भावशुद्धि में 'कालशुद्धि' प्रबल निमित्त माना है। इस विषय में भी चिंतन हो रहा है। श्रमणजीवन में शास्त्रअध्ययन का कितना महत्वपूर्ण स्थान है। शास्त्रअध्ययन के लिए तप करना पड़ता है, यौगिक क्रियाएँ करनी पड़ती हैं, कालशुद्धि देखनी पड़ती है। कभी तू यहाँ आएगा तब इस विषय में बात करूँगा। है यह थोड़ी गहरी बात, परंतु तू समझ सकेगा।

तेरी चित्त प्रसन्नता चाहता हूँ।

डभोई,

१ अप्रैल ७८

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *वैराग्य केवल साधु जीवन में ही नहीं वरन गृहस्थजीवन में भी उतना ही जरूरी एवं उपयोगी है। पर यह बाजार से खरीदी जा सके, वैसी चीज नहीं है!*
- *वैराग्य सहज स्वाभाविक गुण है। जब आत्मा की विकास यात्रा योग-साधना के क्षेत्र में से गुजरती है... तब स्वतः वैराग्य का आविर्भाव होने लगता है।*
- *कभी भी बाहरी आचरण या क्रियाकलाप से व्यक्ति के व्यक्तित्व का मूल्यांकन करने की गलती मत करना।*
- *जड़-चेतन पदार्थों का उपयोग करना एक बात है और उससे लगाव बनाए रखना अलग बात है।*
- *वैराग्य के साथ-साथ संयम साधना का उत्साह एवं उमंग भी साधक जीवन में जरूरी है।*

पत्र : २४

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

पत्र मिला, तेरी कुशलता, प्रसन्नता से मेरी अन्तरात्मा प्रसन्न बनी। इस पत्र में तूने एक महत्वपूर्ण प्रश्न पूछ लिया है, इसलिए पहले तेरे प्रश्न का प्रत्युत्तर देना उचित लगता है, अन्यथा तुझे अपने मन की बातें कुछ लिख देता! आजकल मन में कुछ समस्याओं का समाधान तात्विक दृष्टि से खोज रहा हूँ। समाधान मिल भी रहे हैं और आन्तर-शांति का प्रशस्त-पथ आलोकित हो रहा है।

आज तेरे प्रश्न का उत्तर लिखता हूँ। **तेरा प्रश्न है : संयमजीवन-साधु जीवन में मात्र वैराग्य ही अपेक्षित है या दूसरी भी बातें अपेक्षित हैं? हैं, तो कौन-कौन सी?**

प्रिय मुमुक्षु! वैराग्य मात्र साधु जीवन में ही नहीं, गृहस्थजीवन में भी इतना ही आवश्यक है। परंतु वैराग्य ऐसी वस्तु नहीं है कि बाजार से खरीद ले आएँ! वैराग्य सहज-स्वाभाविक गुण है। जब आत्मा की विकास यात्रा योग क्षेत्र में प्रवेश करती है, आत्मा में सहज भाव से वैराग्य का आविर्भाव हो जाता है। गृहस्थ मनुष्य का योग के क्षेत्र में प्रवेश हो सकता है। जिसको हम 'मिथ्यादृष्टि'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहते हैं, उनका भी योगक्षेत्र में प्रवेश हो सकता है। उनमें वैराग्य जागृत हो ही जाता है।

तू 'वैराग्य' का अर्थघटन क्या करता है? वैराग्य का सम्बन्ध जितना बाह्य आचरण के साथ नहीं है, उतना मनुष्य के हृदय के साथ है। विरक्त हृदय का कभी तो बाह्य-आचरण में प्रतिबिम्ब दिखता है, कभी प्रतिबिम्ब नहीं भी दिखे। अपनी आदत है, बाह्य-आचरण से मनुष्य को नापने की! यह अपनी एक बहुत बड़ी भ्रमणा है। बाह्य आचरण से उसका हृदय भिन्न हो सकता है। हृदय से भिन्न उसका बाह्य आचरण हो सकता है। बाह्य आचरण में रागप्रचुरता दिखे, और हृदय में वैराग्य हो सकता है! वैसे, बाह्य जीवन व्यवहार में वैराग्य दिखे पर हृदय में राग की आग जलती हो सकती है।

दूसरे मनुष्यों में वैराग्य का निर्णय करना अपने लिए मुश्किल है। हम तो अपने ही विषय में निर्णय कर सकते हैं कि हम में वैराग्य है या नहीं। शांतिपूर्ण, प्रसन्नतापूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए 'वैराग्य' अनिवार्य है। किसी भी जड़-चेतन पदार्थ से अपना लगाव नहीं रहना चाहिए, यही वैराग्य है। जड़-चेतन पदार्थ का उपयोग करना एक बात है, लगाव होना दूसरी बात है। विरक्त मनुष्य जड़-चेतन पदार्थ का उपयोग तो करता है, परंतु उन पदार्थों से उसका लगाव नहीं होता है।

संयमजीवन में वैराग्य तो आवश्यक है ही, वैराग्य के अलावा दूसरी बहुत सी बातें अपेक्षित हैं। सच्चे हृदय से, मोक्षमार्ग की आराधना करने की लगन से यदि संयमजीवन यानी साधु जीवन स्वीकारा जाता हो तो वैराग्य के अलावा दूसरी अनेक योग्यताएँ अपेक्षित हैं।

एक युवक ने एक बार मुझे पूछा था : 'वैराग्य में क्या वह आनंद, वह खुशी, वह मस्ती होती है, जो राग में होती है?' मैंने उसको कहा था : 'तूने राग में ही आनंद और मस्ती का अनुभव किया है, मैंने दोनों का अनुभव किया है! संसार में मैंने रागजन्य मस्ती का अनुभव किया है और श्रमणजीवन में वैराग्य की मस्ती का भी अनुभव किया है। रागजन्य मस्ती से वैराग्यजन्य मस्ती... आनंद... खुशी कितनी अपूर्व होती है... मैं शब्दों में कैसे बताऊँ? तू अनुभव करके देख! भर्तृहरि को पिंगला रानी के संग में जो खुशी, जो मस्ती का अनुभव हुआ था, इससे ज़्यादा मस्ती का अनुभव जंगलों में परमात्मा के ध्यान में हुआ होगा। निर्जन वनों में एकाकी परिभ्रमण की भी एक अद्‌भुत मस्ती होती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक बात समझ लेना कि वैराग्य में नीरसता नहीं है। वैराग्य में रसप्रचुरता है। वैराग्य में शांति... अन्तःकरण की परम शांति है। ऐसी शांति और शांति के क्षणों में ही संयमजीवन की विशिष्ट आराधना हो सकती है। वैराग्य के साथ-साथ चाहिए साधना-आराधना का उत्साह और उमंग!

वैराग्य है, परंतु ज्ञानप्राप्ति का उत्साह न हो, तपश्चर्या करने का उल्लास न हो, आवश्यक धर्मानुष्ठानों का उमंग न हो, तो वैराग्य दीर्घकाल नहीं टिकेगा। क्षणजीवी बन जायेगा। भगवान महावीर स्वामी ने **'सूत्रकृतांग'** सूत्र में यह बात संक्षेप में कह दी है। उन्होंने कहा है कि संयमजीवन में **'उद्यमवीर्य'** होना चाहिए। 'उद्यमवीर्य' का अर्थ यही है, ज्ञान-तपश्चरण आदि में सतत उत्साह से प्रवृत्ति करना।

जब कभी कोई साधु या साध्वी कहते हैं कि 'हमें अध्ययन में मजा नहीं आता, धर्मग्रन्थों को पढ़ने में उत्साह नहीं बढ़ता' इत्यादि... तो मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। ज्ञान... अभिनव ज्ञान प्राप्त करने में, धार्मिक-आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने में साधक का उत्साह-उमंग बढ़ता जाना चाहिए। तपश्चर्या एवं विविध धर्मानुष्ठान करने में हर्षोल्लास बढ़ता जाना चाहिए। वैराग्य को दीर्घजीवी बनाने के लिए, उद्यमवीर्य अनिवार्यरूप से होना चाहिए। मैंने ऐसे दो-चार युवक एवं तरुण को इसलिए दीक्षा नहीं दी, क्योंकि उनमें यह 'उद्यमवीर्य' मैंने नहीं देखा। वैराग्य हो जाने से संसार तो छोड़ देना सरल है, परंतु उद्यमवीर्य के अभाव में वैराग्य को स्थिर करना संभव नहीं है। साधु जीवन यानी साधक जीवन! साधना के जीवन में ज्ञानानंद ही बड़ा आनंद है। ज्ञानानंद नहीं होगा तो फिर मन विषयानंद प्राप्त करने को दौड़ेगा। साधक साधनापथ से गिर जाएगा।

वैराग्य के साथ जैसे 'उद्यमवीर्य' चाहिए वैसा दूसरा 'धृतिवीर्य' चाहिए। धृतिवीर्य का अर्थ होता है, चित्तसमाधान। संयममार्ग में स्थिरता! साधना के जीवन में भी प्रश्न तो पैदा होंगे ही। मन है ना! मन तर्क-वितर्क करता रहता है। आत्मा जागृत होती है तो उन तर्क-वितर्कों का समाधान करती रहती है। मन के तर्क वितर्कों का समाधान करना... पुनः-पुनः समाधान करना आवश्यक बन जाता है। जिनके पास आत्मज्ञान होता है, शास्त्रज्ञान होता है, वे अपने मन का समाधान स्वयं ही कर लेते हैं। मानसिक समाधान में ही स्थिरता, समता और प्रसन्नता बनी रहती है। मन के विकल्पों में ही अस्थिरता, विषमता और विकलता विकसित होती है। वैरागी को अपने मन का समाधान स्वयं ही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करने चाहिए। यदि स्वयं समाधान नहीं कर सकता है, तो गुरुजनों के प्रति पूर्ण समर्पण करदे, गुरुदेवों से समाधान प्राप्त कर, स्थिरता प्राप्त करनी चाहिए।

आजकल संसार में व्यापकरूप से मनुष्यों में चित्त की चंचलता और विकलता दिखाई दे रही है। इसमें भी तरुण और तरुणी, युवक व युवती विशेष रूप से चंचल और विकल पाए जा रहे हैं। असंख्य विकल्पों से उनका मन बेचैन है। उनके पास सही समाधान ढूँढ़ने का ज्ञान नहीं है। स्कूल-कॉलेजों में ऐसा ज्ञान दिया नहीं जाता और जहाँ से ऐसा आत्मज्ञान मिल सकता है, वहाँ उनसे जाया नहीं जाता! परिणाम स्वरूप, करोड़ों युवक-युवतियों का मानसिक-वैचारिक स्तर गिर गया है। वे अपने स्वयं के, परिवार के, समाज के, प्रश्न सुलझा नहीं सकते हैं। सुलझाने जाते हैं और उलझ जाते हैं! उनका जीवन अनेक व्यसनों से एवं विसंवादों से भर जाता है। वे दिशाशून्य एवं शून्यमनस्क भटक रहे हैं।

एक बात याद रखना कि हर मनुष्य में वैराग्य का बीज तो होता ही है। उस बीज को अंकुरित होने के लिए, विकसित होने के लिए चाहिए अनुकूल वातावरण! अनुकूल शिक्षा और दीक्षा! वैराग्य को पनपने का आज वातावरण ही कहाँ है? राग-द्वेष को उत्तेजित करने का ही वातावरण बन गया है। वैराग्य का बीज भीतर ही भीतर सड़ जाएगा अथवा बीजरूप ही पड़ा रहेगा। वैराग्य के बिना जीवन के प्रश्नों का सच्चा समाधान मिलने वाला नहीं। गृहस्थजीवन में भी मन का विरक्तभाव अत्यंत आवश्यक है! 'वैराग्य तो साधु-साध्वी में ही चाहिए', ऐसी भ्रमणा यदि मन में हो तो निकाल देना। जिस किसी को चित्तशांति चाहिए, मन की स्वस्थता चाहिए, आत्मा का ऊर्ध्वीकरण चाहिए, उसको वैराग्यभावना का विकास करना ही होगा।

एक बात जरूरी नहीं है कि वैराग्य हो तो त्याग करना ही पड़े! संसार के विषयसुख भोगने वाले भी वैरागी हो सकते हैं! वैरागी होने से विषयोपभोग में मनुष्य पागल नहीं बन जाता। उसकी चित्तवृत्तियाँ असंयमी नहीं बन जाती। वैराग्य के विकास में मनुष्य, पाप हो जाने पर भी, पश्चात्ताप करता है। 'मैंने यह काम अच्छा नहीं किया, मैंने बुरा काम किया...' ऐसा विचार उसके मन में आ जाता है। ऐसे विचारों से बुरे कार्यों पर नियंत्रण आ जाता है।

तूने तो साधु जीवन में वैराग्य की आवश्यकता बताई है, मैं कहता हूँ कि गृहस्थजीवन में भी वैराग्यमय अन्तःकरण चाहिए! साधु जीवन में तो अनिवार्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रूप से वैराग्य चाहिए। त्याग हो, परंतु वैराग्य नहीं हो तो त्याग भी पतन ही करवाता है। वैराग्यरहित त्याग से अभिमान ही बढ़ता है। अहंकार और तिरस्कार बढ़ता है। स्वयं के त्याग का अहंकार और दूसरों के प्रति तिरस्कार बढ़ता है। जीवन बुराइयों से भर जाता है। वैराग्यरहित त्यागी कभी-कभी देखने में आ जाते हैं... तो उनके जीवन में ये बातें प्रत्यक्ष रूप से पाई जाती हैं! उनका पतन होते भी देखा जाता है।

साधु जीवन का अर्थ ही है वैराग्य सहित त्यागमय जीवन! साधु जीवन का कर्तव्य भी वैराग्य भावना को पुष्ट करने का होता है। क्योंकि वैराग्य के विकास के साथ-साथ आत्मानंद की, ज्ञानानंद की, सच्चिदानंद की वृद्धि होती है।

वैराग्य के साथ-साथ उद्यमवीर्य और धृतिवीर्य चाहिए। वैसे, तीसरा धीरतावीर्य चाहिए। धीरतावीर्य का अर्थ है, अक्षोभ! दुःखों में, कष्टों में विक्षुब्धता नहीं। साधु जीवन को स्वीकार करने वाले यह समझकर ही स्वीकार करते हैं कि 'इस जीवन में मुझे जानबूझ कर दुःख एवं कष्टों को सहन करने हैं। दुःख सहन करने की क्षमता मेरे में होनी ही चाहिए।' ऐसा समझकर जो साधु-साध्वी बनते हैं, वे दुःख या कष्ट आने पर नाराज नहीं होते, प्रसन्न होते हैं! उनमें 'धीरतावीर्य' होता है। मन विक्षुब्ध नहीं बनता, प्रसन्न बनता है। 'वैराग्य' के साथ यदि यह 'धीरतावीर्य' हो तो वह भगवान महावीर की भाँति अक्षुब्धता के साथ कष्टों को सहन कर अपनी आत्मा को उज्ज्वल बना सकता है।

महान गृहस्थ ऐसे श्रावक-श्राविकाओं के जीवन में भी 'धीरतावीर्य' देखने को मिलता है! पूर्वकाल में श्रेष्ठि सुव्रत, श्रेष्ठि सुदर्शन, महासती सीता, अंजना, मनोरमा वगैरह के जीवन में यह 'धीरतावीर्य' था। तीव्र कोटि के कष्ट आने पर भी वे विचलित नहीं हुए थे, विक्षुब्ध नहीं बने थे। गृहस्थजीवन में 'धीरतावीर्य' का कुछ विकास हुआ हो और साधु जीवन को स्वीकार करें, तो उसका साधु जीवन विशेष सफल बनता है। अथवा साधु जीवन का स्वीकार इस दृढ़ संकल्प के साथ किया हो कि 'मुझे साधु जीवन में, कष्ट आने पर भी क्षुभित नहीं होना है, चंचलचित्त नहीं बनना है, कष्टों से दूर नहीं जाना है...' तो भी वह साधु जीवन का आनंद पा सकता है। समता सहित अविचल चित्त से कष्ट सहन करने की क्षमता 'धीरतावीर्य' है।

'श्री सूत्रकृतांगसूत्र' में ग्यारह प्रकार के वीर्य बताए हैं। शेष आठ प्रकार के वीर्य आगे के पत्र में लिखूँगा। अब डभोई से विहार की तैयारियाँ चल रही हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सौराष्ट्र की पुण्यभूमि की ओर जा रहे हैं। वर्षाकाल लींबडी में व्यतीत होगा। स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। तपश्चर्या का असर शरीर पर होता ही है... परंतु मेरे सारे कार्यकलाप सुचारु रूप से चल रहे हैं। तू कहाँ मिलेगा? लींबडी में? तेरे तन-मन की प्रसन्नता चाहता हूँ।

डभोई,

१-५-७८

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जीवन की यात्रा में रास्ता हमेशा सीधा या एक सा नहीं रहता है... कभी टेढ़ा-मेढ़ा... कभी ऊबड़-खाबड़... भी रास्ता आता है... पर यात्रा को रोके बगैर गतिशील रहना है।*
- *अपने अच्छे एवं अद्‌भुत कार्यों की प्रसिद्धि का मोह भी खतरनाक है! 'अहं' की आग इससे बढ़ती है... और 'अहं' की उपस्थिति में 'अहं' की उपासना शक्य नहीं है।*
- *शरीरशक्ति का तनिक भी अपव्यय साधक के लिए उचित नहीं है। शरीरशक्ति, वचनशक्ति एवं विचारशक्ति का संग्रह करना चाहिए।*
- *साधना की राह में प्रतिपल जागृत रहकर आत्मा को प्रमाद से बचाना है।*
- *बाहरी त्याग, तप के साथ-साथ भीतरी अनासक्ति भी अति आवश्यक है।*

पत्र : २५

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

मन की अक्षुण्ण प्रसन्नता जीवनयात्रा में सहचरी बन रही है। कभी जीवनपथ सीधा आता है... कभी टेढ़ा भी आता है! कहीं पर मोड़ भी आता है... परंतु यात्रा अबाधित गति से हो रही है। यात्री अपने गन्तव्य के प्रति प्रगति कर रहा हैं। इस जीवन यात्रा में कुछ सहयात्री अपना पथ बदल लेते हैं, तो कुछ नए यात्री साथी बन जाते हैं... यात्रा है न! बहुत लंबी यात्रा है। लंबी यात्रा में सब यात्री समान धैर्यवाले नहीं होते हैं। कुछ यात्री अधीर बन जाते हैं : 'इतना चलने पर भी अभी तक गाँव नहीं आया...? हम तो थक गए हैं... हमने गलत रास्ता ले लिया है... हमें आगे नहीं बढ़ना है... हम तो यहाँ ही रुक जाएँगे.. वापिस लौट जाएँगे..।' यात्रा में ऐसी ध्वनि अक्सर सुनाई देती है।

ऐसे अधीर यात्री अपनी यात्रा पूर्ण नहीं कर पाते।

डभोई से बड़ौदा होते हुए खंभात पहुँचे थे। खंभात गुजरात का ऐतिहासिक प्राचीन नगर है। 'स्तंभन पार्श्वनाथ' भगवंत की प्रभावशाली नयनरम्य प्रतिमा है। दर्शनीय जिनालय है। वैसे तो यहाँ करीबन ७० जिनमंदिर हैं और विशालकाय उपाश्रय है। दस वर्ष पूर्व इसी नगर में मेरे परम गुरुदेव श्री का स्वर्गवास हो गया था। उन महापुरुष का पुण्य नाम था आचार्यदेव **श्री**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विजयप्रेमसूरीश्वरजी महाराज। मैंने उनके ही पावन चरणों में श्रमण जीवन स्वीकार किया था। दीक्षा और शिक्षा दोनों, उन परम करुणावंत परम गुरुदेव श्री से पाई थी।

वे जैन-आगम ग्रन्थों के प्रौढ़ विद्वान थे। 'कर्म-फिलॉसॉफी' के अनेक ग्रन्थों का उन्होंने तलस्पर्शी अध्ययन किया था और अनेक साधुओं को अध्यापन कराया था। संयम जीवन की महायात्रा के वे अप्रमत्त, सदैव जागृत यात्री थे। कितना उनका वात्सल्यपूर्ण हृदय था! महान आचार्य होते हुए भी वे विनम्र थे। कोई अभिमान नहीं, कोई सम्मानलिप्सा नहीं। चारित्रधर्म उनको आत्मसात हो गया था। हजारों स्त्री-पुरुषों को उन्होंने चारित्रधर्म के चाहक और आराधक बनाए थे। उनमें मानसिक और शारीरिक अपूर्व सहनशीलता थी। मैंने उनके जीवन में इतनी विशेषताएँ पाई हैं कि उन विशेषताओं का वर्णन लिखने बैठूँ तो कई वर्ष निकल जाय! जब हम खंभात में थे, तभी उनकी १० वीं स्वर्गारोहण तिथि आई थी। वैशाख वद : ११ (राजस्थानी जेठ वद ११) उनकी स्वर्गवास तिथि है।

उन्होंने आधुनिक शिक्षा नहीं पाई थी, फिर भी आधुनिक शिक्षा पाने वाले अनेक युवक उनके शिष्य बने। अनेक संपन्न परिवार के युवकों ने और प्रौढ़ों ने उनके चरणों में जीवन समर्पण किया था। उनका जीवन तपोमय था, फिर भी उनकी मुखाकृति उग्रता की विकृति से मुक्त थी। वे उतने ही उदार, सहनशील और गंभीर प्रकृति के महापुरुष थे।

मैंने तुझे गत पत्र में 'सूत्रकृताङ्गसूत्र' के अनुसार ११ प्रकार के 'वीर्य' के विषय में लिखा था न? इस महापुरुष के जीवन में ये ग्यारह प्रकार के 'वीर्य' उल्लसित थे। ऐसा प्रतीत होता था।

तीन प्रकार के वीर्य गत पत्र में बताए थे : १. उद्यमवीर्य, २. धृतिवीर्य, ३. धीरतावीर्य। जिस किसी को आत्मसाधना के पथ पर अग्रसर होना है, उनमें ये वीर्य अवश्य होने ही चाहिए। इसके बिना वह आत्मकल्याण के मार्ग पर प्रगति नहीं कर सकता।

चौथा वीर्य है, **शौण्डीर्य-वीर्य।** इसका सीधा अर्थ होता है, त्याग-संपन्नता। उसका हृदय त्यागप्रिय हो। भोगलालसा नष्ट हो गई हो, अथवा उपशांत हो गई हो। शौण्डीर्य-वीर्य का दूसरा अर्थ है, आपत्ति में अदीनता! आपत्ति में खेद नहीं, ग्लानि नहीं, दीनता नहीं। कैसा भी विकट कर्तव्य उपस्थित हो, जिस मनुष्य में शौण्डीर्य-वीर्य होगा, वह हर्ष से, उल्लास से विकट कर्तव्य का भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पालन करेगा। यह वीर्य कायर और दीन-हीन मनुष्य में नहीं हो सकता है। कायर और सुखशील मनुष्य विषम... विकट कर्तव्य से दूर भागता है। पराक्रमी पुरुष कठिन... दुष्कर कार्य को सहर्ष ग्रहण करता है और पूर्ण लगन से उस कार्य को पूरा करने का पुरुषार्थ करता है।

पाँचवाँ वीर्य है, **क्षमा-वीर्य।** जिस महामानव में यह क्षमावीर्य होता है, उसके प्रति कोई कितना भी आक्रोश करे, अपमान करे, अपकीर्ति करे, फिर भी उनके मन में थोड़ा सा भी क्षोभ नहीं होता है। जरा सी भी ग्लानि नहीं होती है। आक्रोश करने वाले के प्रति, अपमान करने वाले के प्रति रोष नहीं होता है। उसका मन निर्विकारी बना रहता है।

प्रिय मुमुक्षु! मात्र साधु जीवन में ही नहीं, गृहस्थजीवन में भी यदि सफल जीवन व्यतीत करना है तो ये बातें गृहस्थजीवन में भी काफी आवश्यक हैं। इन बातों का अभाव, जीवन में अच्छाइयों का अभाव पैदा कर देता है। हर मनुष्य के जीवन में कुछ प्रतिकूल परिस्थितियाँ आती हैं, उन परिस्थितियों में जो मनुष्य अपने मनोमस्तिष्क को निराकुल बनाये रखता है, अव्यथित बनाये रखता है, वह, मनुष्य की जीवनयात्रा को आनंदपूर्ण बना सकता है। जैसे दूसरे लोगों के आक्रोश होने पर भी अपने मन में विक्षुब्धता नहीं आनी चाहिए वैसे हम कितना भी चमत्कारिक कार्य करें फिर भी अपने में औद्धत्य नहीं आना चाहिए। इसको कहते हैं **गाम्भीर्यवीर्य!**

अपने अद्‌भुत कार्यों की प्रसिद्धि का मोह नहीं चाहिए! 'मैंने ऐसे-ऐसे अच्छे कार्य किए हैं... मेरे जैसा चमत्कारिक कार्य कोई नहीं कर सकता...' इस प्रकार गर्व करना व्यर्थ है। अपने अच्छे कार्यों के आधार पर गर्व करना, औद्धत्य है। गंभीर मनुष्य कभी भी अपने महान कार्यों पर गर्व नहीं करेगा, औद्धत्य नहीं करेगा। गाम्भीर्य एक प्रकार का वीर्य है, यानी पराक्रम है।

साधक मनुष्य में गाम्भीर्य होना ही चाहिए। विशिष्ट ज्ञान की प्राप्ति में गाम्भीर्य अनिवार्य माना गया है। श्री स्थूलभद्रजी जैसे कामविजेता महामुनि ने अल्प क्षणों के लिए गाम्भीर्य खो दिया था... अपनी भगिनी-साध्वीओं को अपनी विशिष्ट ज्ञानशक्ति से चकित कर देने की भावना जगी... और सिंह का रूप बनाकर बैठ गए..! 'मेरी भगिनी-साध्वियों को ज्ञात हो कि मैंने कैसी ज्ञान शक्ति... मंत्र शक्ति प्राप्त की है!' इस औद्धत्य से गुरुदेव भद्रबाहु स्वामी ने उनको आगे विशेषज्ञान नहीं दिया!

एक शिष्य ने साधना करते-करते पानी पर चलने की एवं मनचाही वस्तु प्राप्त

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करने की सिद्धि प्राप्त कर ली। वह गुरु के पास गया और गर्व से बोला : 'गुरुदेव! मैं पानी पर चल सकता हूँ और जो चाहूँ वह वस्तु प्राप्त कर सकता हूँ।'

गुरुदेव बोले : 'यह कोई बड़ी बात नहीं है। पानी पर चला देने का काम तो नाविक भी कुछ पैसे लेकर कर देता है और वस्तुएँ बनाने का जहाँ तक प्रश्न है, मामूली से जादूगर भी रुपया, फल, पुष्प... बनाते रहते हैं! क्या इतनी सारी तपस्या व साधना का उद्देश्य इस तरह की तुच्छ शक्तियों की प्राप्ति के लिए ही था? तपस्या व साधना का ध्येय तो परमात्म-प्राप्ति ही होना चाहिए, आत्मा और परमात्मा का अभिन्न संबंध स्थापित करने के लिए ही होना चाहिए।'

सातवाँ वीर्य है, **उपयोगवीर्य।** द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव के ज्ञानसाधक को, आत्मसाधक होना चाहिए। आत्मसाधक ज्ञानी होना चाहिए। उसका प्रत्येक कार्य ज्ञानदृष्टि से होना चाहिए। द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव का ज्ञानी और हर कार्य में उस ज्ञान का उपयोग! इसको कहते हैं, उपयोग वीर्य। उपयोग के मुख्य दो भेद बताए गए हैं : साकार और अनाकार। साकारोपयोग के आठ प्रकार हैं और अनाकार उपयोग के चार प्रकार हैं। प्रस्तुत में उन भेद-प्रभेदों की चर्चा नहीं करना है। मुझे तो यह बताना है कि मोक्षमार्ग की आराधना करने वाले आराधक में प्रतिपल जागृति चाहिए! उपयोग यानी जागृति!

आठवाँ वीर्य है, **योगवीर्य।** जैन परिभाषा में 'प्रवृत्ति' को भी योग कहा गया है। मन की प्रवृत्ति को मनोयोग, वचन की प्रवृत्ति को वचनयोग और काया की प्रवृत्ति को काययोग। अशुभ प्रवृत्ति को अशुभयोग और शुभ प्रवृत्ति को शुभयोग कहा गया है। इसी संदर्भ में यहाँ तीन प्रकार के योगवीर्य बताए गए हैं। **मनोवीर्य, वचनवीर्य** और **कायवीर्य।**

चित्त की, मन की अशुभ, अपवित्र वृत्तियों का विरोध करना, **मनोवीर्य** है। वैसे, शुभ और पवित्र विचारों में मन को प्रवृत्त करना भी मनोवीर्य है।

वचनवीर्य का अर्थ है, निष्पाप वचन बोलना, पुनरूक्तिरहित वचन बोलना। कर्कश, अहितकारी और असत्य नहीं बोलना। प्रिय, पथ्य और सत्य वचन होता है, वचनवीर्य।

कायवीर्य का अर्थ है, कायसंकोच। निष्प्रयोजन अपने हाथ-पैरों का प्रसारण-संकुचन नहीं करना। कूर्म की तरह काया का संगोपन करना। शरीरशक्ति का तनिक भी अपव्यय नहीं करना, साधक जीवन के लिए अनिवार्य है। विचारशक्ति

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

का, वचन की शक्ति का और काया के शक्ति का दुर्व्यय नहीं करना, सद्व्यय करना साधक मनुष्य के लिए अनिवार्य शर्त है।

नौवाँ वीर्य है, **तपोवीर्य।** बाह्य और आन्तर तपश्चर्या के बारह प्रकार हैं। आत्मा की विशुद्धि के लक्ष्य से जो साधक साधनापथ पर चलता है, उसके जीवन में उल्लासपूर्वक यह बारह प्रकार की तपश्चर्या देखने को मिलेगी ही। आन्तर तपश्चर्या का लक्ष्य बनाकर बाह्य तपश्चर्या वह करता ही रहेगा।

दसवाँ वीर्य है, **संयमवीर्य।** पाँच इंद्रियों का निग्रह, पाँच आश्रवों से विरति, चार कषायों पर विजय और मन-वचन-काया की अशुभ प्रवृत्ति का त्याग- यह है १७ प्रकार का संयम। ऐसे संयम में साधक अपनी पूरी ताकत लगा देता है, चूँकि यही उसकी साधना है, इसी साधना के लिए उसने अपना जीवन समर्पित किया होता है। जरा भी मन को शिथिल किए बिना संयम-आराधना में साधक तल्लीन रहता है।

ग्यारहवाँ वीर्य है, **अध्यात्मवीर्य।** अध्यात्म की परिभाषा यहाँ गजब की गई है! 'मेरी संयम आराधना में कोई भी दोष नहीं लगे, ऐसी सावधानी का नाम है, अध्यात्म! ऐसा अध्यात्मवीर्य जिस साधक की आत्मा में उल्लसित हो वह साधक कैसा महान योगी बन सकता है। निरतिचार संयमधर्म का पालक ही तो महान योगी पुरुष होता है।

प्रिय मुमुक्षु! साधु जीवन में वैराग्य के साथ ये सारी बातें अपेक्षित हैं। तूने कैसा प्रश्न पूछ लिया!! मैंने भी कितना लंबा उत्तर लिख दिया! तू इन ११ प्रकार के 'वीर्य' के विषय में मनन करना। कुछ बातें तू शायद नहीं समझ पाएगा। जब तू यहाँ आएगा, विस्तार से समझाऊँगा।

हम लिंबडी में आ गए हैं। वर्षाकाल यहाँ व्यतीत करने का है। नगर छोटा-सा है, परंतु स्वच्छ और सुंदर है। तीन आकर्षक जिनमंदिर हैं। उपाश्रय, धर्मशाला और आयंबिल भवन भी है। ६०० करीबन् जैन परिवार हैं। मूर्तिपूजक और स्थानकवासी-दोनों समाज में दुर्भावना नहीं है, क्लेश नहीं है। हमारा उपाश्रय भी ऐसा है कि स्वाध्याय ध्यान बड़ी शांति से हो रहा है। प्रवचन में लोग अच्छी तादाद में लाभ ले रहे हैं।

आत्म विशुद्धि की आराधना में तेरी प्रगति होती रहे, यही मंगल कामना।

१४-६-७८,

लिंबडी (सौराष्ट्र)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जब तक औरों से लबालब प्रेम की अपेक्षा बनी रहेगी तब तक व्यथा और वेदना भी बढ़ती रहेगी।*
- *दुनिया के लोगों से अखंड व अटूट प्रेम की अपेक्षा रखना यानी बबूल के पेड़ से आम के फल की इच्छा रखना।*
- *प्रेम देने का तत्व है... लेने का या मांगने का नहीं! पाने की लालसा हृदय को प्रतिपल जलाती रहेगी।*
- *प्रेम करना ही है, तो पहले हृदय को अनासक्त एवं विरक्त बनाना जरूरी है। तो ही सही अर्थ में प्रेम कर सकोगे।*
- *स्वकेन्द्रित विचारधारा को समष्टि के कल्याण की भावना में परिवर्तित करना होगा।*

पत्र : २६

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला, तेरी आन्तर वेदना ने मेरे अन्तःकरण को स्पर्श किया। मैं जानता हूँ, तेरी वेदना द्रव्याश्रित नहीं है, तेरी वेदना भावाश्रित है। द्रव्याश्रित वेदना तुझे कैसे होगी? तुझे जितने और जैसे द्रव्य चाहिए, मिल गए हैं! तेरे मनपसंद द्रव्य मिल गये हैं, इसलिए द्रव्याभावजन्य वेदना संभव नहीं है। अब तुझे चाहिए हृदय के भाव! दूसरों के हृदय के भाव। प्रेमपूर्ण भाव चाहिए। वैसे भाव नहीं मिल रहे हैं, इसलिए तू व्यथित है।

तेरी यह व्यथा... यह वेदना बनी रहेगी। जब तक तू दूसरों के प्रेम से लबालब भावों की अपेक्षा रखेगा तब तक तेरे जीवन में व्यथा और वेदना रहेगी ही। मैंने तुझे पहले भी लिखा था कि संसार के किसी भी व्यक्ति के साथ प्रेम अखंड नहीं रह सकता। कैसा भी प्रेम हो, एक दिन टूटेगा ही। इस प्रेम का स्वभाव ही है टूटने का! तू दुनिया के लोगों से अखंड प्रेम की अपेक्षा रखता है। तेरी यह अपेक्षा कभी परिपूर्ण होनेवाली नहीं है। बबूल के वृक्ष से आम्रफल की अपेक्षा रखने वालों को क्या कहना?

फिर भी तुझे करना हो तो कर ले प्रेम! पर यह समझ लेना कि वह प्रेम टूटेगा अवश्य। समझ कर आगे बढ़ना। जब संसार में चारों ओर से तुम्हारा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रेमभंग होगा तभी तेरा प्रेम परमात्मा के प्रति 'भक्ति' बनकर बहेगा। जब तक तुझे संसार से प्रेम करना हो, कर ले। सर्व दिशाओं से सारे प्रेम संबंध खत्म होने पर ही तू परम दिव्य तत्त्व के प्रति अभिमुख बनेगा।

तू ऐसा व्यक्ति चाहता हैं कि जो तुझे समग्रता से चाहे। तेरे हर विचार को समझे। तेरी हर इच्छा के अनुकूल बने। तेरे प्रति कभी भी नाराज न बने। तेरे अलावा इस दुनिया में वह किसी से भी स्नेह न करे। तुझे ही वह परमात्मा माने... भगवान माने और तेरी उपासना करता रहे। उसके मनोमंदिर के सिंहासन पर तेरी ही मूर्ति स्थापित करे।

मैं तेरी मनःस्थिति का अनुमान लगा सकता हूँ। पर सापेक्ष भावों की तेरी लालसा से मैं सुपरिचित हूँ। प्रिय मुमुक्षु, तू कब तक स्वप्नों की दुनिया में उड़ता रहेगा? प्रेम के स्वप्न मात्र स्वप्न ही हैं, वास्तविकता कुछ भी नहीं। जो वास्तविकता है - उससे प्रेम कर ले। हर परिस्थिति को सहजता से स्वीकार कर ले। किसी से तिरस्कार न कर, नफरत न कर। किसी के प्रति आक्रोश न कर।

जब तू मेरे पास आया था, मैंने तुमसे कहा था, याद है? प्रेम पाने का तत्त्व नहीं है, प्रेम प्रदान करने का तत्त्व है। तू स्वार्थरहित प्रेम का प्रदान करता रहे। जिसको तू तेरे निर्मल हृदय का प्रेम देता है, उससे तू प्रेम की अपेक्षा मत रख। कहा था न मैंने? शायद तू मेरी बात भूल गया है, अन्यथा तेरी शिकायत न होती। प्रेम पाने की लालसा हृदय को जलाती रहती है। तेरा हृदय जल रहा है। जलने में मजा आता हो तो मेरा विरोध नहीं है। क्या कहूँ तुझे? तेरे दिमाग पर प्रेम का भूत सवार हो गया है।

तूने कितने पात्र बदले? अभी तक एक भी पात्र तुझे ऐसा नहीं मिला, जैसा तू चाहता है। चूँकि तू ही वैसा पात्र नहीं बना है न। प्रेम के नाम पर तू अपनी रागदशा को ही पुष्ट कर रहा है। तेरी मोहदशा को ही बढ़ावा दे रहा है। हाँ, मैं प्रेमतत्त्व का विरोधी नहीं हूँ, मेरा विरोध राग से है, मेरा विरोध मोह से है। मैं तो विरागी बनकर प्रेम करने को कहता हूँ। अनासक्त बनकर प्रेम करने को कहता हूँ। हृदय को पहले विरक्त और अनासक्त बनाना अनिवार्य मानता हूँ। वैसा हृदय ही सच्चा प्रेम कर सकता है। जिसका ऐसा विरक्त हृदय हो, उससे प्रेम करने में भी मजा आता है। ऐसे व्यक्ति ही प्रेमतत्त्व को समझते हैं। निरपेक्ष प्रेम ऐसे ही मनुष्य कर सकते हैं। तू एक काम कर : या तो विरक्त बन जा, अनासक्त बन जा। अथवा ऐसे विरक्त एवं अनासक्त मनुष्य को खोज ले और उससे प्रेम कर! यदि तुझे प्रेम करना ही है तो!

अपार राग और अनन्त आसक्ति से भरे लोगों से प्रेम करना भयानक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खतरा है। ऐसे लोग यदि प्रेम करने आएँ तो भी नहीं करना! प्रेम क्या, परिचय भी नहीं करना चाहिए ऐसे लोगों से। यदि मेरी बात तुझे जँच जाय तो अच्छा है। तेरी व्यथा, तेरी वेदना दूर हो जाये, यही मेरी मनोकामना है।

तू क्या अन्तर्निरीक्षण करेगा? स्वस्थ बनकर सोचेगा? तुझे कहाँ जाना है? क्या पाना है? आज तू कहाँ जा रहा है? कहाँ पहुँच गया है? तेरे दिल में आग धधक रही है और तेरी आँखें आँसू बरसा रही हैं। तू अकेला तड़प रहा है...। तेरी इस विवशता पर मेरा हृदय तीव्र संवेदना अनुभव करता है।

लौट जा अपने सही रास्ते पर। अपनी आत्मा को सम्हाल ले। अपने महान कर्तव्यों का पालन करने हेतु तत्पर बन जा। तेरी जो सूक्ष्म बुद्धि है, तेरी जो कार्यकुशलता है, तेरी जो मोहक प्रतिभा है उसका विनियोग कर दे समष्टि के कल्याण में। विनियोग कर दे जीव मात्र के हित में। तू भूल जा तेरे स्वयं के व्यक्तित्व को और भूल जा स्वयं के अस्तित्व को। तेरा स्वतंत्र कोई अस्तित्व नहीं है, स्वतंत्र कोई व्यक्तित्व नहीं है। तू है, मात्र अनन्त जीवसृष्टि का एक कण!

विचारों को व्यापक बना ले। स्वकेन्द्रित विचारधारा को बदलना ही होगा। जब तक स्वकेन्द्रित बना रहेगा, तेरी आन्तरिक व्यथा का अंत नहीं आएगा। तेरी वेदना की आग नहीं बुझेगी। तू प्रतिदिन, थोड़ी क्षणों के लिए 'अहं' से मुक्त होकर, 'मम' से मुक्त होकर चिंतनशील बन। तेरी समस्याओं का समाधान तू स्वयं पा लेगा। तेरे प्रश्नों के उत्तर तुझे स्वयं प्राप्त हो जाएँगे।

आज तुझे ज़्यादा नहीं लिखूँगा। लिखना तो बहुत है, परंतु आज नहीं। अत्यंत कार्यव्यस्त हूँ। अभी-अभी गणिपद-महोत्सव हो गया। बाहर गाँवों से परिचित-अपरिचित लोगों का आना-जाना जारी है। पत्रवर्षा भी निरन्तर चालू है। प्रत्युत्तर देना आवश्यक मानता हूँ।

प्रिय मुमुक्षु! क्या-क्या लिखूँ, क्या-क्या न लिखूँ? तू यदि यहाँ पर आ जाये तो बहुत बातें करनी हैं। यहाँ सब सुविधा है। सौराष्ट्र के आतिथ्य का भी मधुर अनुभव होगा।

अल्पक्षणों के लिए भी व्यथामुक्त बन कर, मेरी बातों पर चिंतन करके पत्र लिखना। यदि तू मेरे प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा रखता है तो इसी क्षण से तू वेदनारहित बन जा। मन को वेदना से मुक्त कर दे। मन में परमात्मा की पावनकारी प्रतिष्ठा कर दे।

२०-७-७८, लींबडी (सौराष्ट्र)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जो मनुष्य निरपेक्ष प्रेम के तत्व को समझ नहीं पाता है, वह कभी भी विश्वव्यापी चेतना के साथ तादात्म्य की अनुभूति नहीं कर पाता है।*
- *अपने को दुःख देनेवालों के प्रति, अपना बिगाड़ने वालों के प्रति भी तिरस्कार या दुर्भाव की भावना नहीं रखना है।*
- *अपराधी के अपराधों को भूलकर जब करुणा की परमपावनी गंगा मनुष्य के हृदयगिरि से बहती है, तब वह गंगा से भी ज़्यादा पवित्र होती है।*
- *मोहदृष्टि से तो जीवों के प्रति अन्याय एवं अनाचार ही होगा। मोक्षमार्ग की आराधना में ज्ञानदृष्टि अनिवार्य है।*
- *मोहदृष्टि से की गई धर्मआराधना, आराधना नहीं, अपितु विराधना बन जाती है।*

पत्र : २७

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तू मेरे पत्र की प्रतीक्षा करते-करते अधीर बन गया होगा। कई दिनों से सोचता हूँ कि 'आज तो पत्र लिखना ही है,' परंतु कोई न कोई विक्षेप आ ही जाता है! तेरी स्मृति बनी रहती है, चूँकि तू मेरी विस्मृति नहीं कर सकता है! कभी तू मेरी विस्मृति कर भी देगा, तो भी मेरे हृदय में तेरी स्मृति बनी ही रहेगी। तू मेरी बात नहीं मानेगा तो भी तेरे प्रति मेरे हृदय में स्नेह बना रहेगा। तू विश्वास करना, मेरी ओर से तेरे कोमल भावों को क्षति नहीं पहुँचेगी।

निरपेक्ष स्नेह, निरपेक्ष प्रेम विश्व में सर्वोपरि तत्त्व है। जो मनुष्य इस तत्त्व को नहीं पाता है, वह विश्वव्यापी चैतन्य के साथ तादात्म्य नहीं पा सकता है। सर्वात्मा के साथ एकत्व की मधुर अनुभूति नहीं कर सकता है। भावात्मक भूमिका पर जो जीवत्व के साथ एकत्व स्थापित नहीं कर सकता है, वह सिद्धशिला पर, द्रव्यात्मक भूमिका पर शुद्ध चैतन्य के साथ अभेद कैसे पा सकता है? मोक्ष पाने की बातें करने वाले लोग, 'हमें मोक्ष चाहिए', ऐसी बातें करने वाले लोग अपने जीवन में क्या जीवत्व के साथ प्रेम के माध्यम से, निरपेक्ष स्नेह के माध्यम से एकत्त्व स्थापित कर रहे हैं? नहीं, सापेक्ष प्रेम अथवा दुर्दान्त द्वेष करते हुए वे लोग मोक्ष की ओर नहीं, नर्क की ओर आगे बढ़ रहे हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रिय मुमुक्षु! धर्म का मूलभूत तत्त्व निरपेक्ष प्रेम है। किसी भी जीवात्मा के प्रति द्वेष नहीं, तिरस्कार नहीं! कभी हो जाय द्वेष, तो शीघ्र ही क्षमायाचना कर, द्वेष की आग को बुझा देना। तुझे दुःख देने वालों के प्रति, तेरा विनाश करने वालों के प्रति भी अपने हृदय में द्वेष नहीं रखना। यदि तेरी चेतना थोड़ी भी जागृत है, तो तेरा हृदय द्वेषमुक्त बनेगा ही। अभी थोड़े दिन पूर्व मैंने एक रशियन कवि 'येवतुशेन्को' द्वारा लिखी गई एक घटना पढ़ी। दूसरे विश्वयुद्ध के समय की वह घटना है। **कवि येवतुशेन्को** के शब्दों में ही यह घटना लिखता हूँ :

'मुझे वह पुरानी बात याद आ गई। तब मैं ७-८ साल का बच्चा था। उस समय मेरी माँ 'फ्रन्ट' पर नहीं गई थी। यह शायद १९४१ की बात है। उन दिनों में जब मैं जर्मन सैनिकों के मौत के समाचार सुनता था तब मुझे बड़ी खुशी होती थी, परंतु एक दिन मैंने करीबन २० हजार जर्मन कैदी सैनिकों को लाइन में 'मॉस्को' की सड़क पर गुजरते देखा। वे जर्मन कैदी हमारे रशियन सैनिकों के घेरे में चल रहे थे। राजमार्ग के दोनों ओर दर्शकों की भीड़ जम गई थी। दर्शकों में ज़्यादातर रशियन महिलाएँ ही थी।

इन महिलाओं के हाथ थके हुए थे। युद्ध के भार से और दुःख से उनकी कमरें झुकी हुई थी। सिंगार तो वे भूल ही गई थी। वर्षों से उन महिलाओं ने अपने होठों पर 'लिपस्टिक' भी नहीं लगाई थी। किसी के पिता, किसी का पुत्र, किसी का पति, इन जर्मन सैनिकों के हाथों मारा गया था। वे सब औरतें क्रोध और भयंकर घृणा से जल रही थी। वे सब जर्मन सैनिकों पर गालियाँ बरसा रही थी।

सबसे आगे रशियन सैनिक चल रहे थे, उनके बाद जब जर्मन सैनिक गुजरते थे, क्या पता... रशियन महिलाओं में एकाएक कैसा परिवर्तन आ गया! जर्मन सैनिकों को देखते-देखते वे सब मौन हो गई। सारे राजमार्ग पर स्तब्धता छा गई।

मेरे देश की माताओं ने और बहनों ने तब देखा कि जर्मन सैनिकों की दाढ़ी बढ़ गई थी... वे सब दुबले-पतले हो गए थे। वे सब घायल बने हुए थे। उनके वस्त्र फटे हुए थे। शर्म से उनके चेहरे लटक गए थे। सिवाय उनके बूट की आवाज, सारे राजमार्ग पर सन्नाटा छा गया था।

इतने में मैंने देखा एक रूसी महिला, रशियन सैनिकों का घेरा तोड़कर, एक जर्मन सैनिक के पास पहुँच गई। उसने अपने सुन्दर रूमाल में बंधा हुआ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक बंडल निकाला, उसको खोला, उसमें से एक 'ब्रेड' निकाली और उस जर्मन सैनिक की जेब में डाल दी। उस औरत ने यह 'ब्रेड' अपने लिए खरीदी थी। वह जर्मन सैनिक अशक्ति से लड़-खड़ाता हुआ चल रहा था। इस रशियन महिला को देखकर, चारों ओर से हजारों रशियन महिलायें जर्मन सैनिकों के पास पहुँच गई और उनको रोटी, सिगरेट वगैरह देने लगी! यह देखकर मुझे उस वक्त ऐसा लगा कि वे जर्मन सैनिक दुश्मन नहीं रहे थे, वे इन्सान थे! मात्र वे इन्सान थे!'

रशियन कवि ने निरपेक्ष स्नेह के भव्य विजय की कैसी अद्‌भुत घटना लिखी है? यदि वह दृश्य मुझे देखने को मिलता... तो मेरी आँखों से अविरत अश्रुधारा बहती! अपराधी के अपराधों को भूल कर उनके दुःखों से द्रवित होकर, उनके दुःख मिटाने वाली करुणा जब मनुष्य के हृदयगिरि से बहती है... वह करुणा गंगा से भी ज़्यादा पवित्र होती है।

निर्व्याज और निरपेक्ष प्रेम का मूल्यांकन करना। ऐसा प्रेम अमूल्य और दुर्लभ होता है। जहाँ से भी ऐसा प्रेम मिलता हो, उस मानव को महामानव मानना। उस मानव को महात्मा समझना। याद रखना तप करने वाले, त्याग करने वाले, विद्वान और पंडित तो बहुत मिल जाएँगे, परंतु ऐसा अद्‌भुत प्रेम देने वाले बहुत ही कम मिलेंगे। यदि तूने ऐसा प्रेम देने वालों को परखा नहीं और ठुकरा दिया, तो जीवन की अक्षम्य गंभीर भूल होगी।

तेरे अनेक अपराधों को जिन्होंने सहन किए हैं, तेरी अनेक गलतियों को जिन्होंने खूब प्रेम से सुधारने की कृपा की है, तेरे अविनय, औद्धत्य और अनौदार्य की जिन्होंने 'नोट, नहीं की है... सदैव तेरे प्रति स्नेह और ममता से भीनी दृष्टि से ही देखा है... तू उनको क्या समझता है? तूने उनको किस दृष्टि से देखा है? तेरे हृदय में उनको कैसा स्थान दिया है?

मुझे यह बता कि तूने अपने जीवन में कभी किसी के अपराध सहन किए हैं? तेरे साथ दुर्व्यवहार करने वालों के प्रति हँसते मुँह क्षमा प्रदान की है? तेरी बुराई करने वालों के प्रति तेरा स्नेह अखंड रहा है? तो फिर तेरी आदर्शवादिता कहाँ रही? तेरी सुपात्रता कहाँ रही? तू अन्तरात्मा से सोचना यह बात।

पर्युषणा-पर्व निकट है। जीवसृष्टि के साथ ज्ञानदृष्टि से मधुर संबंध स्थापित करने का यह महापर्व है। मोहदृष्टि से तो जीवसृष्टि के साथ अन्याय और अनाचार ही होगा। ज्ञानदृष्टि अनिवार्य है, मोक्षमार्ग की आराधना में।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मोहदृष्टि से की हुई आराधना, आराधना नहीं विराधना है। मैं चाहता हूँ कि पर्युषणपर्व के दिनों में तू मेरे पास आ जाए। यहाँ तेरे संतप्त हृदय को शांति मिलेगी, तृप्ति होगी। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। सारे कार्यकलाप सुचारु रूप से चल रहे हैं।

२०-८-७८

लींबडी (सौराष्ट्र)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *सूक्ष्मचिंतन की गहराइयों में बँगला और झोपड़ी, दोनों में ज़्यादा अंतर प्रतीत नहीं होता है। दोनों का रूप मूलभूत रूप से एक सा लगता है।*
- *इस विश्व में सुंदरता, कुरूपता का उपहास करती नजर आती है। सुंदरता की आँखों में कुरूपता के लिए तिरस्कार भरा भाव दिखाई देता है।*
- *संसार की सुख-सुविधाओं का त्याग करना सरल है, भोजन का त्याग करना भी इतना मुश्किल नहीं है... जितना कि अपनी विशिष्टता का त्याग करना, अपने व्यक्तित्व को त्यागना।*
- *व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य एक तरह की मोहजाल है और अन्तर्यात्रा में यह मोहजाल बाधक बनती है।*
- *दुनिया अपनी विशिष्टता जाने या नहीं... इससे क्या फर्क पड़ता है? परमात्मा तो जान ही रहे हैं।*

पत्र : २८

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

प्रत्युत्तर लिखने में असह्य विलम्ब हो ही गया! नाराज मत होना। कुछ शारीरिक, कुछ सामाजिक और कुछ आन्तरिक प्रतिकूलता ने दो महीने से कुछ लिखने ही नहीं दिया है। कुछ शारीरिक स्वस्थता पाने और कुछ मानसिक प्रसन्नता पाने, नगर के बाह्यप्रदेश में आया हूँ।

इधर हम एक बँगले में रह रहे हैं। यहाँ एकान्त है, समृद्धि है और चारों तरफ प्रसन्नता का वातावरण है। बँगले के बहुत पास, पक्की सड़क के किनारे उजड़े स्थान पर एक झोपड़ी है। प्रतिदिन उस झोपड़ी का दैन्य, दारिद्र्य और कष्ट साफ-साफ दिखता है। हालाँकि सूक्ष्मचिंतन के क्षेत्र में बँगले और झोपड़ी में बहुत अन्तर प्रतीत नहीं होता है। दोनों की सुन्दरता और कुरूपता मानों एक-दूसरे को समझ रही है।

अभी आकाश स्वच्छ है, निरभ्र है। कोई छोटा सा मेघ-शिशु भी आकाश-पथ पर दिखाई नहीं देता है। वृक्ष निःस्तब्ध हैं। मन कुछ विशिष्ट चिंतन में डूब रहा है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस विश्व में जहाँ देखो वहाँ सुन्दरता, कुरूपता का उपहास करती दिखाई दे रही है। कुरूपता, सुन्दरता से ईर्ष्या करती दिखाई दे रही है। सुन्दरता की आँखों में उपहास के उन्मत्त भाव भरे हैं, तो कुरूपता की आँखों में ईर्ष्या की आग सुलग रही है। दोनों अशांत हैं, दोनों बेचैन हैं, दोनों संत्रस्त हैं।

सौन्दर्य मनुष्य को इसलिए पसन्द है, भाता है, चूँकि सौन्दर्य मनुष्य को विशिष्टता प्रदान करता है। मनुष्य अपना वैशिष्ट्य चाहता ही है। वैशिष्ट्य 'अहं' की खुराक है! मनुष्य अपनी विशिष्टता बढ़ाने के लिए कुछ न कुछ करता ही रहता है। अथवा मनुष्य जो कुछ करता है, उसमें अपनी विशिष्टता को उभारने की वृत्ति बनी रहती है। इस प्रकार अहंकार पुष्ट बनता जाता है। यदि मनुष्य जागृत न हो तो उसका अहंकार इतना बढ़ जाता है कि वह परमात्मा को भी तुच्छ मानने लगता है।

संसार की सुख-सुविधाओं का त्याग करना सरल है। स्नेही-स्वजनों का त्याग करना आसान है, कुछ समय के लिए भोजन का त्याग करना भी मुश्किल नहीं है... परंतु अपनी विशिष्टता का त्याग करना बड़ा मुश्किल कार्य है। राज्यवैभव छोड़ा जा सकता है, विशिष्टता का वैभव छोड़ना सरल काम नहीं है।

जब भर्तृहरि राज्य का त्याग कर संन्यास लेने सद्गुरु के पास पहुँचे, गुरुदेव से विनम्र शब्दों में प्रार्थना की, 'गुरुदेव, मुझे संन्यास-दीक्षा देने की कृपा करें।'

गुरुदेव जानते थे कि 'यह राजा भर्तृहरि है। राज्य का भोग-सुखों का त्याग कर रहा है। संन्यास में मात्र बाह्य भौतिक सुखों का ही त्याग अपेक्षित नहीं है, चाहिए अपनी महत्वाकांक्षाओं का त्याग। चाहिए अपने विशिष्ट-वैभवों का त्याग। संन्यास लेने के पश्चात उसको यह ख़्याल नहीं आना चाहिए कि 'मैं दूसरे संन्यासियों से श्रेष्ठ हूँ, चूँकि मैंने राज्य का त्याग किया है। दूसरों से बढ़कर मैंने त्याग किया है... मैं इन सब संन्यासियों में विशिष्ट हूँ... श्रेष्ठ हूँ।'

गुरुदेव ने भर्तृहरि को कहा : 'अभी तुम इस आश्रम में रहो, योग्य समय आने पर तुम्हें संन्यास-दीक्षा मिलेगी।' भर्तृहरि ने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य की। गुरु यही देखना चाहते थे कि भर्तृहरि अपना वैशिष्ट्य कब भूलते हैं? 'मैं राजा हूँ', यह राजापने का वैशिष्ट्य जब तक वह नहीं भूले, तब तक उसमें सच्ची विनम्रता नहीं आ सकती और विनम्रता के बिना संन्यास कोई महत्व नहीं रखता।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुरु ने भर्तृहरि की कुछ परीक्षा ली। जब भर्तृहरि परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ तब गुरु ने उनको संन्यास दीक्षा दी। तब भर्तृहरि में 'मैं संन्यासी हूँ' वैशिष्ट्य-कल्पना भी नहीं बची थी।

प्रिय मुमुक्षु! अपने वैशिष्ट्य का सौन्दर्य हमको इतना प्यारा है कि हमको आज परमात्मा का सौन्दर्य भी देखना पसन्द नहीं है। 'मेरी विशेषता दुनिया देखे, मेरे वैशिष्ट्य की दुनिया प्रशंसा करे, मेरी विशिष्टताओं की चर्चा घर-घर में होने लगे।' यह एक ऐसी मानवीय वासना है कि उसको हृदय से निकालना आसान काम नहीं है। इस वासना को निकाले बिना आध्यात्मिक विकास भी संभव नहीं है।

धर्म की आन्तर-आराधना में विकास पाना है तो 'विशिष्ट व्यक्तित्व' के मोहजाल को तोड़ना ही होगा। अन्तर्यात्रा में यह मोहजाल बाधक है। इतनी व्यापक है यह मोहजाल कि बड़े-बड़े तपस्वी भी इस जाल में फँस जाते हैं। बड़े-बड़े ज्ञानी भी इस जाल में उलझ गए हैं। प्रिय मुमुक्षु! तू जानता है न कि सिंहगुफावासी मुनि जैसे महान तपस्वी मुनि क्यों कोशा वेश्या के यहाँ वर्षावास करने गए थे? उनके मन में यही बात खटकी थी कि 'गुरुदेव ने मेरी विशेषता का पूरा-पूरा मूल्यांकन नहीं किया। स्थूलभद्रजी की विशेषता को जितनी बधाइयाँ दी गई, मेरी विशेषता को उतनी बधाइयाँ नहीं दी गई।' ईर्ष्या और द्वेष से जलने लगे। मुनि थे, तपस्वी थे, फिर भी अपने वैशिष्ट्य की प्रशस्ति सुनने की तीव्र इच्छा प्रबल थी।

स्थूलभद्रजी जैसे कामविजेता महामुनि के हृदय में भी अपने वैशिष्ट्य के प्रदर्शन की एवं अपनी बहिन-साध्वियों के मुँह से अपनी प्रशंसा सुनने की तीव्र इच्छा सलामत थी। गुरुदेव भद्रबाहुस्वामी ने इस वैशिष्ट्य-प्रदर्शन की वासना में, श्रेष्ठज्ञान-प्राप्ति की अपात्रता देखी। नहीं दिया वह श्रेष्ठ ज्ञान।

प्रिय आत्मीय मुमुक्षु! संसार के क्षेत्र में आज स्व-वैशिष्ट्य का प्रदर्शन करना, अपने मुँह से अपनी विशेषताओं के गीत गाना, अपने सौन्दर्य की स्वयं प्रशंसा करना, सामान्य हो गया है। अपनी संस्कृति में यह बात बुरी मानी गई है। चूँकि धर्म एवं अध्यात्म के साथ इस बात का समन्वय नहीं हो सकता। अन्तर्विकास में रुकावटें आ जाती हैं। मन अशांत एवं अतृप्त बना रहता है। अपने वैशिष्ट्य का प्रदर्शन करने में एवं प्रशंसाश्रवण में मन उलझा हुआ रहता है। अतृप्ति ही अतृप्ति बनी रहती है। इसलिए तुझे कहता हूँ कि तू इस वासना के पाश में मत फँसना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तेरी विशेषताएँ दुनिया नहीं जानेगी, तेरी प्रशंसा नहीं होगी... तू जरा भी अस्वस्थ नहीं होना। तेरी विशेषताओं का प्रतिबिंब अनन्तज्ञानी परमात्माओं में पड़ रहा है... वे तुझे देख रहे हैं, उनकी ज्ञानदृष्टि में तेरा मूल्यांकन हो रहा है... यह जानकर तू संतुष्ट रहना। दूसरों के वैशिष्ट्य की प्रशंसा सुनकर तू विचलित मत होना। दूसरों के सौन्दर्य की 'वाहवाह' सुनकर तू अपनी 'वाहवाही' के लिए लालायित मत होना।

ज़्यादा नहीं लिखता हूँ आज। दाहिने हाथ का अँगूठा दुःख रहा है... लिखने में रुकावट कर रहा है... फिर भी धीरे-धीरे लिखता जाता हूँ। मन जब लिखने को प्रेरित करता है, डॉक्टर की आज्ञा का उल्लंघन हो ही जाता है।

इस पत्र के साथ 'अरिहंत' का तीसरा वर्ष समाप्त हो जाएगा। चतुर्थ वर्ष का नवम्बर से प्रारम्भ हो जाएगा। 'जीवनदृष्टि' कोई नए प्रदेश का दर्शन कर रही है... संभवतः उस नए प्रदेश का दर्शन कराना चाहता हूँ अगले पत्रों में...। तेरी कुशलता चाहता हूँ। जय वीतराग!

२-१०-७८

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *अतीत के सुखों की स्मृति और दुःखों की कड़वाहट मनुष्य के मन को दुःखी बना डालती है।*
- *औरों के सामने अपने दुःख का रोना रोने से ठीक है... थोड़ी शब्दों की सांत्वना मिल जाती है... पर वह क्षणिक होती है!*
- *सुखों की याद में 'टेम्पररी स्वीटनेस' मिलती होगी पर उस मधुरता के पीछे कड़वाहट की लंबी जलन छिपी रहती है।*
- *सुखों की याद नहीं... और दुःखों की फरियाद नहीं!*
- *दुःखों का डर ही तो फरियाद करता-करवाता है! पर दुःखों से डरना क्यों?*
- *दुःखों के साथ समझौता कर लेने पर फरियाद करने का मन नहीं होगा!*

पत्र : २९

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

वर्षावास के चार महीने पूर्ण हो गए और हमने लींबडी छोड़ भी दिया! संघ और समाज के हजारों स्त्री-पुरुषों ने श्रद्धा, स्नेह और सद्‌भाव से विदा किया। उनको... उनके हृदय में विरह की व्यथा थी, आँखों में व्यथा के साक्षी आँसू थे। हालाँकि ऐसे दृश्य प्रतिवर्ष... चातुर्मास पूर्ण कर, विहार करते समय देखते आए हैं। संयोग-वियोग की व्यथापूर्ण कथा तो मैंने हजारों बार मेरे प्रवचनों में कही है, परंतु ऐसे प्रसंगों में अनुभव भी करता रहा हूँ।

मैंने अपने लींबडी के अन्तिम प्रवचन में अपना अन्तिम संदेश दिया :

'सुखों को याद मत करो, दुःखों की फरियाद मत करो।'

भूतकालीन सुखों की याद करते रहने से और दुःखों की फरियाद करते रहने से ही मनुष्य दुःखी बनता है, अशांत बनता है, बेचैन बनता है। जिस मनुष्य के पास भूतकाल में खूब संपत्ति थी, वैभव था, पुत्र-पत्नी-परिवार था, इज्जत थी, सत्ता थी, आज कुछ नहीं है! सब कुछ चला गया है... आज वह अकेला है... ऊपर आकाश है, नीचे धरती है...। यदि यह मनुष्य अपने भूतकालीन सुख-वैभवों को याद करता रहे तो? क्या इस याद से उसको शांति मिलती है? स्वस्थता मिलती है?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किसी मित्र के सामने या स्नेही-स्वजन के पास अपने भूतकालीन सुख वैभवों की कथा करने से क्या मिलता है? तू कहेगा कि 'कुछ आश्वासन मिलता है!' ठीक बात है, परंतु वह आश्वासन क्षणिक होता है। वे स्नेही-स्वजन आपके प्रति थोड़ी सी हमदर्दी दिखा कर चले जाएँगे.. फिर वह याद आपको अस्वस्थ बनाए रखेगी। संसार में ज़्यादातर लोगों को यह आदत होती है, दूसरे के सामने अपने पुराने सुखों की कहानी सुनाने की! जो सुख आज उनके पास नहीं है। क्या पता, दुनिया ऐसे लोगों के प्रति इज्जत से देखती है, या करुणा से?

अच्छा तो आपके पास दस लाख रुपये थे? आप सरकारी अफसर थे? आपके ऐसी सुन्दर और स्नेहपूर्ण पत्नी थी? आपके ऐसे अच्छे लड़के थे? ओह! सारी बात बिगड़ गई... सब कुछ चला गया आपका... आप बहुत दुःखी हो गए..।' ऐसे शब्द सुनने से दुःखी मनुष्य को क्षणिक सान्त्वना तो मिलती है, परंतु बाद में मानसिक जलन ही पैदा होती है। सुखों की याद में 'टेम्पररी स्वीटनेस' होती है, परंतु दीर्घकालीन तो कड़वाहट ही होती है।

सब सुखों की याद नहीं, कोई एक सुख को याद कर रोने वालों को मैंने देखे हैं! मेरे पास आकर ऐसे लोग रोते हैं! जो सुख भूतकाल में था, आज नहीं है, उसको याद कर रोते हैं। मनुष्य की यह एक कमजोरी है। परंतु ऐसी कमजोरी नहीं है कि जिसको मिटा नहीं सके। इस कमजोरी को मिटा सकते हैं। मिटानी है यह कमजोरी? 'मुझे मेरे पुराने सुख याद नहीं करने हैं,' ऐसा संकल्प कर लो।

मनुष्य-मन का ऐसा स्वभाव है कि वह (मन) कुछ न कुछ याद करता रहता है। कुछ न कुछ नई कल्पना करता रहता है, अरमान करता रहता है। कुछ न कुछ फरियादें करता रहता है। करने दो याद और फरियाद! विषय बदल दो!

याद करनी है? परमात्मा की याद करते रहो! सद्गुरुओं को याद करते रहो। तीर्थ स्थानों की याद करते रहो। ज्ञानदृष्टि हो तो अपने अनन्त जन्मों की याद करते रहो! अपनी आत्मा ने भूतकाल में कैसे-कैसे जन्म पाए.. याद करते रहो। ऐसी यादें मनुष्य को प्रसन्न और प्रफुल्लित बनाती हैं। ऐसी यादें मन को शांत और स्वस्थ बनाती हैं।

प्रिय मुमुक्षु! दूसरी एक अपेक्षा से कहूँ तो तुझे तेरे उन भूतकालीन सुखों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

को याद करने चाहिए, जिन सुखों का तूने जानबूझ कर त्याग कर दिया था! जो सुख तेरे पास थे, उन सुखों से बढ़कर दूसरे काल्पनिक सुख तुझे ज़्यादा अच्छे लगे, तूने अपने वास्तविक सुखों का त्याग कर दिया... काल्पनिक सुख पाने के लिए तू दौड़ा... नहीं मिले वे सुख। तू याद कर तेरे वे स्वर्ग से भी बढ़ कर सुख के दिन! इसलिए याद करने को कहता हूँ, चूँकि तू पुनः वे वास्तविक सुख पाने के लिए तत्पर बनें। काल्पनिक वैषयिक सुख के पीछे भटकना छोड़ दे। जो याद हमें सत्कार्य के प्रति प्रेरित करे, वह याद करने में कोई हर्ज नहीं। जो याद हमें मात्र परेशान ही करती हो, वह याद करने में कोई मजा नहीं।

जब तूने स्वयं आकर तेरे वे पुराने सुखमय, साधनामय और आनंदमय दिनों की याद सुनाई, मेरा मन भी प्रफुल्लित हो गया। जिस सुखमय जीवन को दुःखमय मानकर तूने त्याग दिया था, आज तुझे अपनी वह भूल समझ में आ गई और तेरी वह याद तुझे वास्तविकता की ओर प्रेरित करने वाली बनी, इससे मुझे बेहद खुशी हुई।

जैसे सुखों की याद नहीं, वैसे दुःखों की फरियाद नहीं! किसके सामने दुःखों की फरियाद! जो स्वयं दुःखी हैं, उनके सामने दुःखों की फरियाद करने से क्या? दुःखों की फरियाद करते रहने से दुःख बढ़ते हैं या घटते हैं। यदि दुःख घटते हों तो करते रहो फरियाद। फरियाद करने मात्र से दुःख घटते हों तो मैं दुनिया को कहूँगा कि दुःखों की फरियाद करते रहो। प्रिय मुमुक्षु, दुःखों की फरियाद करने से मन कितना अशांत बना रहता है, कितना अस्वस्थ और चंचल बना रहता है, यह कोई कहने की बात है?

दुःखों का भय दुःखों की फरियाद करवाता है। दुःखों से क्यों डरना? अपने ही किए हुए पापों के फलस्वरूप दुःख आते हैं, उनको बिना फरियाद किए भोगते रहो! दुःखों को स्वस्थता से, समाधि से भोगते हुए दुःखों का नाश करो। दूसरे किसी के सामने अपने दुःखों को रोने से आपके दुःख बढ़ जाएँगे। आप अशांत बन जाओगे।

तू कहेगा : दूसरों के सामने अपने दुःखों की बात करने से मन कुछ हल्कापन महसूस करता है, मन का भार कम होता है।

मेरा कहना है कि मन का भार बढ़ता है! दुःखों की सतत स्मृति ही तो घोर अशांति पैदा करती है! महासती सीता ने अपने युवा पुत्र लव और कुश के सामने भी अपने दुःख की बात नहीं कही थी? रामचन्द्रजी के प्रति आक्रोश नहीं किया था। न तो मिथिला-अयोध्या के सुखों को याद किए थे, न तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वनवास के और निष्कासन के दुःखों की फरियाद की थी। किसी के सामने नहीं! सीता के सतीत्व का यही तो रहस्य था।

दुःखों के साथ समझौता होने के बाद फरियाद नहीं होगी। जीवन जीने में आनंद आएगा। दुनिया तुझे दुःखी मानेगी, या देखेगी, तू स्वयं अपने आपको सुखी मानेगा! तेरे मन में किसी भी जीवात्मा के प्रति दुर्भाव नहीं उभरेगा, रोष प्रज्वलित नहीं होगा। यदि फरियाद करनी ही है तो दुःख की फरियाद नहीं करना, पापों की फरियाद करना, तेरे अपने पापों की फरियाद करना।

कभी की है पापों की फरियाद? हाँ, दूसरों के पापों की फरियाद और अपने दुःखों की फरियाद? मनुष्य की आदत बन गई है। इस आदत को मिटाना है, इस मानव जीवन में। अपने पापों की फरियाद करो, दूसरों के दुःखों की फरियाद करो।

लींबडी से विहार कर दिया है। यह पत्र तेरे पास पहुँचेगा, तब तो हम इडर में होंगे। इडर तो तेरा देखा हुआ है। मेरे साथ ही तो था तू... जब हम इडर के पहाड़ों में घूमे थे। पहाड़ के ऊपर कितना भव्य और सुन्दर जिनालय है। कैसी-कैसी गुफाएँ हैं! ध्यानसाधना और योगसाधना के लिए ऐसे स्थान बहुत ही उपयोगी बनते हैं। साधन तो बहुत है... परंतु साधक कहाँ हैं! क्या तू ऐसी साधना पसन्द करेगा। आत्मसाधक बनना है या धर्मप्रचारक बनना है?

पदयात्रा आनंदप्रद हो रही है। सभी मुनिवर प्रसन्नता से पुलकित हैं, अपने-अपने कर्तव्यों में सजग हैं। तेरी कुशलता चाहता हूँ।

शारद (सौराष्ट्र)

२१-११-७८

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *समय के तीव्र प्रवाह में सब कुछ बह जाता है... रह जाता है, मात्र बीती बातों की यादों का लंबा कारवां! और फिर मन यादों के खंडहर में भटकता है, बावरा सा होकर!*
- *साधक जीवन में अति जनसंपर्क, सामाजिक जीवन वगैरह बहिर्मुखी वृत्ति-प्रवृत्तियाँ बाधक बनती हैं।*
- *ज्ञानसाधना एवं ध्यानसाधना की प्राचीन परंपरा आज तो लुप्तप्रायः हो चुकी है।*
- *आज का साधु-जीवन भी अधिकतर सामाजिक कार्यकलापों का शिकार बन चुका है! समाज का सतत संपर्क साधु जीवन की मस्ती को फीकी बना डालता है।*

पत्र : ३०

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला। तेरी संवेदनाओं ने मेरे हृदय को स्पर्श किया। काल की अस्खलित गति में हम सभी बह रहे हैं। अवस्थाओं का परिवर्तन होता ही रहता है। ज्ञाता बनकर, द्रष्टा बनकर देखते रहो परिवर्तनों की दुनिया को।

अभी हम इडर में दस दिन रहे। इडर ऐतिहासिक जगह है। प्राचीनता जगह-जगह बिखरी पड़ी है। काल की अविरत गति के साथ बहुत कुछ बह गया है, परंतु जो कुछ शेष है, वह भी अद्‌भुत है। पहले भी मैं इस शहर में आया था, परंतु उस समय मेरी अभिरुचि मात्र अध्ययन की थी। मैंने एक बड़ा शास्त्र यहाँ पढ़ डाला था।

इस समय महोत्सव था। महोत्सव पूर्ण होने पर मैं और मेरे साथी मुनिवर-हम सब इडर के किले पर गये। थोड़े सोपान चढ़े और हमारे सामने राजमहल आया। बड़ा राजमहल है, परंतु आज उसकी दुर्दशा है। राजाओं की दुर्दशा से भी ज़्यादा दुर्दशा इस महल की है। एक समय था कि इस महल में राजपरिवार की चहलपहल रही होगी। महल के चारों ओर सैनिक खड़े रहते होंगे। महल का कोना-कोना रोशनी से आलोकित होगा। वैभव-संपत्ति इस महल में यथेच्छ क्रीड़ा करती होगी। बड़े-बड़े राजदरबार यहाँ भरे जाते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होंगे। आज यहाँ इसमें से कुछ नहीं है। काल के भीषण प्रवाह में सब कुछ बह गया है... खड़ा है, मात्र महल का जर्जरित खंडहर। हम लोग इस खंडहर में से ही निकले। आगे बढ़े... दूर दो भव्य जिनालय दृष्टिपथ में आए। हालाँकि मुसलमानों ने भी यहाँ एक कब्र बना रखी है! ब्राह्मणों ने १-२ मठ बना रखे हैं, परंतु इनमें कोई आकर्षण नहीं है। जिनालयों की भव्यता यात्रियों को आकर्षित किये बिना नहीं रहती। एक है, दिगम्बर जैन मंदिर और दूसरा है, श्वेताम्बर मंदिर। श्वेताम्बर मंदिर बावन जिनालयवाला विराटकाय मंदिर है। सोलहवें तीर्थंकर परमात्मा शांतिनाथ की नयनरम्य प्रतिमा मूल गर्भगृह में बिराजमान है।

मंदिर जितना भव्य है, उतना ही स्वच्छ और दर्शनीय है।

परमात्मा की स्तुति-भक्ति कर, हम लोग इडर के इस पहाड़ के दूसरे शिखर की ओर चल पड़े। उस शिखर का नाम है, रणमल चौकी। हमारे साथ मेरे पूर्वपरिचित मुनिराज, जो कि उस पहाड़ पर जो उपाश्रय है, उसमें रहे हुए थे, हमारे साथ हो गये। बड़े सरल और निरभिमानी साधुपुरुष हैं। उन्होंने कहा : 'यहाँ रास्ते में एक गुफा है, वहाँ एक बयासी साल की बुढ़िया चालीस साल से अकेली रहती है। यदि हम वहाँ चलें तो वह बहुत प्रसन्न होगी।

हम लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। अकेली महिला चालीस साल से गुफा में रहती है! हम लोग गये उस गुफा में। उस बुढ़िया ने हमारा मधुर शब्दों से स्वागत किया, हर्ष व्यक्त किया। साधु-संतों के प्रति उसकी अपार श्रद्धा देखने को मिली। इससे भी ज़्यादा उस वृद्धा में मैंने अपूर्व आत्मबल, प्रसन्नता और सदाबहार मिजाज पाया।

वहाँ से हम चल पड़े रणमल चौकी की तरफ। कुछ ऊँचाई पर हमने एक जीर्ण-शीर्ण मंदिर देखा। हम लोग पहुँच गये उस मंदिर के पास। यही रणमल चौकी थी। यहाँ से पूरा इडर शहर दिखाई देता है। इडर का कोई भी मनुष्य अपने घर के छप्पर पर से इस जगह को देख सकता है। रणमल चौकी का यह मंदिर जैन मंदिर है। भगवान नेमनाथ की यहाँ बड़ी मूर्ति थी, आज नहीं है। सुना है कि मुसलमानों के आक्रमण के समय मूर्ति तोड़ दी गई थी और मंदिर को भी तोड़ा गया था। फिर भी मंदिर के गर्भगृह के द्वार पर परमात्मा जिनेश्वरदेव की मंगलमूर्ति आज भी है। कुछ बहुत सुंदर शिल्पयुक्त देव-देवियों की भी मूर्तियाँ यहाँ पर है। ऐसा प्रामाणिक इतिहास प्राप्त होता है कि यह मंदिर बारहवीं शताब्दी में बना था। जब वह बना होगा, कितनी चहलपहल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होती होगी, उधर! हजारों... लाखों भक्तजन यहाँ आते होंगे... और आन्तर-प्रसन्नता का अनुभव करते होंगे। आज तो वह जगह... वह मंदिर सूना पड़ा है। कुछ क्षण आँखें मूँदकर भगवान नेमनाथ की स्मृति की... भाव वंदना की... और वहाँ से चल पड़े एक गुफा की ओर। पास में ही वह गुफा है। एक हिन्दु संन्यासी की वह गुफा है। कुछ वर्ष वह संन्यासी यहाँ रहा था, आज तो वह गुफा खाली पड़ी है। गुफा में कुछ सुविधायें भी थी। दस-पंद्रह मिनट हम वहाँ बैठे और परिचित मुनिश्री ने इस गुफा के कुछ अनुभव भी सुनाये। उस संन्यासी के विषय में भी कुछ बातें बतायी।

वहाँ से हम अब हम नीचे उतरने लगे। रास्ते में कुछ छोटी-छोटी गुफायें देखते हुए अपने स्थान पर पहुँचे। श्वेताम्बर मंदिर के पीछे भी एक बड़ी अच्छी गुफा है। गुफा में कुछ मरम्मत कराई गई है। ताकि उसमें बैठकर शांति से ध्यान करने वाला ध्यान कर सके। नीरव शांति! पवित्र वातावरण और चारों ओर दिव्यता!

परिचित मुनिश्री ने इस गुफा के भी स्वयं किये हुए अनुभव सुनाये। आहार-पानी से निवृत्त होकर कुछ समय विश्राम किया और मध्याह्न के बाद चार बजे हमने पहाड़ उतरना शुरू किया। मन में अब अनेक विचार उभरने लगे।

प्राचीन काल में अनेक सत्वशील मुनिवर चार-चार महीने ऐसे पहाड़ों में... गुफाओं में ध्यानमग्न रहते थे... कुछ मुनिवर तो चार महीने के उपवास करके रहते थे। कुछ मुनिवर महीने-महीने के उपवास करके रहते थे... शास्त्रों के ऐसे कई उदाहरण स्मृति में उभरने लगे। सुकोशल मुनि और उनके पिता-मुनि स्मृति में आए और सिंहगुफावासी मुनि भी स्मृति में आए। रामायण काल के अनेक मुनि याद आए एवं 'समरादित्यकेवली-चरित्र' में श्री हरिभद्रसूरिजी ने जो गुफावासी मुनियों का जिक्र किया है, वे भी याद आए! कैसा उच्चतम होगा उनका साधक जीवन! कैसी उत्तम होगी उनकी ध्यानमग्नता! कैसी होगी उनकी श्रेष्ठ योगसाधना! कैसा अपूर्व आत्मानंद अनुभव करते होंगे वे तपस्वी मुनिवर...!! कोई जनसंपर्क नहीं, कोई सामाजिक जीवन नहीं... कोई परिग्रह नहीं... कोई भौतिक पदार्थों की रसवृत्ति नहीं...।

मन में घोर अफसोस हो रहा था... अपने जीवन को देखकर। साधु जीवन की वह मस्ती ही कहाँ है? ज्ञानसाधना और ध्यानसाधना की वह प्राचीन परम्परा ही अपने यहाँ नष्टप्रायः हो गई है। आज तो हमारा जीवन ज़्यादातर सामाजिक बन गया है। साधु सामाजिक प्राणी बन गया है। समाज के सतत

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संपर्क से अनेक सामाजिक दूषण हमारे जीवन में प्रविष्ट हो गए हैं। बहुत अधिक जनसंपर्क ने हमारा ध्यानमार्ग अवरुद्ध कर दिया है। मात्र थोड़ा-सा शास्त्रज्ञान पाकर ही हम लोगों ने कृतकृत्यता मान ली है। कहाँ है आत्मज्ञान? कहाँ है अनुभवज्ञान और कहाँ है तत्त्वपरिणति ज्ञान? ज्ञान ही नहीं है तो ध्यान में प्रवेश होगा कैसे?

हे परमात्मन्! कब ऐसा श्रमणजीवन मिलेगा कि जिस जीवन को मैं ऐसी गुफाओं में... ध्यानमग्न बनकर... दिव्य आत्मानुभूति करूँ? ऐसी गुफाओं में निःसंग और अनासक्त बन कर परमानंद का अगोचर अनुभव करूँ? इस दुनिया से संपूर्ण निरपेक्ष बनकर... संपूर्ण जीवन निर्मल चारित्र की आराधना में व्यतीत करूँ?

प्रिय मुमुक्षु! नीचे उपाश्रय में आने के बाद... शाम को और रात को... बस, ये ही विचार दिमाग में घूमते रहे। इसी जीवन में कभी न कभी कुछ समय ऐसी गिरि-गुफाओं में व्यतीत कर, आत्मध्यान की आराधना करने की आन्तर भावना तो कई वर्षों से बनी हुई थी... इसमें इडर के पहाड़ों की सफर ने उस भावना को उत्तेजित कर दी। मेरा दृढ़ विश्वास है कि ध्यान के अश्व पर आरूढ़ हुए बिना तीव्र और शीघ्र गति से निर्वाण की ओर आगे नहीं बढ़ा जा सकेगा।

इडर की यह यात्रा स्मृति में ऐसी अंकित हो गई है कि कभी भूल नहीं सकूँगा। इडर से हम वडाली आए हैं। वडाली से ही यह पत्र लिख रहा हूँ। कुछ दिन यहाँ स्थिरता कर, खेड़ब्रह्मा, मोटापोशीना होते हुए कुंभारियाजी तीर्थ में पहुँचने की भावना है। उस प्राचीन भव्य तीर्थभूमि में कुछ दिन रुकने की भावना है और वहाँ से राजस्थान की धरती को स्पर्श करने को मन चाहता है... आगे जैसी क्षेत्रस्पर्शना!

वडाली

२४-१२-७८

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जीवमात्र के प्रति स्नेह को स्वीकार करना चाहिए। हाँ... कभी जरूरी लगे तो उस स्नेह को छान लेना चाहिए ताकि वासना या स्वार्थ का कचरा भीतर न रह जाये!*
- *जब तक दिल में किसी के प्रति प्रेम सुरक्षित रहता है... तब तक उस व्यक्ति के प्रति द्वेष या अभाव नहीं जगता है।*
- *बड़े शहरों की जिन्दगी ... बैठी है! रूप और रुपयों की चकाचौंध में सब ... रहा है!*
- *गाँवों की जिन्दगी में कृ... ता! वहाँ सहज स्वाभाविक भाव मिलते हैं।*
- *गाँवों में आज भी को... कूज गूंजती है... सुबह-शाम मंदिरों में मधु... खेतों और खलिहानों में बाँसुरी के सूर सुनाई ...*

पत्र : ३१

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ!

चिर प्रतीक्षा के पश्चात तेरा संक्षिप्त पत्र मिला। यदि मेरी अपेक्षा पूर्ण होती तो संक्षिप्त पत्र भी मेरे हृदय को आनन्दित कर देता, परंतु अपेक्षा अपूर्ण ही रही?

फिर भी तू मेरी ओर से निश्चिंत रहेगा। तेरे प्रति मेरे हृदय में जो स्नेह और सद्‌भाव है, वह सुरक्षित रहेगा, अखंड रहेगा। चूँकि मैं स्नेह का संग्रह करता हूँ। यों भी जीवमात्र के प्रति स्नेह को स्वीकार करता ही हूँ, तो फिर तेरे स्नेह को कैसे तिरस्कृत कर सकता हूँ?

हाँ, मैं तो यह मानता रहा हूँ कि दुर्जनों के भी स्नेह को स्वीकार करना चाहिए। स्नेह को स्वीकार करते समय अवश्य उस स्नेह को छान लेना चाहिए, ताकि उसमें स्वार्थ या वासना का कचरा न आ जाए। पानी को हम छान कर ही पीते हैं न? कभी दूध को भी छानना पड़ता है। यदि यह लगे कि इस स्नेह में स्वार्थ या वासना पड़ी हुई है, तो छान लेना स्नेह को! स्नेह का त्याग नहीं कर देना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कभी कोई स्नेही, उसका स्वार्थ सिद्ध नहीं होने से, उसकी कोई मनोकामना पूर्ण नहीं होने से, मेरा त्याग कर चला भी गया होगा, तो भी मैंने, उस व्यक्ति से प्राप्त स्नेह को गटर में नहीं बहा दिया है, मैंने मेरे हृदय में उस स्नेह को सुरक्षित रखा है। कभी किसी को मेरी ओर से नैतिक-धार्मिक या आध्यात्मिक मार्गदर्शन नहीं मिला, जो मार्गदर्शन उसको अपेक्षित था, वह मुझे छोड़ कर चला गया होगा, तो भी मैंने उस व्यक्ति से प्राप्त स्नेह को मेरे हृदय में संगृहीत कर दिया है।

इससे मुझे एक बहुत बड़ा फायदा हुआ है। मेरा हृदय अद्वेषी बना रहता है। मेरे एक समय के जो मित्र थे, आज वे भले मुझे मित्र नहीं मानते हैं, उनके प्रति भी मेरे हृदय में द्वेष नहीं है। चूँकि उनका स्नेह जो मुझे पहले मिला था, मेरे हृदय में जमा है। सुरक्षित है। वह प्रेम... वह स्नेह मुझे उनके प्रति द्वेषी नहीं बनने देता है।

यह बात मैं तेरे सामने इसलिए स्पष्ट कर रहा हूँ, जिससे तू मेरी ओर से आश्वस्त हो जाए। आज दिन तक तेरी ओर से मुझे जो स्नेह मिला है, वह स्नेह मेरे हृदय में जमा रहने वाला है। तू चाहें तब आकर वह स्नेह पा सकता है। तेरा स्नेह है, तू कभी भी ले सकता है। जी चाहे तब चले आना।

तू मुझे वहाँ बुला रहा है... परंतु वहाँ आना अभी संभव नहीं है, चूँकि मन ही नहीं मान रहा है। सच कहूँ तो मेरे मन को वहाँ की जिंदगी ही पसन्द नहीं है। वहाँ की दुनिया है, रूप और रुपये की! वहाँ की दुनिया में है, मात्र कृत्रिमता। मनुष्य का स्नेह भी कृत्रिम हो गया है। मानवता के मृत कलेवरों पर सज्जनता शृंगार सजाकर बैठी है। क्या है वहाँ? हाँ, वहाँ प्रसिद्धि मिल सकती है, यश मिल सकता है... और रुपये भी ढेर सारे मिल सकते हैं। रूप और रुपये की तो वह नगरी है।

धर्म प्रचार और धर्म प्रभावना की तेरी बात कुछ अंशों में सत्य है, परंतु वह काम तो मैं जहाँ-जहाँ जाता हूँ, वहाँ-वहाँ होता ही रहता है। दूसरी बात, मैं आत्मशांति को विशेष महत्व देता हूँ। नैसर्गिक जीवन मुझे ज़्यादा प्यारा है। वैसा जीवन और वैसी आत्मशांति वहाँ संभव है क्या? मेरा भी अनुभव है ना वहाँ के जीवन का?

अभी-अभी हम जिन-जिन शहरों में से और गाँवों में से गुजर रहे हैं... कुछ नए-नए सुखद अनुभव हो रहे हैं। यहाँ की जनता में... अपने जैन संघ के स्त्री-पुरुषों में श्रद्धा, स्नेह और सद्भाव के सुंदर दीपक जलते दिखाई दे रहे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं। कोई दिखावा नहीं... कोई 'आर्टीफिसियालीटी' नहीं! गाँवों में श्रद्धा और स्नेह की आवाज सुनाई देती है, जंगलों में कोयल की आवाज सुनाई देती है! गाँवों में भक्ति और प्रेम के पुष्प नजर आते हैं, जंगलों में जूही और गुलाब के फूल नजर आते हैं। गाँवों में सौहार्द और सरलता का संगीत सुनाई देता है, तो खेतों में बाँसुरी के सुर सुनाई पड़ते हैं।

प्रजा कितनी सरल और विवेकी है! कोई फालतू बातें नहीं। कोई व्यर्थ वाद-विवाद नहीं। साधु-संतों की भावपूर्ण भक्ति करना और धर्म का उपदेश शांति से सुनना। अभी एक छोटे से गाँव में गए थे। जैनसंघ के १५ घर हैं। स्वागत में सभी स्त्री-पुरुष उपस्थित थे। प्रवचन में तो अजैन लोग भी आए थे। लोगों ने कहा : 'महाराज श्री, हमारे गाँव में बहुत कम साधु-मुनिराज पधारते हैं, पधारते हैं तो सुबह आए और शाम को रवाना। आप दो-चार दिन यहाँ स्थिरता करने की कृपा करें।' हम दो दिन उस गाँव में रहे, दो दिन प्रवचन दिए। आनंद अनुभव किया।

अभी इडर से तो विहार भी धीरे-धीरे हो रहा है। हर गाँव में दो-चार दिन रुकते-रुकते आगे बढ़ रहे हैं। चूँकि कोई विशेष कार्यक्रम... या महोत्सव सामने नहीं है। कोई विशेष लक्ष्य बनाकर नहीं चल रहे हैं।

यह पत्र तेरे पास पहुँचेगा तब हम एक प्राचीन तीर्थ 'कुंभारिया' में होंगे। यह तीर्थ ऐतिहासिक तीर्थ है। रमणीयता और नैसर्गिक सौन्दर्य तो है ही। यहाँ के जिनमंदिर कला समृद्ध हैं। विशाल मैदान, अनेक वृक्ष... और धर्मशाला-भोजनशाला की सुविधा यहाँ उपलब्ध है। गुजरात के प्रसिद्ध स्थल अंबाजी से मात्र दो किलोमीटर की दूरी पर यह तीर्थ बसा हुआ है।

इस तीर्थ में यात्रियों की ज़्यादा भीड़ नहीं होती है, इसलिए यहाँ शांति से परमात्मभक्ति होती है, शांति से जाप-ध्यान होता है और मौन की महान साधना हो सकती है। जब कभी तुझे समय की अनुकूलता हो, तू इस तीर्थ में आकर तीन-चार दिन रहना। परमात्मा के भव्य मंदिर में... नयनरम्य प्रतिमा के सामने बैठ जाना... नाम स्मरण करना, जाप करना, ध्यान करना, स्तवन करना... तुझे अपूर्व आत्मशांति मिलेगी। नई आध्यात्मिक स्फूर्ति प्राप्त होगी। तू नया उल्लास लेकर घर लौटेगा।

भौतिक सुख वैभवों के बीच कभी-कभी तू बेचैनी महसूस करता है न? ऐसे तीर्थ स्थानों में कुछ समय रहने से बेचैनी दूर होती है और आनंद, उल्लास से हृदय भर जाता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फिर से तुझे कहता हूँ कि मैं उधर तेरे पास... तेरे शहर में नहीं आ सकता हूँ... तुझे मेरे पास आना चाहिए। शायद तू नहीं आएगा.. मैं जानता हूँ तेरे स्वभाव को... परंतु मुझे तेरे प्रति कोई अभाव नहीं होगा। चूँकि तेरा दिया हुआ विपुल स्नेह मेरे पास जमा है न?

१४-१-७९

पोशीना

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *बारिश के दिनों में बच्चे गीली मिट्टी में पैर रखकर घर बनाते हैं... फिर जब वे टूट जाते हैं या बिखर जाते हैं, तो वे बच्चे रोते हैं... बिलखते हैं... जैसे कि उनका सचमुच का घर टूट गया हो!*
- *संध्या के समय क्षितिज पर अनेक रंग उभरते हैं। अनेक आकृतियों का शामियाना तन जाता है। पर पल दो पल का सारा खेल...! और फिर रात की स्याह चादर तले सब कुछ लुप्त हो जाता है!*
- *सिनेमा के पर्दे पर शेर की गर्जना सच्ची होते हुए भी वास्तविकता से परे होती है। उस गर्जना से कोई घबरा उठता है या भयभीत हो उठता है, तो उसे हम क्या कहेंगे? बचपना और नादानी ही ना?*
- *शास्त्र ज्ञान के माध्यम से सम्यग् ज्ञानदृष्टि को प्राप्त कर लेना चाहिए। फिर हर एक घटना का सम्यग्दर्शन हो सकेगा।*

पत्र : ३२

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला। इतना विषाद क्यों? इतनी अन्तर्वेदना क्यों? मैं चाहता हूँ कि तू अविलंब विषादमुक्त बनजा, वेदनारहित बनजा। जानता है, तेरे अन्दर में इतना विषाद क्यों उभर आया है? इतनी घोर वेदना क्यों पैदा हुई है? असत् को सत् मान लिया है! काल्पनिक को वास्तविक मान लिया है!

वर्षा काल था। बरसात बरसने से जमीन गीली हो गई थी। रास्ते की मिट्टी से छोटे बच्चे घर-घर खेल रहे थे। अपने छोटे-छोटे पैरों पर मिट्टी चढ़ाकर उन्होंने छोटे-छोटे घर बनाए थे। 'यह मेरा घर... यह मेरा घर...' बोलते नाच रहे थे। इतने में दो गधे दौड़ते आए और बच्चों के घर तोड़ते हुए चले गए.. बच्चे रोने लगे... 'गधों ने हमारे घर तोड़ डाले...।' बच्चों का रुदन सुनकर माताएँ घर से बाहर आई। बच्चों को पूछा : 'क्या हुआ? क्यों रोते हो?' बच्चों ने रोते-रोते कहा : 'हमारे घर गधों ने तोड़ दिये...' माताएँ हँसने लगी!

सिनेमा के पर्दे पर खूंखार शेर दिखाई दिया और उसकी भयानक गर्जना थिएटर में गूँज उठी... बच्चा घबरा गया... माँ से चिपक गया और कहने लगा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

: 'माँ, यह जानवर खा जाएगा..।' माँ हँसती है! बच्चे के सर को सहलाती हुई कहती है : यह तो पर्दे का शेर है... अपने पास नहीं आ सकता... सच्चा शेर नहीं है!

संध्या के समय क्षितिज पर अनेक रंग उभर आते हैं... अनेक प्रकार की आकृतियाँ दिखाई देती हैं। बड़ा नगर भी दिखाई देता है और अद्‌भुत कलर-मेचिंग भी दिखाई देता है... परंतु थोड़े क्षणों के बाद अंधकार छा जाता है... कोई आकृति नहीं रहती... कोई रंग नहीं रहता...। यह देखकर कभी तू निराशा में डूबा है? नहीं ना? तो फिर इस समय क्यों निराशा के समंदर में डूब गया है?

क्या तू इस संसार को वास्तविक मान रहा है? इस संसार की घटनाओं को, परिवर्तनों को वास्तविक मान रहा है? हाँ, तू वास्तविक मान रहा है, इसलिए तो रो रहा है। अज्ञान-अबोध बच्चे की तरह रो रहा है।

तू सच-सच बता, क्या तुझे संसार की घटनाएँ बच्चों के 'घर-घर' के खेल जैसी अवास्तविक लगती हैं? क्या तुझे दुनिया की बातें सिनेमा के शेर की गर्जना जैसी असत् प्रतीत होती हैं? क्या तुझे संसार के सारे सुख संध्याकालीन आकाश के रंग जैसे क्षणिक और जादूगर की माया जैसे काल्पनिक लगे हैं?

तेरे पास तत्त्वज्ञान है न? तूने कुछ धर्मग्रंथों का तो अध्ययन किया है न? धर्मगुरुओं का थोड़ा-सा उपदेश तो सुना है न? यानी तेरे पास थोड़ा-सा भी शास्त्रज्ञान है, यह मैं जानता हूँ। अब तुझे एक काम करना चाहिए... तू शास्त्रज्ञान के माध्यम से 'ज्ञानदृष्टि' प्राप्त कर ले। उस ज्ञानदृष्टि से तू संसार का सम्यग्दर्शन कर सकेगा। ज्ञानदृष्टि से ही संसार का, संसार की हर घटना का, संसार की प्रत्येक व्यक्ति का, संसार की हर बात का तू सच्चा दर्शन कर सकेगा, वास्तविक दर्शन कर सकेगा।

संसार तुझे बच्चों के मिट्‌टी के घर के खेल जैसा लगेगा।

संसार तुझे संध्या के रंगों जैसा लगेगा।

संसार तुझे सिनेमा के पर्दे के दृश्यों जैसा लगेगा।

मैं तुझे मात्र आश्वासन देने के लिए ये बातें नहीं लिख रहा हूँ। मैं यह चाह रहा हूँ कि तू अब सदा के लिए प्रसन्न बना रहे! सर्वदा आनंदपूर्ण बना रहे। तू कभी विषादमग्न न हो, तू कभी वेदनाग्रस्त न हो। इसका एक ही उपाय है : संसार का सम्यग्दर्शन! ज्ञानदृष्टि से संसार का सच्चा दर्शन करना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वास्तव में संसार मात्र कल्पना है। संसार मात्र भ्रमणा है। संसार मात्र अवास्तविकता है। वास्तविक है, मात्र अपनी आत्मा! शुद्ध,बुद्ध, मुक्त आत्मा ही वास्तविकता है।

प्रिय मुमुक्षु! मात्र बुद्धि से मत सोचना। मात्र बुद्धि के सहारे जो कुछ सोचा जाता है, गलत सोचा जाता है। इससे अनेक विषमताएँ पैदा होती हैं, अनेक अनर्थ पैदा होते हैं। मात्र इन्द्रियों के माध्यम से बुद्धि सोचती है। अब शास्त्रज्ञान के सहारे सोचना होगा। बुद्धि का संबंध शास्त्रज्ञान से जोड़ना होगा। इसलिए तुझे अपना शास्त्रज्ञान कुछ बढ़ाना होगा। 'आत्मज्ञान' और 'कर्मज्ञान' विस्तृत करना होगा। इसलिए तू मेरे पास आओगे तो मैं सहायक बन सकूँगा।

तेरे पास बुद्धि तो है, शास्त्रज्ञान भी तू पा सकेगा, परंतु यदि सम्मोह से मुक्त नहीं हो पाया, तो शास्त्रज्ञान व्यर्थ बन जाएगा, कोई काम का नहीं रहेगा तेरा शास्त्रज्ञान और तेरी तीक्ष्ण बुद्धि। सम्मोह नहीं चाहिए। यदि संसार को ज्ञानदृष्टि से देखेगा और सोचेगा तो सम्मोह नहीं रहेगा। सम्मोह चला गया कि तुझे अपूर्व आत्मानंद की अनुभूति होने लगेगी।

तूने जिस घटना को अपने विषाद का कारण बताया है, वह घटना काल्पनिक संसार की मात्र एक काल्पनिक घटना है। ऐसा क्यों बना?' ऐसा तू पूछता है न? संसार में ऐसा सब कुछ बन सकता है। संसार में क्या नहीं बन सकता है, तू बताएगा? तूने उस घटना को दुर्घटना मान ली और वास्तविक मान ली, इसलिए तेरा मन विषाद से भर गया है।

संसार की ऐसी घटनाओं को Hard & Fast मत लिया कर। खूब सहजता से सोचता रह। ज्ञानदृष्टि से विचारों में सहजता आएगी। अपने विचार ऐसे होने चाहए कि जिन विचारों से हम अशांत न हों, परेशान न हों। आत्मलक्षी शास्त्रज्ञान से विचारों में अवश्य परिवर्तन आता है। तुझे बार-बार 'ज्ञानदृष्टि' के विषय में लिखता हूँ, क्यों? जानता है? ज्ञानदृष्टि से आन्तर आनंद बना रहता है। ज्ञानदृष्टि से ही आँखें करुणा से आर्द्र बनी रहती हैं। ज्ञानदृष्टि से ही हृदय गुण पुष्पों की सौरभ से सुवासित बना रहता है।

मैं मानता हूँ कि अब जो तेरा पत्र आएगा, उसमें तेरी भीतरी प्रसन्नता की अभिव्यक्ति होगी।

हमारी विहारयात्रा की दिशा ही बदल गई। कुंभारिया से जाना था

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजस्थान की ओर, आ गए उत्तर गुजरात में। गुजरात के प्रसिद्ध तीर्थ तारंगाजी के पास 'वाव' गाँव में प्रभुभक्ति का महोत्सव था, उस प्रसंग पर जाना अनिवार्य बन गया था। वहाँ से तारंगाजी तीर्थ में आए हैं। इस पुण्यभूमि के साथ अनेक वर्षों की मधुर स्मृतियाँ जुड़ी हुई हैं। इस मनभावन तीर्थ की अन्तरात्मा को आनंद से, प्रसन्नता से भर दे ऐसी अनेक बातें हैं... लिखूँगा आगे पत्र में... आज तो अभी ही पत्र पूर्ण करता हूँ। हम सभी कुशल हैं, तेरी कुशलता चाहता हूँ।

तारंगाजी तीर्थ

१२-२-७९

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *अन्तर्यात्रा को लक्ष्य में रखकर यदि तीर्थयात्रा की जाये तो वह सार्थक एवं सफल होती है।*
- *तीर्थों की धरती के परमाणु आज भी उतने ही प्रभावी एवं शक्तिशाली हैं... वहाँ पर आज भी विद्युत चुंबकीय क्षेत्र बन जाता है... पर अनुभूतियों की गहराई में उतरना जरूरी होता है।*
- *परिस्थितियाँ बनें या बिगड़े... अपनी जागरुकता को यथावत रखना। राग-द्वेष से बचे रहना।*
- *ज्ञाताभाव एवं द्रष्टाभाव को हर हालत में बनाए रखना। सफलता प्राप्त करने में समय लग सकता है... पर निराश होने की कतई आवश्यकता नहीं है!*
- *सत्त्वशील बन कर जीना होगा।*

पत्र : ३३

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र नहीं मिला है।

हमारी विहार यात्रा सुखपूर्वक हो रही है। इस बार विहार उग्र नहीं है, शांति से परिभ्रमण हो रहा है। तारंगा तीर्थ की यात्रा आनंद पूर्ण रही। तारणगिरि पर आया हुआ यह तीर्थ जितना भव्य है, उतना ही आह्लादक है। मैं इस तीर्थ में बचपन में भी कई बार आया हूँ।

प्रिय मुमुक्षु! अरावली के इन पहाड़ों में जब कुमारपाल बेसहारा भटक रहा था, गुर्जरेश्वर सिद्धराज के भय से व्याकुलचित्त कुमारपाल जब इन पहाड़ों में छुप रहा था, उस समय उसको कल्पना भी नहीं होगी कि उसके द्वारा इस पहाड़ पर एक भव्य जिनमंदिर का निर्माण होगा।

बारहवीं शताब्दी का वह समय था। गुजरात का राजा था सिद्धराज। सिद्धराज निःसंतान था। जब उसको ज्ञात हुआ कि 'मेरा उत्तराधिकारी कुमारपाल होने वाला है,' वह झुँझला उठा। उसने कुमारपाल को पकड़ने के लिए, उसकी हत्या करने के लिए भरसक प्रयत्न शुरू किए। कुमारपाल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सावधान था। अपना गाँव वनस्थली छोड़ कर वह भाग निकला। अनेक गाँव, जंगल और पहाड़ों में भटकने लगा। अनेक कष्ट सहन किए।

भटकता हुआ कुमारपाल अरावली के पहाड़ों में पहुँचा। भूखा प्यासा वह एक वृक्ष की छाया में विश्राम कर रहा है। सामने एक वृक्ष के नीचे उसने एक अजीब दृश्य देखा। एक चूहा अपने बिल से निकला, एक सोना मुहर उसके पास थी, बाहर छोड़कर पुनः अपने बिल में गया, दूसरी सोना मुहर ले आया! फिर बिल में गया, तीसरी सोना मुहर ले आया... इस प्रकार बत्तीस सोना मुहर ले आया... और नाचने लगा! कुमारपाल इस दृश्य को देखता है। उसके मन में विचार आया : 'ये सोना मुहरे इस चूहे के लिए किस काम की? मुझे अभी सख्त आवश्यकता है...' उसने तब सोना मुहरे उठा ली, जब चूहा अपने बिल में गया था। चूहा वापस बाहर आया, उसने अपनी सोना मुहरे नहीं देखी... सर पटकने लगा... और चंद क्षणों में वह सर पटक-पटक कर मर गया।

कुमारपाल तो स्तब्ध रह गया... उसके हृदय में गहरा दुःख हुआ। चूहे को भी धन-संपत्ति की कितनी ममता? कितना प्रगाढ़ राग? समग्र जीवसृष्टि पर ममता कैसी छाई हुई है। ममता से ही संसार में जीव दुःखी है, ममता-परवशता से ही जीव दुर्गतियों में भटकते रहते हैं।

कुमारपाल वहाँ से चल दिया, परंतु चूहे की करुण मृत्यु जो उसके निमित्त हुई थी, भूल नहीं सका। जब सिद्धराज की मृत्यु हुई और कुमारपाल गुजरात का राजा बना, तब भी चूहे को नहीं भूला। उसने गुरुदेव हेमचन्द्रसूरीश्वरजी को वह घटना सुनाई और पूछा : 'गुरुदेव, मेरे हृदय में आज भी वह दुष्कृत्य खटकता है, मेरे उस पाप का प्रायश्चित्त देने की कृपा करें।

श्री हेमचन्द्रसूरिजी ने कुमारपाल को उस जगह कि जहाँ चूहे की मृत्यु हुई थी, भव्य जिनमंदिर बनाने का प्रायश्चित्त दिया। कुमारपाल ने प्रायश्चित्त को स्वीकार किया और इस उत्तुंग कलात्मक जिनमंदिर का निर्माण हो गया। आसमान से बात करते हुए जिनमंदिर से जब हम मौन बातें करते हैं, तब यह मंदिर बहुत बातें कहता है।

भव्य जिनमंदिर और भव्य जिनप्रतिमा! दूसरे तीर्थंकर भगवान अजितनाथ की विशालकाय प्रतिमा भक्त हृदय को भी खूब भा जाती है। मंदिर का बाह्य प्रदेश भी विशाल है। इतना बड़ा चौक किसी जगह देखने को नहीं मिला है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वच्छता, भव्यता और रमणीयता से यह तीर्थ सचमुच शांतिप्रिय जीवों का स्वर्ग है।

यात्रियों के लिए यहाँ एक बड़ी पुरानी धर्मशाला है। एक भोजनालय भी है। कुछ नए 'ब्लॉक्स' भी बने हुए हैं। तीर्थ की व्यवस्था आणंदजी कल्याणजी पेढ़ी कर रही है। परंतु अव्यवस्था की सीमा नहीं है।

यहाँ दिगम्बर सम्प्रदाय का भी मंदिर है, धर्मशाला है। नजदीक ही एक पहाड़ी पर **'कोटिशिला'** नामक दर्शनीय स्थान है। दूसरी एक पहाड़ी पर **'सिद्धशिला'** नामक दर्शनीय स्थान है। **'पुण्य-पाप की बारी'** नामक एक तीसरा रमणीय-दर्शनीय स्थान है।

एक दिन हम लोगों ने एक आश्चर्यजनक दृश्य देखा। मंदिर के बाह्य चौक के एक भाग में पेढ़ी की ओर से पक्षियों के लिए अन्न डाला जाता है, उधर कुछ बन्दर और कुछ कबूतर साथ में दाने चुग रहे थे। कबूतर बन्दरों से निर्भय थे, बन्दर कबूतर को कोई हरकत नहीं कर रहे थे। यों भी इस तीर्थ में बन्दरों की आबादी ज़्यादा है। चूँकि यहाँ बन्दर निर्भय हैं। यहाँ किसी भी पशु-पक्षी का शिकार नहीं होता है। यात्री भी बन्दरों के साथ खेलने लग जाते हैं! कभी कोई शरारती लड़के आ जाते हैं... तो बन्दरों को हैरान भी करते हैं!

आज से करीबन १५ वर्ष पूर्व, जब मैं इस तीर्थ में आया था, २४ तीर्थंकर भगवंतों की भक्ति के २४ गेय काव्य बनाने का प्रारंभ किया था। २४ काव्य बन गए थे और **'वंदन हो वीतराग'** नाम का गुजराती काव्यसंग्रह प्रकाशित भी हो गया था।

नौ साल पूर्व इसी तीर्थभूमि में एक ग्रीष्मकालीन ज्ञानसत्र का आयोजन हुआ था। २१ दिन का वह आयोजन था। स्कूल-कालेज के १२५ छात्र उस ज्ञानसत्र में सम्मिलित हुए थे। उनको नैतिक-धार्मिक और आध्यात्मिक शिक्षा दी गई थी। वह ज्ञानसत्र हर दृष्टि से सफल रहा था।

इस पहाड़ पर कोई गाँव बसा हुआ नहीं है। नौ साल से पहाड़ पर सड़क बन जाने से बसें मंदिर के द्वार तक पहुँचती हैं। यात्रियों की चहल-पहल बनी रहती है। 'तारंगा हिल' स्टेशन है। स्टेशन पर भी जैन धर्मशाला है और धर्मशाला में छोटा-सा मंदिर है।

उत्तर गुजरात में आया हुआ यह भारत के श्रेष्ठ जैन तीर्थों में से एक तीर्थ है। इस तीर्थ में इस समय आठ दिन रुकने का धन्य अवसर मिला। परमात्म

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भक्ति... आध्यात्मिक वाचन-परिशीलन... जीवनस्पर्शी वार्तालाप... जाप और ध्यान... मजा आ गया। कुछ लिखने का काम भी किया। परमात्मा अजितनाथ की शीतल छाया में अपूर्व आनंद की अनुभूति हुई।

क्षेत्र के भी अपने प्रभाव होते हैं, इस बात की प्रतीति ऐसे स्थानों में होती है। पवित्र क्षेत्र में रहने से विचारों में भी पवित्रता बनी रहती है, यह बात अविश्वसनीय नहीं है। हालाँकि मनुष्य की दृष्टि पर सारी बात निर्भर होती है, फिर भी तीर्थक्षेत्र का प्रभाव तो मानना ही पड़ेगा।

अन्तर्यात्रा के लक्ष्य से तीर्थयात्रा हो, तो आत्मानंद का अनुभव हो सकता है। अन्तर्यात्रा स्थगित नहीं होनी चाहिए। तेरी अन्तर्यात्रा चल रही होगी? कई दिनों से तेरा पत्र नहीं है-क्यों? संसार की कोई उलझन पैदा हो गई है क्या? शरीर ने कोई दुश्मनी नहीं की है न? कुछ भी हो, कोई भी बाह्य परिस्थिति अपने मन पर हावी नहीं हो जानी चाहिए। ज्ञाता बने रहो! द्रष्टा बने रहो! राग-द्वेष से बचने का भरसक पर्यत्न जारी रखो। धीरता से प्रयत्न करना होगा। सफलता प्राप्त करने में समय लगेगा। निराश नहीं बनना।

सत्त्वशील बनकर जीवन जीना होगा।

अब मेरा राजस्थान जाना संभव नहीं लगता है। चातुर्मास गुजरात में होने की संभावना लगती है। परिवार को 'धर्मलाभ' सूचित करना।

वडनगर (गुजरात)

२८-२-७९

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *तत्त्वदृष्टि से, ज्ञानदृष्टि से परिस्थितियों का मूल्यांकन करने से मन को समाधान मिल जाता है।*
- *तत्त्वज्ञान केवल किताब या दिमाग में भर कर रखने के लिए नहीं है, इसे जीवन के व्यवहार में उतारना चाहिए।*
- *परमात्मा की सही एवं सम्यक पहचान के बिना श्रद्धा पैदा कैसे होगी? श्रद्धा की वृद्धि कैसे होगी?*
- *परमात्मा पर की गई श्रद्धा भी यदि वास्तविक है... सम्यक है... तो वह श्रद्धा भी, अपने मन के प्रश्नों का समाधान कर सकती है।*
- *कहानी भी यदि उसके हार्द को पहचानते हुए पढ़ी जाए तो अभिनव दृष्टिकोण मिल सकता है।*

पत्र : ३४

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र हाथ में आया, अभी लिफाफा खोला भी नहीं था... और मन प्रसन्नता से पुलकित हो उठा। लिफाफा खोला... पत्र पढ़ता गया... जो-जो बातें पढ़ी, हृदय को स्पर्श कर गई। तूने जो मनःसमाधान पाया, जो आत्मपरितोष पाया, मेरे लिए परम संतोष का कारण बन गया।

तेरा मन कितना हल्कापन महसूस करता होगा! तेरी आत्मा कितनी शीतलता अनुभव करती होगी! हजारों टन वजन वाले तेरे प्रश्न-पहाड़ तेरे सर से उतर गए..!

मुझे विशेष प्रसन्नता तो इसलिए हो रही है कि तूने तत्त्वज्ञान के माध्यम से अपने मन को समझा दिया! परिस्थिति तो वही की वही है... संयोग वही का वही है... तूने तत्त्वदृष्टि से उन परिस्थितियों का... उन संयोगों का मूल्यांकन किया और मन का समाधान हो गया। उत्तेजित मन प्रशांत हो गया। विह्वल चित्त शांत हो गया। उद्विग्न आत्मा उल्लासमय हो गई।

संयोग प्रतिकूल है, परिस्थिति भी प्रतिकूल है... परंतु तेरी दृष्टि में अब प्रतिकूलता का दर्शन नहीं है! तूने सहजता से - स्वाभाविकता से स्वीकार कर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिया हर परिस्थिति को! हर संयोग को! धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता, प्रिय मुमुक्षु!

इस प्रकार तत्त्वज्ञान को जीवनोपयोगी बनाना चाहिए। मानसिक तनावों को, प्रश्नों को, समस्याओं को तत्त्वज्ञान से दूर किया जा सकता है। अभी-अभी एक महाशय मिले थे, अच्छे तत्त्वज्ञानी थे, विद्वान थे और उपदेशक भी! उनसे मेरी बहुत बातें हुई। यों भी मेरे पुराने परिचित हैं वे। उन्होंने अपनी कुछ आन्तरिक बातें मुक्त मन से की, कुछ बातें अस्पष्ट और संदिग्ध भी कही। वे व्याकुल थे, कुछ चिन्ताओं से व्यग्र थे... कुछ प्रतिकूल संयोगों में वे घिरे हुए थे। मैंने सहानुभूति से उनकी बातें सुनी...। जो कुछ मुझे कहना था, मैंने कहा भी सही... बहुत थोड़ी बातें कही... ज़्यादा तो क्या कहूँ। वे स्वयं तत्त्वज्ञानी हैं!

मेरे मन में अनेक विचार आए। तत्त्वज्ञानी को प्रतिकूल संयोग... प्रतिकूल परिस्थिति अशांत कर सकती है क्या? तो फिर तत्त्वज्ञान किसलिए? पास में साबुन है... पानी है... फिर भी वस्त्र गंदे क्यों? पास में भोजन हैं... पानी है फिर भी भूखे क्यों! प्यासे क्यों? तत्त्वज्ञान को जीवनस्पर्शी बनाने की दृष्टि का अभाव! अपने प्रश्नों को तत्त्वज्ञान के माध्यम से सुलझाने की क्षमता का अभाव!

परमात्मश्रद्धा भी, यदि वास्तव में श्रद्धा है, तो मन का समाधान कर सकती है। मन की शांति-स्वस्थता को अखंड रख सकती है। चाहिए हार्दिक और वास्तविक श्रद्धा। मात्र मंदिर में जाने से ऐसी श्रद्धा नहीं आ जाती है। श्रद्धा का जन्म और श्रद्धा की वृद्धि मंदिर में हो सकती है, परंतु परमात्मा की सही पहचान के बिना न तो श्रद्धा का जन्म हो सकता है, न श्रद्धा की वृद्धि हो सकती है।

अपनी जैन परंपरा में एक कथाग्रंथ है, नाम है श्रीपाल कथा। प्राकृत भाषा में इसको 'सिरिवाल कहा' कहते हैं। बहुत ही अच्छी कहानी है। इसमें मुख्य दो पात्र हैं, श्रीपाल और उसकी पत्नी मयनासुन्दरी। श्रीपाल राजकुमार था। मयना राजकुमारी थी। दोनों के जीवन संघर्षमय थे। कहानी तो बहुत बड़ी है, कभी तू आएगा मेरे पास, समय मिला तो कहूँगा...। आज तो मैं यह बताना चाहता हूँ कि मयना सुन्दरी ने श्रद्धाबल और ज्ञानबल के सहारे, उसके जीवन में पैदा हुए गंभीर प्रश्न को हल कर दिया था जरा सी भी घबराहट के बिना, जरा सी भी दीनता किए बिना! पिता-राजा ने अनजान और कुष्ठरोग से ग्रस्त युवाक के साथ मयना की शादी कर दी... फिर भी मयना के मन में कोई

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तूफान खड़ा नहीं हुआ, कोई भय... चिन्ता या रोष पैदा नहीं हुआ! चूँकि परमात्मश्रद्धा उसके हृदय में थी। तत्त्वज्ञान उसके हृदय में था। श्रद्धा एवं ज्ञान के सहारे उसने प्रतिकूल परिस्थिति को स्वीकार कर लिया और शांत मन से उपचार भी कर लिया! परिस्थिति चन्द दिनों में बदल गई! जहाँ दुःख का हुताशन सुलगता था वहाँ सुख का सागर लहराने लगा।

यह कहानी अपने जैन समाज में सुपरिचित है। इस कहानी का एक महाकाव्य गुजराती भाषा में भी है! 'श्रीपालरास' के नाम से प्रसिद्ध है।

मनुष्य के संघर्षमय जीवन में ऐसी कहानियाँ अत्यंत मार्गदर्शक और सत्त्वप्रेरक बन सकती हैं। परंतु इस दृष्टि से पढ़े तो न! मात्र मनोरंजन के लिए पढ़ने से अभिनव दृष्टि प्राप्त नहीं होती है। यदि फुरसत का समय व्यतीत करने की दृष्टि से पढ़ें, तो भी कहानी का हार्द और कथनीय तत्त्व हाथ नहीं लगता है।

किसी भी धर्मग्रन्थ का अध्ययन, चिन्तनरहित और अनुप्रेक्षारहित होता है, तो मात्र शाब्दिक ज्ञान प्राप्त होता है, उसका रहस्य प्राप्त नहीं होता है, उसका तत्त्व प्राप्त नहीं होता है। हालाँकि आजकल समाज में धर्मग्रन्थों का अध्ययन बहुत ही कम लोग करते हैं। राग-द्वेष और मोह की उत्तेजना पैदा करने वाली किताबों का धड़ल्ले से पठन हो रहा है।

तुझे तत्त्वज्ञान का रस है। नया-नया तत्त्वज्ञान पाने का प्रयत्न करते रहना। मन की और तन की दुविधाएँ समाप्त हो जाएँगी। मन स्वस्थ बना रहेगा, प्रशमभाव में लीन बना रहेगा। अनुकूल-प्रतिकूल संयोगों में 'कार्यकारणभाव' का ज्ञान होता रहेगा, इससे मानसिक समाधान मिलता रहेगा।

इस वर्ष तीर्थस्थानों में स्थिरता करने के सुअवसर मिलते रहे हैं। यह पत्र मैं मेत्राणा तीर्थ से लिख रहा हूँ। एक सप्ताह की स्थिरता यहाँ हो गई! भगवान आदिनाथ का यह प्राचीन तीर्थ है। यहाँ शांति है, स्वच्छता है और सुविधाएँ हैं! यात्रियों का आवागमन बहुत ही कम है। अध्ययन-अध्यापन और लेखन-कार्य अच्छा हुआ। मन नहीं करता यहाँ से जाने का! फिर भी विहार तो करना ही होगा। 'चैत्री ओली' के नौ दिन 'डीसा' में बिताएँगे।

वैशाख शुक्लपक्ष में पालनपुर में 'जैन धार्मिक ज्ञानसत्र' लगेगा। इसलिए पालनपुर जाना होगा। ज्ञानसत्र में तरुणों का और युवकों का उत्तम जीवननिर्माण होता है। जैन धर्म के सिद्धान्तों की रूपरेखा विद्यार्थियों को दी जाती है। साथ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ही साथ प्रयोगात्मक रूप से ज्ञान-भक्ति और चारित्र की शिक्षा दी जाती है। यदि तू ज्ञानसत्र में आ सके तो तुझे बहुत खुशी होगी। पढ़ने के लिए नहीं सही, देखने के लिए तो आना!

स्वास्थ्य अच्छा है। सारे कार्य सुचारुरूप से चल रहे हैं।

परिवार को 'धर्मलाभ' सूचित करना।

मेत्राणा

३०-३-७९

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *या तो अकेले जीने की कला सीख लेनी चाहिए या फिर सहजीवन-समूहजीवन जीने का तरीका समझ लेना चाहिए।*
- *एकत्व भावना व अन्यत्व भावना को दृढ़ बनाए बगैर अकेले जीना... प्रसन्नता से जीना संभव नहीं है!*
- *परस्पर एक दूसरे को समझे बगैर, एक दूजे को सहे बगैर सहजीवन संभवित नहीं है!*
- *जब हम स्वयं किसी की इच्छा के मुताबिक नहीं जी सकते फिर औरों से यह अपेक्षा क्यों रखनी चाहिए कि वे हमारी इच्छा के मुताबिक जिएं?*
- *आग्रही स्वभाव, दुराग्रही वर्तन जिन्दगी को भ्रमणाओं में भ्रमित कर डालता है! न किसी की सहानुभूति टिकती है... न कोई संबंध बनता है!*

पत्र : ३५

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ!

तेरा पत्र जब मेरे हाथ में आया तब आकाश प्रकाशरहित था। दिशायें उदास थी और वृक्षों पर पक्षी चुप्पी साधे बैठे थे। तेरे पत्र में जब तुझे देखा, तुझे सुना तो मेरा मन भी क्षुब्ध हो गया। हालाँकि मेरी क्षुब्धता बादलों जैसी क्षणिक थी। मैंने तेरी बातों पर गहराई से सोचा।

प्रिय मुमुक्षु! तुझे आज कुछ सच-सच बातें बता देना उचित मानता हूँ। पहली बात तो यह है कि तू संसार में जीने की कला अभी तक सीखा नहीं है। या तो तू अकेला जीने की कला प्राप्त कर ले अथवा किसी के साथ जीने की पद्धति सीख ले। स्वस्थ चित्त से तू निर्णय कर ले। निर्णय दृढ़ करना। मन की चंचलता निर्णय को दृढ़ नहीं होने देती है, इसलिए चंचलता तो मिटानी ही होगी।

यदि अकेला जीना है तो तू अकेला जी सकता है, परंतु इसके लिए तुझे एकत्व भावना से भावित होना पड़ेगा। अकेलापन अखरना नहीं चाहिए। 'मेरा कोई नहीं है,' यह दीनता कभी भी तेरे मन में नहीं आनी चाहिए। यदि मन में किसी को अपना बनाने की इच्छा है, तो तुझे किसी का बनना होगा! तू यदि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किसी का बनेगा, निष्काम भाव से किसी का बनेगा तो कोई तेरा बन सकता है। तू सोच ले, आज दिन तक तू किसी का बना है? मात्र मीठी-मीठी बातें करने से किसी का नहीं बना जाता। किसी का बनने के लिये... तुझे अपने सुख का विचार नहीं करना होगा। उसके सुख का विचार करना होगा। उसके सुख के लिये तुझे कुछ दुःख भी सहन करने होंगे। यदि तुझे किसी की जरूरत नहीं है, सम्पूर्णतया परनिरपेक्ष जीवन जीने की तेरी क्षमता है तो तुझे किसी के लिये दुःख सहन करने की आवश्यकता नहीं है। किसी के विषय में सोचने की जरूरत नहीं है। परंतु ऐसा जीवन जीना होगा तो साधु बनना होगा! साधु ही ऐसा जीवन जी सकता है! एकत्व की साधना ही साधु जीवन है। परंतु इसमें भी एक बड़ा भयस्थान है... वह है स्वार्थवृत्ति! एकत्व की साधना स्वार्थसाधना न बन जाय, यह ध्यान रखना!

कर सकेगा एकत्व की साधना? प्रबल आत्मश्रद्धा के सहारे प्रसन्नतापूर्ण जीवन जी सकेगा? है, ऐसा आत्मविश्वास? यदि आत्मविश्वास हो तो अकेला मस्त जीवन जीने का भी मजा है! जब तक शरीर स्वस्थ है, जब तक पैसा कमाने की क्षमता है, जब तक दूसरों की अपेक्षा रखे बिना जीने का जोश है तब तक तो मजा है, परंतु जब शरीर रोगग्रस्त बना, जब पैसा कमाने की क्षमता नहीं रही... तब वह मजा भाप बन कर आकाश में उड़ जायेगी!

जहाँ तक मैं सोचता हूँ, अकेला जीने की तेरी क्षमता नहीं है। साधुजीवन में भी तू अकेला नहीं जी सकता। कोई न कोई साथी-सहयोगी चाहिए ही! साथी और सहयोगी कैसे मिलता है, तू जानता है? तू कैसे जानता होगा? तू किसी का साथी बना ही नहीं है! तू किसी का जीवन-सहयोगी बना ही नहीं है।

यदि आज तू माता-पिता के साथ नहीं जी सकता है, भाई-बहन के साथ नहीं जी सकता है... कल तू पत्नी के साथ भी नहीं जी सकेगा। तू ऐसा चाहता है कि तेरी इच्छा के अनुसार सब चले! तेरी हरकतें सब सहन करे!

तू किसी की भी कोई हरकत नहीं सहन करना चाहता। जरा सोच तो सही, दुनिया में कहीं पर भी यह संभव है? परस्पर एक दूसरे को समझे बिना, एक दूसरे को सहन किये बिना, सहजीवन नहीं जिया जाता। तू किसी की इच्छानुसार जीवन जी सकता है क्या? अभी तक वैसा जीवन तूने जिया है क्या? नहीं न? तो फिर तू वैसी इच्छा कैसे कर सकता है कि अपनी इच्छा के अनुसार दूसरा जीवन जिये? असम्भव है भैया! यदि जीवन को व्यर्थ गंवाना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं हो तो ऐसे फालतू विचार छोड़ दे। अर्थहीन... सारहीन विचार करके दिमाग को बिगाड़ मत।

आग्रह छोड़ दे। मन को निराग्रही बना दे। तेरा स्वभाव आग्रही बन गया है। तू अपनी इच्छाओं के अनुसार सब कुछ तीव्रता से चाहता है, यह तीव्रता तुझे अशान्त बनाये रखती है। इस तीव्रता ने तुझे कई बार परेशान कर डाला है... जानता है न? आग्रही-दुराग्रही स्वभाव तुझे कहीं पर भी शान्ति से नहीं जीने देगा। तू भव की भ्रमणा में भटक जायेगा। हालाँकि आज भी तू भ्रमणाओं में भ्रमित ही है। मेरी यह बात तेरे हृदय को दुःख पहुँचायेगी... परंतु क्या करूँ? स्पष्ट बात लिखे बिना अब दूसरा कोई चारा नहीं है।

कितनी बीहड़ विकल्पजाल में तू फँस गया है - जरा तो तू सोच। कितने अच्छे संयोग तुझे मिले हैं? कितना पवित्र वातावरण तुझे मिला है? आत्मविकास करने का कितना उन्मुक्त क्षेत्र तुझे मिला है? क्या तू इसका मूल्यांकन नहीं करेगा? छोटी सी जिन्दगी ऐसे ही बिता देगा? तेरी भूलों को तू कभी स्वीकार नहीं करेगा?

तूने कभी अपनी भूलों का स्वीकार किया है? हमेशा दूसरों की ही भूलें तू देखता रहा है। क्या पाया तूने? कौन-सी संपत्ति तूने पा ली? तू सोच : तेरे अपने कौन हैं? तेरे प्रति हार्दिक स्नेह रखने वाले कौन हैं? तूने वैसे स्नेहीजनों को भी ठुकरा दिये! तेरी आग्रहवृत्ति ने कितने-कितने नुकसान किये हैं - जानता है न?

शायद तू यह पत्र पढ़कर लिखेगा : 'मैं अब जीना ही नहीं चाहता हूँ!' तो कहाँ जायेगा? मृत्यु के बाद दूसरा जीवन मिलेगा... वह जीवन जीना पड़ेगा! जीवन तो जीना ही पड़ेगा... यह जीवन नहीं तो दूसरा कोई जीवन! और तू क्या यह मानता है कि आत्महत्या करने वाले को इस मानव जीवन से बढ़िया दूसरा जीवन मिलेगा? भ्रमणा में मत रहना। दुस्साहस मत करना।

तेरे प्रति हार्दिक स्नेह होने से ही ये सारी बातें लिखी है। तेरा जीवन-महल मिट्टी में ढह न जाय, तू घोर दुःख और अशान्ति से मुक्त बने, इसी पवित्र भावना से यह पत्र लिखा है। मेरे हृदय के पवित्र आशय पर जरा सा भी अविश्वास तू नहीं करेगा-इस श्रद्धा से ये बातें लिखी हैं।

वर्षाकाल निकट आ रहा है। चातुर्मास डीसा में व्यतीत होगा। यदि तेरी अनुकूलता हो और तू डीसा आये तो प्रत्यक्ष बहुत सारी बातें हो सकती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हालाँकि बातें तो पहले भी बहुत हुई हैं, तू उन बातों पर स्वस्थ मन से सोचे, तो तेरे मन का समाधान हो सकता है।

प्रिय मुमुक्षु! ज्यादा तो क्या लिखूँ? बुद्धिमान को ज्यादा लिखना नहीं चाहिए, ज्यादा उपदेश देना नहीं चाहिए, ज्यादा उपालंभ भी नहीं देना चाहिए। इतना भी जो तुझे लिखा है, वह तेरा पत्र पढ़ने से मेरे मन में जो व्यथा हुई, तेरे प्रति जो तीव्र सहानुभूति प्रकट हुई- इससे लिखा गया है। फिर भी, यदि मेरे इस पत्र से तेरे हृदय को दुःख हुआ हो- तो क्षमा चाहता हूँ।

५-५-७६

पालनपुर

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *संसार में सभी सवालों के जवाब नहीं मिलते! कुछ सवाल हमेशा-हमेशा के लिये बेजवाब रहते हैं।*
- *मोक्ष में जानेवाले जीवों को 'भव्य' कहा जाता है... जबकि जो जीव कभी भी मोक्ष में नहीं जाएँगे उन्हें 'अभव्य' कहते हैं! कोई 'अभव्य' क्यों? इसका कोई समाधान नहीं मिलता!*
- *अभव्य आत्मा की कभी भी मुक्ति नहीं होगी! किस गुनाह की इतनी बड़ी सज़ा? कोई गुनाह नहीं... कोई सज़ा नहीं, यह तो संसार की एक वास्तविकता मात्र है।*
- *आत्मनिरीक्षण के बिना अध्यात्म के रास्ते पर एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा जा सकता!*
- *शांत मन से अपने भीतर को देखो! अपने विचारों को, अपने व्यवहारों को जांचो। और इस तरह स्वयं का निरीक्षण करते रहो।*

पत्र : ३६

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र नहीं मिल रहा है। अच्छा है, इन दिनों में मैं अत्यन्त व्यस्त हूँ, तेरे पत्रों का ठीक समय पर प्रत्युत्तर नहीं दे पाता।

पालनपुर से यहाँ तक की पदयात्रा में कुछ अन्तःस्पर्शी विचारस्पंदनों की सुखद अनुभूति हुई। ये सारे विचार बाह्य अनुकूल-प्रतिकूल संयोगों पर आधारित नहीं है, बाह्य क्षणिक एवं परिवर्तनशील परिस्थितियों के सन्दर्भ में भी नहीं है। यह विचारधारा प्रवाहित हुई है, मेरे ही अन्तःस्तल पर! मेरी ही मानसिक भूमि पर!

विचारयात्रा का प्रारम्भ हुआ 'अभव्य' जीवों से! तीर्थंकर भगवंतों ने दो प्रकार के जीव बताये हैं : भव्य और अभव्य। जो जीव कभी न कभी मुक्ति पायेंगे, वे जीव भव्य कहलाते हैं और जो जीव कभी भी मुक्ति नहीं पायेंगे, वे जीव अभव्य कहलाते हैं। दोनों प्रकार के जीव अनन्त-अनन्त हैं! भव्य जीव अनन्त हैं, वैसे अभव्य जीव भी अनन्त हैं!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'अनन्त जीवों में अभव्यता क्यों? अनन्त जीव मुक्ति से... मोक्ष से वंचित क्यों रहेंगे?' इस प्रश्न का कोई भी समाधान नहीं है! अनन्त जीव संसार की चार गतियों में परिभ्रमण करते रहेंगे! वे कभी भी अपने कर्मों का नाश नहीं कर पायेंगे... कभी पूर्ण आत्मस्वरूप प्राप्त नहीं कर पायेंगे! किस अपराध की यह सजा होती है? कोई अपराध नहीं! निरपराधी को यह कितनी बड़ी सजा है?

विश्व का एक सर्वमान्य सिद्धान्त है, कार्य-कारणभाव का [Cause & effect] यानी कि कोई भी कार्य बिना कारण नहीं बनता। यह सिद्धान्त 'अभव्यत्व' के सामने नतमस्तक हो जाता है! 'अभव्यत्व' का कोई कारण ही नहीं! अभव्यत्व कोई अपराध की सजा नहीं है, कोई गलती का परिणाम नहीं है।

यदि कोई अभव्य जीवात्मा, जिसको मालूम हो गया हो कि मैं अभव्य हूँ, वह पूछ ले तीर्थंकर परमात्मा को कि : भगवन्, मैं अभव्य क्यों? मैं भी एक चैतन्यमय आत्मा हूँ... मैं भव्य क्यों नहीं? इसका प्रत्युत्तर उसको क्या मिले?

यह भी संसार की एक वास्तविकता है कि बिना अपराध... सजा हो सकती है! स्वीकार कर लेना चाहिए इस वास्तविकता को! इस बात को स्वीकार कर लेने से मन की एक गंभीर उलझन सुलझ जाती है। हालांकि अपने जीवन में सुख-दुःख की जो घटना घटती है, वह सकारण ही घटती है, परंतु कभी हम कारण समझ नहीं पाते हैं, इसलिए हम मान लेते हैं कि 'यह निष्कारण दुःख पाया... मैं बेगुनाह था और मुझे सजा हुई...।'

प्रिय मुमुक्षु! तू स्वस्थता से-गंभीरता से सोचना कि उन अभव्य जीवों की कैसी करुणास्पद स्थिति होती है। वे जीव कभी भी कर्मों से मुक्त नहीं बनेंगे... कभी भी वीतराग नहीं बन पायेंगे... कभी भी सर्वज्ञ नहीं बन पायेंगे! आत्मा का स्वयं पूर्णानन्द नहीं पा सकेंगे! चूंकि वे अभव्य हैं!

तू बाह्य आचरण से या विचारों से निर्णय नहीं कर सकेगा कि यह जीव भव्य है या अभव्य है! यह निर्णय करना अपनी बुद्धि-शक्ति से परे है। दूसरे मनुष्यों के विषय में किसी भी तरह का निर्णय, उनके बाह्य आचरण से करने जायेगा तो सही निर्णय करना संभव नहीं है। बाह्य आचरण साधु जैसा हो और हृदय डाकू का हो सकता है। बाह्य आचरण डाकू जैसा हो और हृदय साधु का हो सकता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूसरे मनुष्यों का नहीं, अपने स्वयं के विषय में भी, गहन आत्मनिरीक्षण के बिना, सही निर्णय होना संभव नहीं है। अपने स्वयं के गुण-दोषों को जानना, वास्तविक रूप में जानना आसान बात नहीं है। आत्मनिरीक्षण बहुत बड़ी बात है। हर कोई मनुष्य आत्मनिरीक्षण नहीं कर सकता! और, जो मनुष्य आत्मनिरीक्षण नहीं कर सकता, वह मनुष्य पर-परीक्षण कैसे कर सकता है?

मुमुक्षु! आत्मनिरीक्षण अध्यात्म मार्ग में तो अनिवार्य है ही, संसार के हर क्षेत्र में आवश्यक है। शान्त मन से, स्वस्थ चित्त से अपने आप को भीतर से देखो। अपने विचारों को देखो, विचारों की स्थिरता-अस्थिरता को देखो। प्रगट और प्रच्छन्न दोषों को देखो। भूतकालीन सफलता-निष्फलता के कारणों का सम्यक् आलोचन करो।

इस प्रकार आत्मनिरीक्षण करने से मनुष्य का भविष्य विशेष उज्ज्वल बन सकता है। परंतु आत्मनिरीक्षण करें कैसे? पर-निरीक्षण और पर-परीक्षण करने में मनुष्य इतना उलझ गया है कि आत्मनिरीक्षण का समय ही नहीं मिलता! दिन-रात पर-निरीक्षण और पर-चिन्ता में निमग्न मनुष्य अपने आपको ही भूल बैठा है।

इस बार खूब आत्मनिरीक्षण होता रहा है। विरक्ति की तीव्र अनुभूति भी हुई। वास्तव में संसार स्वप्न समान लगा। संसार के सारे संबंध वायु समान चंचल लगे। साथ-साथ परमात्मचरणों में तृप्ति की अनुभूति हुई। अन्तर्यात्रा के आनन्द का अनुभव किया।

प्रिय मुमुक्षु! स्वप्नवत् जीवन की स्वप्न समान उलझनों में फँसना मत। उलझनों से हृदय को अलिप्त रखना। निर्लेप रखना। हालांकि मुश्किल है यह काम, फिर भी करना अत्यन्त आवश्यक है। अपने आसपास जो-जो घटनायें घटती हैं, जो-जो बातें बनती हैं... क्या हम मात्र उसके ज्ञाता और द्रष्टा बन सकेंगे? राग-द्वेष से अलिप्त रह सकेंगे? कब वैसे दिन आयेंगे?

मुझे तो लगता है कि यदि 'परवृत्तान्त-अन्ध-मूक-बधिर' नहीं बनेंगे तो जीवन में कभी भी शान्ति-समता और समाधि की अनुभूति नहीं होगी? पर-वृत्तान्त के प्रति अंधापन आ जाना चाहिए। दूसरों की ओर, परपदार्थ की ओर देखना ही नहीं। परपदार्थ, परद्रव्य के विषय में बोलना ही नहीं और परपदार्थ की बातों को सुनना ही नहीं!

यह भी एक साधना है! आत्मविकास की साधना है। आत्मशांति पाने की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साधना है। कुछ अंशों में, गृहस्थ भी यह साधना कर सकता है। साधुजीवन में यदि साधु चाहे तो यह साधना अच्छी तरह कर सकता है। यदि साधु के पास इस आंतर साधना की दृष्टि हो तो साधुजीवन में वह अद्‌भुत शांति का अनुभव कर सकता है।

आज तो मैंने मेरी बातें लिख दी है। तेरी आंतर प्रसन्नता बनाये रखना। हालांकि इस भयानक संसार में स्वस्थता और प्रसन्नता बहुत दुर्लभ है।

पालनपुर में ज्ञानसत्र पूर्ण हो गया! आयोजन भी अच्छा रहा। ज्ञानसत्र पूर्ण होते ही हमने वहाँ से विहार कर दिया था। महोत्सव के प्रसंग पर हम लींच (मेहसाना के पास) आये हुए हैं। जेठ शुक्ल पक्ष यहाँ व्यतीत होगा। आषाढ़ शुक्ल पक्ष में डीसा में चातुर्मास-प्रवेश करने की भावना है। सभी जीवों का कल्याण हो, यही कामना -

लींच

१-६-७९

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *प्राचीनकाल की श्रमणसंस्कृति कितनी लुभावनी प्रतीत होती है, कभी-कभी! पर्वतीय उपत्यकाओं में रहने का! गुफाओं में जीने का! निर्जन गृहों में रहने का! निःसंग बन कर! निर्मम बन कर!*
- *परद्रव्य के सहारे 'स्व' को पूर्ण बनाने की अंधी दौड़ में आत्मसत्ता को भुला दिया गया है।*
- *सुख पाने के लिये और दुःख से पीछा छुड़ाने के लिये सारा संसार दौड़धूप मचा रहा है।*
- *दूसरों के कर्तव्यों की छानबीन में उलझने की बजाय हमें हमारे कर्तव्यों को जानना-पहचानना जरूरी है।*
- *जहाँ अपनी जिम्मेदारी नहीं या लेना-देना नहीं, वहाँ अपनी अधिकारवादी मनोदशा का प्रदर्शन करने से क्या?*

पत्र : ३७

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिल गया था, हमारी पदयात्रा चल रही थी, अब डीसा पहुँच गये हैं, पदयात्रा स्थगित हो गई, चातुर्मास-काल अति निकट है... वर्षा का प्रारंभ हो गया है, वैसे चातुर्मास के कार्य-कलापों का भी प्रारंभ हो रहा है।

प्राचीनकाल की श्रमण संस्कृति कभी-कभी बहुत आकर्षित करती है! वर्षाकाल में सारी बाह्य प्रवृत्तियों से मुक्त बन, निर्जन गृहों में... पर्वतीय गुफ़ाओं में जाकर मुनिवृन्द तपश्चर्या के साथ ध्यान में निमग्न हो जाते थे! निजानन्द की मस्ती का अनुभव करते थे... कैसा अद्‌भुत होगा उनका आंतर आनन्द! अद्वैत की कैसी दिव्य अनुभूतियाँ होती होगी।

कोई सामाजिक प्रवृत्तियाँ नहीं! कोई जनसंपर्क नहीं! प्रतिपल जागृति, प्रतिक्षण अप्रमत्तता! परब्रह्म में निमग्नता! कोई विषयान्तर नहीं! वह थी मोक्षप्राप्ति की अदम्य आंकाक्षा... वह थी आत्मप्राप्ति की अखंड आराधना। आज कहाँ है वह श्रमणसंस्कृति की परम्परा? कहाँ है वह अद्वैत की आराधना?

आज तो द्वैत के असंख्य द्वन्द्व! आज तो है परद्रव्य के सहारे पूर्णता पाने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की मिथ्या दौड़धूप! परद्रव्य को स्वद्रव्य बनाने की सतत प्रवृत्ति में भूल गये हैं, विशुद्ध आत्मसत्ता को। सुख पाने के लिये और दुःख से बचने के लिये चल रहा है, भ्रमणापूर्ण पुरुषार्थ।

तेरे पत्र में तुम्हारी समस्या को पढ़ा। जब तक तू वास्तविकता से अज्ञात रहेगा, वस्तुस्थिति से अपरिचित रहेगा, तेरी कोई न कोई मानसिक समस्या बनी ही रहेगी। तू लिखता है कि 'सब कुछ मेरी इच्छाओं के प्रतिकूल हो रहा है! कोई मेरी इच्छाओं की परवाह नहीं करता...।'

प्रिय मुमुक्षु! अपने घर में तू अकेला तो है नहीं, तेरे पिताजी हैं, भाई है, बहन है, माँ है... उन सबकी भी इच्छायें होती हैं न? किसकी इच्छा चले और किसकी इच्छा नहीं चले? यदि कोई ऐसा आग्रह रखे कि 'मेरी ही इच्छा के अनुसार सब कुछ होना चाहिए', तो घर में संघर्ष हो जायेगा। मान ले क्षणभर कि घर में तेरी इच्छानुसार सब कुछ होता है, क्या तेरे भाई के मन में समस्या पैदा नहीं होगी? 'घर में मेरी इच्छा से प्रतिकूल हो रहा है... मेरी एक भी बात नहीं चलती।' वैसे तेरे पिताजी के मन में भी कुछ उलझनें पैदा नहीं होगी क्या?

मुझे तो ऐसा लगता है कि जो मनुष्य अपनी इच्छाओं के अनुसार ही सब कुछ होने का आग्रह रखता है, वह मनुष्य 'अहं' की कल्पना से उत्पीड़ित होता है। 'मैं ही सब कुछ हूँ,' यह विचार मनुष्य के मस्तिष्क को विकृत कर देता है। विकृत मस्तिष्क अपनी इच्छाओं को सफल बनाने का आग्रही होता है। जब इच्छायें सफल नहीं होती तब वह रोष और आक्रोश से भर जाता है। दीनता से कराहता है। दूसरों के प्रति दुर्भाववाला बन जाता है। तू सोचना, आंतर निरीक्षण करना। यदि आग्रहों को छोड़कर सोचेगा तो सही दिशा प्राप्त होगी। मुझे तो यह विचार आता है कि तेरे दुराग्रहों से तेरा परिवार कितना त्रस्त होगा। मैं जानता हूँ कि तेरे माता-पिता को तुम्हारे प्रति गहरा स्नेह है, जब उनके प्रति तेरा आक्रोश वे देखते होंगे तब उनके हृदय में कितनी वेदना होती होगी?

तुझे समझना चाहिए कि तेरे पिताजी और बड़े भाई के ऊपर कितनी जिम्मेदारियाँ हैं। उनको सबका खयाल कर निर्णय करने होते हैं। तुझे अभी जिम्मेदारियाँ निभाने का अनुभव नहीं है। तू अपना ही विचार करता है। वे सापेक्ष दृष्टि से सोचते हैं और निर्णय करते हैं, तू निरपेक्ष दृष्टि से सोचता है और निर्णय करता है। तू यदि अपनी जिम्मेदारी समझे तो अपने विचारों में भी परिवर्तन आ सकता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महानुभाव! तू अपने बाह्य-आंतरिक विकास की रूपरेखा बनाकर उस दिशा में आगे बढ़ता रह। दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करता रह। दूसरों के तेरे प्रति क्या कर्तव्य हैं, उस विचार में उलझना नहीं। दूसरे क्या करते हैं, यह तू क्यों देखता है? तू अपने कर्तव्यों का पालन करता चल। अपनी इच्छाओं के अनुसार चलने के लिये दूसरों को मजबूर करने का प्रयत्न छोड़ दे। तेरा मन शान्त हो जायेगा। तुझे मानसिक शान्ति प्राप्त होगी।

जिस-जिस पर तेरा अधिकार नहीं है, जिनकी तुझ पर जिम्मेदारी नहीं है, उनकी चिन्ता करना छोड़ दे। क्यों चिन्ता करना? वे लोग नहीं चाहते हैं कि तू उनकी चिन्ता करे! वे लोग तेरी राय नहीं चाहते हैं, तू क्यों उनकी चिन्ता करता है? तू क्यों उनको राय देने जाता है? मानेगा मेरी बात? इससे तुझे कोई हानि होनेवाली नहीं है। इससे तेरा कोई अवमूल्यन होनेवाला नहीं है।

बम्बई में एक लड़का मेरे पास आया था। कॉलेज में पढ़ता था। उसके पिता थे, माँ थी, भाई थे, भाभी थी... संपन्न परिवार था। इस लड़के की बस यही शिकायत थी 'मेरी बात कोई सुनता नहीं है...।'

जब उसके माता-पिता मेरे पास आये, उन्होंने कहा : 'आप कृपा कर उसको समझाइये कि वह अपने भाइयों को और भाभी को हर बात में राय न दें... वह यह समझता है कि वही समझदार है... उसमें ही अक्ल है... इससे उसके भाई-भाभी वगैरह नाराज़ हैं, हमारा तो बेटा है, इसलिए उसकी हरकतें सहन कर लेते हैं... परन्तु आजकल के भाई-भाभी कैसे सहन करेंगे?'

वह लड़का अभी पढ़ाई करता था... उसके दोनों बड़े भाई पढ़े-लिखे और सज्जन थे। दुकान चलाते थे। इसको खाने-पीने और पहनने के लिये सब कुछ मिलता था। उसकी आवश्यकतायें पूरी होती थी। परन्तु ये भाईसाब तो चाहते थे कि उसके दोनों बड़े भाई उसकी राय लिया करें! भाभी तो उसके कहे अनुसार ही काम करे! इस मनोदशा के कारण वह अपने घर में अप्रिय बन गया था। मैंने उसको समझाने की भरसक कोशिश की... थोड़े दिन ठीक चला, फिर वही-कुत्ते की दुम टेढ़ी की टेढ़ी!

तू अनाग्रही बन जा। इस विश्व में जो होनेवाला होता है, वही होता है। जिस मनुष्य की जैसी भवितव्यता होती है, वैसा ही बनता है। तू चिंता मत कर। तू अपने ही कर्तव्यों का विचार कर। बड़े-बड़े महापुरुषों की भी सभी इच्छायें पूर्ण नहीं हो पाती हैं... तो फिर तेरी-मेरी सभी इच्छायें कैसे पूर्ण

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होगी? तेरे स्वयं के आत्मविकास की इच्छा को पूर्ण करने का प्रयत्न करता रह! आंतरिक गुणों का विकास करता चल, आन्तर दोषों का विनाश करता चल! मानवजीवन में इतना काम हो जायेगा तो बहुत बड़ा काम हो गया, ऐसा मानना।

वर्षाकाल है, आत्मसाधना का अच्छा समय है। कुछ विशेष धार्मिक-आध्यात्मिक अध्ययन करना। तपश्चर्या तो तू करेगा ही! हृदय को अनाग्रही बनाने की आराधना करना! करेगा न? तेरी चित्त-प्रसन्नता बनी रहे, यही मंगल कामना।

१-७-७९,

डीसा

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जब अक्सर घटनेवाली विनाशलीला को देखते हैं... पढ़ते हैं, जानते हैं... तब लगता है... 'सर्वं क्षणिकम्' या 'सर्वं अनित्यम्' का सिद्धांत कितना सच्चा है?*
- *करुण घटनाओं को देख-जानकर भी यदि हम अपने जीवन की अनित्यता, अस्थिरता और चंचलता के बारे में नहीं सोचते हैं, तो फिर अपनी जानकारी का मतलब क्या?*
- *जिन्दगी कितनी क्षणिक है? पल दो पल के बुलबुले-सी जिन्दगी में सुख-दुःख की मायाजाल के लिये कितना कुछ अच्छा-बुरा हम करते रहते हैं?*
- *पर्वों का आयोजन परस्पर के प्रेमभाव को प्रवृद्ध करने के लिये, सखाभाव को संवर्धित करने के लिये किया गया है।*

पत्र : ३८

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला था, प्रत्युत्तर लिखने में विलंब हुआ है। कुछ महत्त्वपूर्ण कार्यों में ज्यादा व्यस्तता रही। हालांकि, तुझे प्रत्युत्तर लिखना वह भी महत्त्वपूर्ण कार्य ही है, परन्तु जब कोई आकस्मिक घटना बनती है तब वही महत्त्वपूर्ण कार्य बन जाता है। दि. १३, अगस्त के दिन समाचार मिले कि मोरबी (सौराष्ट्र-गुजरात) शहर के पास आया हुआ पानी का बाँध टूट गया है और मध्याह्न तीन बजे बाँध का पानी मोरबी शहर में आ गया... सारा शहर तहस-नहस हो गया... पानी तो तीन-चार घंटे ही रहा... परन्तु सर्वनाश कर दिया।

मोरबी के पास मच्छू नदी बहती है। इस नदी के ऊपर दो बाँध बाँधे गये हैं। मोरबी के पास जो बाँध है, वह कच्चा है। पानी के तीव्र आवेग से बाँध टूट गया और मात्र ६ कि.मी. दूरी पर आया हुआ मोरबी शहर २० से २५ फीट पानी के नीचे आ गया। हजारों स्त्री-पुरुष और बच्चे पानी में बह गये। हजारों पशु भी उस प्रचंड बाढ़ में बह गये। हजारों मकान धराशायी हो गये। करीबन एक अरब रूपयों का नुकसान हो गया।

क्या अपने केवलालोक में ऐसा ही सब देखकर भगवान महावीर ने कहा होगा... कि 'सर्वं अनित्यम्!' भगवान बुद्ध ने संसार की ऐसी ही संहारलीला देखकर कहा होगा 'सर्वं क्षणिकम्!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जलप्रलय के समाचार विश्व में फैल गये हैं। हजारों निराधार बने स्त्री-पुरुष राजकोट चले गये हैं, हजारों अनाथ लोग अपने स्नेही-स्वजनों के गाँव चले गये हैं... हजारों स्त्री-पुरुष मौत की गोद में समा गये हैं। ८० हजार की आबादीवाला मोरबी शहर आज विरान हो गया है।

हालांकि पानी की बाढ़ के बाद अब सहायता की बाढ़ आ गई है। ध्वस्त मोरबी को स्वस्थ बनाने के लिये सरकारी तंत्र के अलावा अनेक सेवाभावी संस्थायें और हजारों स्वयंसेवक मोरबी में कार्यरत हैं। यहाँ से भी हजारों रूपये की सहायता पहुँचाई गई है। समग्र देश में से करोड़ों रूपये की सहायता पहुँचेगी... परन्तु जिन्होंने स्वजनों को खो दिया है... स्नेही और मित्रों को गँवा दिया है, उनकी क्षतिपूर्ति कौन करेगा? टूटे हुए मकान नये बनवा दिये जायेंगे... लोगों को खाद्य सामग्री और दूसरी जीवनोपयोगी सामग्री दी जायेगी... परन्तु जो स्नेही-स्वजन मौत की गोद में समा गये, उनको कौन वापस लौटायेगा?

जीवन की क्षणभंगुरता का इससे बढ़कर कौन-सा उदाहरण चाहिए? प्रियजनों के संयोग-वियोग की करुण कथा, इससे बढ़कर कौन-सी चाहिए? वैभव और संपत्ति की अनित्यता को समझने के लिए इससे बढ़कर कौन-सी घटना चाहिए? वैषयिक सुखों की आसक्ति को मिटाने के लिए इससे बढ़कर कौन-सा उपदेश चाहिए? यौवन और जीवन की क्षणिकता आत्मसात् करने के लिए इससे बढ़कर कौन-से करुण दृश्य चाहिए? गलियों में... राजमार्गों पर पड़ी हुई अनेक युवकों की... युवतियों की चेतनाहीन देहों को देखकर भी वैराग्य न हो तो वैराग्य के दूसरे कौन-से कारण चाहिए?

अल्पकालीन जीवन के तुच्छ सुख-दुःखों के लिए निरन्तर झगड़ने वाले लोग क्या ऐसी प्रत्यक्ष दुर्घटनाओं से कोई बोध ग्रहण करेंगे? हर घटना को देखने की एक दिव्यदृष्टि चाहिए। हर घटना पर सोचने की ज्ञानदृष्टि चाहिए। जब जिन्दगी इतनी क्षणिक है, अनित्य है... तो फिर उस जिन्दगी के सुख-दुःखों के लिए झगड़ना क्या? किसी सुख को पाने की तत्परता क्यों? किसी दुःख से छूटने की तीव्रेच्छा क्यों?

प्रिय मुमुक्षु! तन-मन के सारे द्वन्द्व सुख-दुःख के आग्रहों में से उत्पन्न होते हैं और आग्रह होता है सुखों के राग से, दुःखों के द्वेष से। क्षणिक सुखों के प्रति राग? क्षणिक दुःखों के प्रति द्वेष? क्यों? ये राग-द्वेष करते रहेंगे और जीवन ही समाप्त हो जायेगा तो? राग-द्वेष करते रहे और यौवन ही चला गया तो?

किसी अप्राप्त सुखों की इच्छा करने जैसी नहीं है, प्राप्त सुखों की ममता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करने जैसी नहीं है। इच्छा नहीं, तृष्णा नहीं, अभिलाषा नहीं। वैसे, किसी के प्रति रोष करने जैसा नहीं है। रोष नहीं, ईर्ष्या नहीं, द्वेष नहीं, दोषदर्शन नहीं, निन्दा नहीं। क्षणभंगुर जिन्दगी में ये राग-द्वेष कर आत्मा को मलीन करने में बुद्धिमत्ता नहीं है। बुद्धिमत्ता है, आत्मभाव को निर्मल बनाने में। बुद्धिमत्ता है, वैराग्य को, प्रशम को स्थिर करने में।

अभी यहाँ 'प्रशमरति' ग्रन्थ पर प्रवचन हो रहे हैं। 'प्रशमरति' पर जब बोलो तब नया ही लगता है। 'प्रशमरति' पर जब लिखो, नया ही लगता है। आन्तर शान्ति, आन्तर प्रसन्नता पाने के लिए इस ग्रन्थ का चिन्तन-मनन अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अनन्त विषमताओं से भरे हुए संसार में प्रशमरस की अनुभूति कितनी दुर्लभ है, कितनी मूल्यवान है... वह तो सोचने पर ज्ञात होता है। यदि तू आन्तर प्रसन्नता का सदैव आस्वाद करना चाहता है और मन को बाह्य परिस्थितियों के प्रभाव से मुक्त रखना चाहता है... तो तू 'प्रशमरति' का अध्ययन कर, पुनः-पुनः चिन्तन-मनन कर।

'प्रशमरति' पर विवेचन लिखता जा रहा हूँ। लिखने में भी आत्म-प्रसन्नता का अनुभव होता है। पढ़ने वालों को तो आत्मशान्ति मिलेगी तब मिलेगी... मुझे तो ऐसे आनन्द की अनुभूति होती है... कि पत्र में लिख नहीं सकता, उस आनन्द को शब्दों में बाँध नहीं सकता।

पर्युषण महापर्व का प्रारंभ हो गया है। हृदयशुद्धि का और परमात्मा श्री महावीर स्वामी की मधुर स्मृति का यह महापर्व है। जैन शासन का यह पर्व विश्व में अद्वितीय है। निर्वैर वृत्ति और मैत्री पूर्ण प्रवृत्ति का यह पर्व हर दृष्टि से श्रेष्ठ लगता है। पर्व को मनाने की भी दृष्टि चाहिए! हृदय में जलती हुई द्वेष की आग को बुझा देना और जीव मैत्री के पुष्पों को विकसित करना-इस पर्व की फलश्रुति है। तपश्चर्या से, धर्मक्रियाओं से एवं प्रवचन श्रवण से वैरवृत्ति को नष्ट कर देना है। सभी जीवों के हित की कामना करते हुए, किसी का भी अहित नहीं करने का दृढ़ संकल्प करना है।

पर्युषण महापर्व के दूसरे दिन यह पत्र लिख रहा हूँ। समग्र वर्ष में जानते-अनजानते तेरे हृदय को दुःख पहुँचाया हो तो क्षमा कर देना। अन्तःकरण से क्षमा चाहता हूँ। आत्मीयता में कभी तीव्रता आ जाती है तो आत्मीय व्यक्ति को दुःख हो जाय वैसा लिख दिया जाता है, बोल दिया जाता है। तेरा आत्मभाव प्रसन्न रहे यही मंगलकामना।

डीसा,
२१-८-७९

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *पानी की बाढ़ से भी ज्यादा खतरनाक बाढ़ है, समय की! सब कुछ इस कदर खींच ले जाता है समय... कि पीछे नामोंनिशा भी नहीं बचता!*
- *सब कुछ बह जायेगा इक दिन! यह महल ढह जायेगा इक दिन!*
- *यह समझकर आदमी यदि जिये तो उसे सुखों में आसक्ति नहीं होगी! जब भी जरूरत होगी... वह अपने सुखों को बिखेर देगा! बाँट देगा!*
- *सुखों को बांटने का, बिखेरने का भी एक अद्‌भुत आनंद है! अपनी खुशी के फूलों की खुशबू को लुटाने का मजा भी अनूठा होता है।*
- *सुखों को महसूस करना एक चीज़ है... जबकि उसमें आसक्त होकर जीना अलग चीज़ है।*

पत्र : ३९

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

संवेदनाओं से संसिक्त तेरा पत्र मिला, मन प्रसन्न हुआ। तेरी संवेदनशीलता ने मेरे हृदय को प्रभावित किया। चूँकि मोरबी का जलप्रलय अभी भी विस्मृत नहीं हुआ है। जो हजारों मानव एवं पशु जलप्रवाह में बह गये... मर गये... उनके विषय में 'मृत्यु' ही चिन्तन बन गया है। जो बच गये हैं थोड़े-बहुत मनुष्य... वे बेघर, निराधार और वेदनाग्रस्त हैं। उन लोगों का सुख बह गया... इसलिए वे दुःखी, अशांत और वेदनाग्रस्त हैं।

वे नहीं चाहते थे कि उनके सुख जलप्रवाह में बह जाये... फिर भी बह गये... इसलिए वे दुःखी हैं, अशांत हैं। परंतु मानव नहीं जानता है कि जलप्रवाह से भी ज्यादा... बहुत ज्यादा भयानक है, कालप्रवाह! कालप्रवाह में सब कुछ बह रहा है। हम भी कालप्रवाह में बह रहे हैं। कालप्रवाह में देव-देवेन्द्र बह गये हैं... राजा-महाराजा बह गये हैं... बड़े-बड़े नगर बह गये हैं... सर्वभक्षी है, यह कालप्रवाह। जागृत मनुष्य को यह समझकर जीना चाहिए कि 'मैं और मेरे सुख कालप्रवाह में बह जानेवाले हैं।' यदि इस समझदारी के साथ मनुष्य जिये तो उसको अपने आप पर ममता नहीं रहेगी, अपने सुखों पर ममता नहीं रहेगी। वह अपने आपका विसर्जन चाहेगा... वह स्वयं अपने सुखों को बिखेर देगा। सुखों का त्याग कर देगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपने आपका विसर्जन यानी अपने देहाभिमान का विसर्जन! अपने रूपाभिमान का, बलाभिमान का विसर्जन! अपने व्यक्तित्व के व्यामोह का विसर्जन! मनुष्य अपने व्यक्तित्व से मोह करता है। जब किसी के द्वारा उसके व्यक्तित्व का खंडन होता है, वह दुःखी होता है। जब किसी के द्वारा उसके व्यक्तित्व का अभिनन्दन नहीं होता है, वह अतृप्ति की वेदना अनुभव करता है। अपने व्यक्तित्व की प्रशंसा को वह सुख मानता है। यह सुख कितना क्षणिक है और कितना दुःखदायी है, यह बात तुझे अच्छी तरह समझनी होगी और उस सुख का विसर्जन करना होगा। सुख के विसर्जन से तुझे अपूर्व आत्मप्रसन्नता का अनुभव होगा। आत्मप्रसन्नता उस सुखानुभव से बहुत ही ज्यादा आनंदप्रद होगा। चूँकि आत्मप्रसन्नता में निर्भयता होती है। निश्चिंतता और स्वाधीनता होती है। तुम्हारे बाह्य व्यक्तित्व का लोप होने पर भी तुम्हें कोई दुःख स्पर्श नहीं कर सकेगा।

आन्तरशान्ति, आन्तरप्रसन्नता... परमानन्द अनुभव करने के लिए बाह्य भौतिक-वैषयिक सुखों का विसर्जन करना ही होगा। अथवा, परमानन्द के अनुभव की तीव्र अभिलाषा जागने पर वैषयिक सुख स्वयं बिखर ही जायेंगे! उन सुखों को पकड़ कर रखने की चेष्टा नहीं होगी। तू स्वेच्छा से सुखों का त्याग कर, अनुभव करना कि तुझे कितना और कैसा आनन्द हुआ। अनिच्छा से सुख चले जाने पर दुःख होगा, स्वेच्छा से सुख का त्याग करने पर आनन्द होगा।

प्रिय मुमुक्षु, मोक्षयात्रा में तीव्र गति तभी आयेगी जब सुखों का विसर्जन होगा। जीवनयात्रा तभी आनन्दप्रद बनेगी जब तू सुखों को बिखेरता चलेगा। सुखों का संग्रह नहीं करना है, सुखों के परिग्रही नहीं बनना है, सुखों को निरंतर बिखेरते रहना है। श्रमण भगवान महावीर ने सभी सुख बिखेर दिये थे न? शरीर पर एक वस्त्र भी नहीं रखा था... भोजन के लिये एक पात्र भी नहीं रखा था। एक उत्कृष्ट आदर्श प्रस्थापित कर दिया भगवंत ने। उस आदर्श तक पहुँचने के लिये अपनी तत्परता है?

सुखों का त्याग करने से पूर्व, सुखों की आसक्ति का त्याग करना आवश्यक होता है। भिन्न-भिन्न सुखों की आसक्ति-ममता तोड़ना अनिवार्य है, यदि मोक्षयात्रा करनी है तो। करनी है मोक्षयात्रा? जाना है मोक्ष में? यदि भौतिक-वैषयिक सुख प्रिय लगते हैं और वे सुख पाने की ही तमन्ना बनी रहती है तो कैसे माना जाये कि मोक्ष प्यारा लगा है! दिन-रात वैषयिक सुखों की ही कामना करने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वाले बोल ही नहीं सकते कि 'हमें मोक्ष प्यारा है!' जिसको मोक्ष प्यारा लगा उसको वैषयिक सुख प्यारे कैसे लग सकते हैं?

वैषयिक सुखों का उपभोग करना एक बात है, वैषयिक सुखों का अनुराग होना दूसरी बात है। बिना अनुराग भी उपभोग हो सकता है। आन्तर निरीक्षण यह करना कि वैषयिक सुखों का उपभोग कैसे होता है। अनुराग से होता है या बिना अनुराग होता है। 'मुझे वैषयिक सुख नहीं चाहिए...' यह निर्णय हो जाने पर वैषयिक सुखों के प्रति अनुराग नहीं हो सकता है।

परंतु यह तो हुई सिद्धान्त की बात! अपनी क्या स्थिति है? पाँच इन्द्रियों के विषयसुख प्यारे लगते हैं! कोई अपनी प्रशंसा करता है तो खुशी होती है न? कोई श्रेष्ठ... उत्तम रूप सामने आये तो देखने में खुशी होती है न? प्रिय भोजन मिलने पर प्रसन्नता होती है न? मुलायम स्पर्श का सुख मिलने पर प्रसन्नता होती है न? हृदय में वैषयिक सुखों का अनुराग बना हुआ है! इस अनुराग को तोड़ना अनिवार्य है... चूँकि सारे मानसिक दुःखों का कारण है वह अनुराग। एक सुख का अनुराग भी जीव को दुःखी कर देता है। जो सुख प्रिय है, वह सुख नहीं मिलता है तो दुःख होता है, वैसे वह सुख चला जाता है तो भी दुःख होता है। जीवनयात्रा में ऐसे अनेक अनुभव तूझे भी हुए होंगे। इसलिए यदि दुःखों से मुक्त होना है तो सुखों का और सुखों की कामनाओं का विसर्जन करना ही होगा।

धीरे-धीरे सुखों के बिना जीवन जीने की आदत डालनी पड़ेगी। कम से कम सुखों का उपयोग-उपभोग करना होगा। बिना माँगे सुख सामने आये तो भी स्वीकार नहीं करना होगा। तू कहेगा 'गृहस्थ जीवन में ऐसा करना मुश्किल है।' नहीं, दृढ़ संकल्प करने पर मुश्किल नहीं है। चाहिए दृढ़ संकल्प बल!'

एक सिद्धान्त मान लेने पर मुश्किल कार्य भी सरल बन जाता है। वह सिद्धान्त है, पुण्य-पाप का सिद्धान्त! पुण्यकर्म के उदय से जीवात्मा को सुख-समृद्धि प्राप्त होती है, जब पुण्यकर्म समाप्त हो जाता है, सुख-समृद्धि चली जाती है... पता नहीं लगता कि पुण्यकर्म कब समाप्त हो जायेगा... पुण्यकर्म समाप्त होने पर सुख चला जाय, इससे तो यह अच्छा कि पुण्यकर्म होते हुए हम सुखों का त्याग कर दें। यह त्याग तभी संभव है कि हम सुखों के अनुरागी नहीं रहें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तुझे लगेगा कि आज मैंने उपदेश ही दे दिया! कोई प्रासंगिक घटना नहीं लिखी! सच है, प्रासंगिक घटनायें अनुकूल-प्रतिकूल घटती ही रहती है... उन घटनाओं को लेकर राग-द्वेषमूलक चिंतन नहीं करना चाहिए परन्तु ऐसा चिंतन करना चाहिए की राग-द्वेष की जड़ें ही कट जाय। आज मैंने जो सुखों के विसर्जन के बारे में लिखा है, यह ऐसा ही एक चिंतन है। हर प्रासंगिक घटना के साथ जोड़ा जा सकता है यह चिंतन।

पर्युषण महापर्व आये और गये! अब आ रहे हैं, बाहर गाँव के यात्री!

पर्युषण के पश्चात् प्रवचन भी शुरू हो गये हैं। 'प्रशमरति' विवेचन लिखने का कार्य भी शुरू हो गया है। प्रवचन भी 'प्रशमरति' ग्रन्थ पर ही चल रहे हैं। कभी-कभी प्रशमभाव में डूबने का-तैरने का मजा भी आ जाता है।

एक बात निश्चित है कि आत्मानन्द... परमानन्द अनुभव करने के लिए बाह्य घटनाओं से मन कों मुक्त रखना ही होगा। बाह्य घटनाओं को विशेष महत्त्व नहीं देना। सुख-दुःख के विचारों से शीघ्र मुक्ति पा लेनी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तेरा मन सदैव प्रशमभाव में निमग्न रहे और तू आत्मानन्द की अनुभूति करता रहे।

९-९-७९,

डीसा

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जब भी सानुकूल स्थिति-परिस्थिति मिले... जब भी मनचाहे संयोग मिले... जो कुछ करना है, कर लेना चाहिए!*
- *आत्मकल्याण के इरादे को कल पर रख देना बुद्धिमत्ता नहीं है...।*
- *संसार की अल्पकालीन छिछली समस्याओं में स्वयं को उलझा कर आत्मा को भुला देना सबसे बड़ी भूल होगी।*
- *जीवन साधु का हो या गृहस्थ का, जीने का दृष्टिकोण तो चाहिए ही। यदि तात्त्विक जीवनदृष्टि का अभाव है, तो साधुजीवन भी कलुषित हो उठेगा।*
- *संसार तो दावानल है... उसे बुझाना मुमकिन नहीं है... अपने आपको बचा लेना अपने हाथ की बात है!*

पत्र : ४०

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला, आनन्द हुआ। तू इस चातुर्मास में यहाँ नहीं आ सका और नहीं आ सकेगा, इस बात का तेरे हृदय में दुःख होना स्वाभाविक है। संयोग, परिस्थिति, मनुष्य की इच्छाओं की सफलता-निष्फलता का आधार है। इसलिए जब सानुकूल संयोग-परिस्थिति हों तब अपनी सम्यक् इच्छाओं को सफल बनाने का पुरुषार्थ कर लेना चाहिए।

सानुकूल परिस्थिति में धर्मपुरुषार्थ कर लेने का ज्ञानीपुरुष उपदेश देते हैं। जब तक अपना शरीर स्वस्थ एवं नीरोगी है, जब तक अपनी पाँचों इन्द्रियाँ कार्यक्षम हैं, जब तक अपना मन स्थिर और स्वस्थ है, तब तक धर्मपुरुषार्थ का अवसर है। आर्थिक, पारिवारिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ जब तक सानुकूल हैं, तब तक आत्मकल्याण का पुरुषार्थ कर लेना है। जीवन का भी तो कोई भरोसा नहीं है न।

मनुष्य का जीवन और उस जीवन के इर्द-गिर्द सब कुछ अस्थिर, चंचल और विनाशी है। इन सब अस्थिर... चंचल और विनाशी चीजों के बीच स्थिर और अविनाशी है एकमात्र आत्मा! उस आत्मा की सुरक्षा कर लेना आत्मा को पापों से बचा लेना... आत्मा में सुसंस्कारों के बीज बो देना... यही अपना लक्ष बन जाना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संसार के क्षणिक प्रश्नों में, अल्पकालीन समस्याओं में उलझना नहीं है। मन पर ये प्रश्न... ये समस्याएँ 'हावी' नहीं हो जानी चाहिए। जब तक जीवात्मा अच्छे-बुरे कर्मों से आक्रान्त है, तब तक जीवन में छोटे-बड़े प्रश्न पैदा हो सकते हैं... फिर वह गृहस्थ हो या गृहत्यागी हो! क्षुल्लक व्यवहार की बातों को महत्त्व नहीं देना चाहिए।

एक श्रीमंत सद्गृहस्थ की आंतरिक परिस्थिति जानने को मिली। आज तो उसके पास करोड़ों रुपये हैं, बंगले हैं, अच्छा परिवार है परंतु उसने बताया कि एक दिन ऐसा आया था उसके जीवन में कि एक ओर उसकी पत्नी की मृत्यु हो गई, दूसरी ओर उसकी संपत्ति नष्ट हो गई... मित्र-स्वजन वगैरह विमुख हो गये परन्तु इस परिवर्तन का उसके मन पर कोई बुरा असर नहीं हुआ! चूँकि ज्ञानीपुरुषों के परिचय से और श्रेष्ठ धर्मग्रन्थों के अध्ययन-परिशीलन से संसार की परिवर्तनशीलता का उसे ज्ञान था। उसने अपना गाँव छोड़ दिया...' लोग क्या कहेंगे, मेरी निन्दा होगी...' वगैरह विकल्प उसने नहीं किये।

वह चला गया... उसने अपनी धर्म-आराधना नहीं छोड़ी। मौन धारण करके वह अपनी आजीविका कमाने लगा...। मन में संसार के स्वरूप का चिन्तन करता है... परमात्म-स्वरूप का ध्यान करता है। फिर एक दिन भाग्योदय हुआ। एक श्रीमंत व्यापारी ने इसको काम दिया...। धीरे-धीरे उसने लाखों रुपये कमा लिये... पुनः वह अपने गाँव आया। एक सुशील कन्या से उसकी शादी हुई और नगर का प्रतिष्ठित नागरिक बन गया।

पुनः श्रीमंत होने पर भी उसने अपना धर्मपुरुषार्थ नहीं छोड़ा है। धर्मग्रन्थों का अध्ययन-मनन-चिन्तन करता रहता है। आज सारे संयोग अनुकूल हैं फिर भी वह जागृत है! आत्मा का विशुद्ध स्वरूप प्राप्त करने के लिये उसका प्रयत्न चालू है।

प्रिय मुमुक्षु! जीवन जीने की यह दिव्य दृष्टि है। अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति में अपने आप स्वस्थ रहना... कोई व्याकुलता नहीं... कोई फरियाद नहीं... कोई रूदन नहीं-विलाप नहीं। गृहस्थजीवन हो या साधुजीवन हो, यह जीवनदृष्टि होना सभी के लिये अनिवार्य है, यदि मोक्षमार्ग पर चलना है तो! यदि प्रसन्न और पवित्र जीवन जीना है तो!

जिनके पास यह दिव्य जीवनदृष्टि नहीं है, वैसे कई गृहस्थ... जो कि मंदिर में जाते हैं, धर्मगुरुओं का उपदेश सुनते हैं, घोर अशान्ति और तीव्र

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संताप अनुभव करते हुए जीवन व्यतीत कर रहे हैं! साधु बन जाने के बाद भी यदि उनके पास यह तात्त्विक जीवनदृष्टि नहीं है, वे साधु भी आर्तध्यान में अपने आन्तर व्यक्तित्व को कलुषित करते हैं, मानसिक अशान्ति भोगते हैं। तपस्वी हो या विद्वान हो... दिव्यदृष्टि के अभाव में क्लेश और संताप ही अनुभव करने पड़ेंगे।

मैं तुझे ज्यादा तो क्या लिखूँ? परंतु मेरी यह राय है कि संसार के व्यवहार की तुच्छ बातों में उलझना नहीं। दुनिया के किसी प्रश्न को, किसी समस्या को अपने हृदय पर 'हावी' मत होने देना। इतनी तेरी सावधानी रहेगी तो तेरी आत्मसाधना प्रगतिशील बनी रहेगी। तू आंतरप्रसन्नता का मधुर अनुभव करेगा। इसके अलावा और क्या चाहिए?

जिस प्रकार सर्वज्ञ भगवंतों ने संसार का स्वरूप बताया है, उसी प्रकार संसार को जान लेना चाहिए... फिर, संसार की किसी भी अच्छी या बुरी घटना को लेकर आनन्द-उद्वेग नहीं होगा। अंतरात्मा में दिव्य ज्ञान का दीपक जलता रहे, मोक्षमार्ग को प्रकाशित करता रहे, इसलिए जागृत बने रहना। अनेक आन्तरद्वन्द्व और बाह्यद्वन्द्वों के बीच जीवन जीना है और ज्ञान-दीपक को प्रज्वलित रखना है। क्या करेगा तू? 'ज्ञानसार' और 'प्रशमरति' का स्वाध्याय चलता होगा? चिंतनमनन करता होगा? कषायजन्य उद्वेग शान्त हो जाता है न? विषयों का आकर्षण कम होता जा रहा है न? वैषयिक सुखों की प्रबल इच्छायें प्रशान्त करने की हैं।

वातावरण दिन-प्रतिदिन ज्यादा विलासी बनता जा रहा है। पाँच इन्द्रियों को उत्तेजित करने के निमित्त बढ़ते ही जा रहे हैं। धन-संपत्ति और वैभव का व्यामोह, मनुष्य के मन पर 'हावी' हो गया है। विकथायें व्यापक बन गयी हैं। तत्त्वचर्चा और आत्मचिंतन भुलाया जा रहा है। धर्मक्रियाओं के प्रति मनुष्य नीरस बनता जा रहा है। ऐसी विषम परिस्थिति में ज्ञानदृष्टि को सलामत रखना अशक्य तो नहीं, मुश्किल जरूर है।

वैषयिक सुख-साधनों के प्रबल आकर्षण ने मनुष्य को पथभ्रष्ट कर दिया है। दिशाशून्य बना हुआ मनुष्य सुखों के इर्द-गिर्द भटक रहा है। गिरता है... रोता है... हँसता है... दौड़ता है... और एक दिन रोगाक्रान्त बनकर मौत की गोद में समा जाता है। अरबों मनुष्यों की यह अवदशा है। कैसे इनको बचाया जाये? कैसे इनको सही रास्ते लाया जाये? बहुत गंभीर प्रश्न है। कभी-कभी मन कहता है : छोड़ो सब चिन्ता और चलो हम अपने रास्ते आगे बढ़ जायें!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संसार दावानल है, उसको बुझाया नहीं जा सकता, हम उस दावानल से बचकर निकल सकते हैं!

पवित्र नवपदजी की ओली के दिन हैं, नौ दिन का जिनेन्द्रभक्ति का महोत्सव चल रहा है। दीपावली के दिन सामने हैं... श्रमण भगवान महावीर स्वामी का निर्वाण कल्याण आयेगा... और कार्तिक पूर्णिमा को चातुर्मास पूर्ण हो जायेगा। समय नियमित है... निरन्तर गति कर रहा है। 'अरिहंत' भी चौथा वर्ष पूर्ण कर रहा है... नवम्बर से पाँचवे वर्ष में प्रवेश करेगा। 'अरिहंत' के माध्यम से तुझे ये पत्र लिख रहा हूँ। अनेक मुमुक्षु आत्माओं के प्रश्नों को लेकर ये पत्र लिखता हूँ। मन का समाधान होना मोक्षमार्ग की आराधना में अति आवश्यक है। मन को आर्तध्यान से बचा लेना अनिवार्य है।

तेरी कुशलता चाहता हूँ।

१-१०-७६

डीसा

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *दुनियाभर की उलझने पैदा होती है, व्यवहारदशा के दृढ़ एवं हठीले आग्रहों से। यह सत्य समझ लेना चाहिए... स्वीकार लेना चाहिए।*
- *व्यवहार के असंख्य विधिनिषेधों में उलझ कर मनुष्य अपने 'आत्मतत्त्व' को विस्मृति के बीहड़ वन में भूल गया है।*
- *स्पष्टवादिता यदि कटुता से मुक्त रह सकती है... तब तो वह स्वीकार्य हो सकती है... यदि कटुता से ही स्पष्टवादिता उभरती है तो वह नुकसानकारक होती है।*
- *सत्य भी प्रिय एवं मधुर होना जरूरी है, तो ही वह स्वीकार्य बनता है।*
- *सत्य की अभिव्यक्ति जब आवेश व आवेग का शिकार बनती है, फिर उसका सौन्दर्य सूख जाता है।*

पत्र : ४१

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरे दोनों पत्र मिल गये थे, प्रत्युत्तर लिखने में विलंब हो गया है, फिर भी लिख पाया हूँ... इस बात की खुशी है! चातुर्मास के अंतिम दिनों में अत्यधिक व्यस्तता रहती है। डीसा से विहार कर दिया है और इस प्रदेश के एक प्राचीन तीर्थ भीलड़ीयाजी में आये हैं। कुछ दिन यहाँ स्थिरता करेंगे।

तेरे अनेक प्रश्न हैं और उन प्रश्नों का समाधान तू चाहता है, अवश्य तेरे प्रश्नों के समाधान करने का प्रयत्न करुँगा, तेरे मन को, अन्तःकरण की शान्ति, समता और प्रसन्नता मिले, यही मेरी आन्तरअभिलाषा है। यह कोई उपकारवृत्ति से नहीं लिख रहा हूँ, आंतरप्रीति से लिख रहा हूँ। तेरी प्रसन्नता मेरी प्रसन्नता बन जाती है... इसलिये लिख रहा हूँ।

सारी उलझनें व्यवहारदशा के दृढ़ आग्रहों से पैदा होती है, यह बात तुझे अच्छी तरह समझ लेनी होगी। लोक-व्यवहार... कुटुम्ब-व्यवहार, समाज-व्यवहार... और धर्मक्षेत्र में भी व्यवहार! व्यवहार के असंख्य नियम और बँधन! इन नियमों के और बँधनों के तीव्र तनाव अनुभव करता हुआ मनुष्य अपने 'आत्मतत्व' को भूल ही गया है! आत्मतत्व विस्मृति की गहरी खाई में डूब गया है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुछ व्यवहारों का पालन करना आवश्यक हो सकता है, परंतु व्यवहार-पालन का आग्रह कोई महत्त्व नहीं रखता है। तूने लिखा कि 'आपने मुझे मधुरभाषी बनने की प्रेरणा दी परंतु व्यवहार में मधुरभाषी बने रहना मुश्किल है... व्यवहार में तो स्पष्टभाषी बनना ही पड़ता है...।'

तू स्पष्टभाषी बना रहे, इससे मुझे कोई नाराजगी नहीं है, परंतु तेरी स्पष्टभाषिता ने तेरे व्यक्तित्व को कटु तो नहीं बना दिया है न? 'मैं स्पष्टभाषी हूँ, किसी की शर्म मुझे नहीं छूती है...' इस प्रकार का अहंकार तो तेरे ऊपर सवार नहीं हुआ है न? तू स्वस्थता से आन्तरनिरीक्षण करना।

स्पष्ट बात करना या अस्पष्ट बात करना, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है, महत्त्वपूर्ण बात तो है दूसरे को अपनी अच्छी बात समझा देना! अपनी बात दूसरे के मन में जँचा देना! यदि अस्पष्ट बात करने से यानी 'इनडायरेक्ट' बात करने से दूसरे को बात जँच जाती है तो स्पष्ट बात करने से क्या फायदा?

दूसरी बात, स्पष्ट बात करते समय तेरी आवाज में कटुता या उग्रता तो नहीं आती है न? यदि कटुता और उग्रता के बिना स्पष्ट बात... साफ-साफ बात कर सकता है तो खुशी के साथ स्पष्ट बात करना! परंतु तेरे लिये यह असंभव बात है। तेरी छोटी बहन कहती थी कि बड़े भैया तो मम्मी को भी साफ-साफ सुना दिया करते हैं... मम्मी चुप हो जाती है... और छिपकर रो लेती है। भैया की बात सही होती है, परंतु इस प्रकार वे बात करते हैं... कि किसी को उनकी बात पसन्द नहीं आती।'

तू यह मत समझना कि तेरी छोटी बहन शिकायत कर रही थी! तू जानता है कि उसका तुम्हारे प्रति कितना अपार स्नेह है! वह यह चाहती है कि घर में बड़े भैया के प्रति सब के मन में आदर हो- प्रेम हो! यदि तू स्पष्टवादिता का आग्रह छोड़ दे और तेरी भाषा में मृदुता और नम्रता को मिला दे, तो तू परिवार में आदर पायेगा, समाज में सम्माननीय बनेगा। तेरी अच्छी बातें सब लोग प्रेम से सुनेंगे। मैं जानता हूँ कि कुछ लोग तेरी प्रशंसा करते हैं। 'यह सब बात साफ-साफ करता है। किसी की लाग-लपेट नहीं रखता है... खूब स्पष्टभाषी है।' तू भी कभी अपनी प्रसंसा सुनकर खुश होता होगा! तू क्या, हमारे एक मुनिराज भी इस बात को लेकर खुश होते थे! आज भी खुश होते होंगे! सभी बातें साफ-साफ कह देने की उनकी आदत है! और गर्व भी है कि 'मैं स्पष्ट भाषी हूँ। किसी की परवाह नहीं करता!' परिणाम क्या? कुछ शिष्य उनको छोड़कर चले गये! संघ-समाज में उनका कोई आदरपात्र विशिष्ट

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थान नहीं रहा। उनका उपदेश सुनने वाले कम हो गये। कौन-सा लाभ पा लिया उन्होंने?

हाँ, कभी कोई विशेष प्रसंग में स्पष्टभाषी बनना पड़ता है, परंतु उसमें भी नम्रता और मधुरता अनिवार्य है। नहीं चाहिए रोष, नहीं चाहिए आवेश! रोष और आवेश में जागृति नहीं रहती। रोष और आवेश में नम्रता नहीं रहती। इससे सत्य का शृंगार नष्ट हो जाता है। सत्य का सौन्दर्य आहत हो जाता है।

एक बात नहीं भूलना कि दुनिया जैसे नग्न मनुष्य को पसन्द नहीं करती है, वैसे नग्न सत्य को भी पसन्द नहीं करती है। सत्य सुन्दर होना चाहिए। दुनिया सौन्दर्य से प्रेम करती है। सत्य बात का सौन्दर्य है, नम्रता और मधुरता। जिस सत्य पर नम्रता और मधुरता का शृंगार नहीं होता है, उस सत्य से दुनिया प्रेम नहीं करेगी।

तू जानता है कि श्रमण भगवान महावीर हमेशा 'मालकोश' राग में उपदेश दिया करते थे! क्यों उन्होंने 'मालकोश' राग में उपदेश देना पसन्द किया होगा? मालकोश राग के आरोह-अवरोह में कहीं पर भी कटुता... कर्कशता अथवा अभिमान अभिव्यक्त नहीं हो सकता है! इस राग में मधुरता ही मधुरता टपकती है। भगवान महावीर के उपदेश में कहीं पर भी रोष नहीं था, आवेश नहीं था! तो सभी लोग खूब प्रेम से उनका उपदेश घंटों तक सुनते रहते थे। सत्य को स्वीकार करते थे। कई बातें उन्होंने भी साफ-साफ सुना दी है, परंतु कोई कटुता नहीं है, कोई रोष नहीं है... कोई अहंकार की अभिव्यक्ति नहीं है।

आज तक तूने कटु स्पष्टभाषिता के लाभ सोचे हैं, अब तू नुकसान का विचार करना। मधुर एवं विनम्र स्पष्टभाषिता के लाभों का विचार करना। 'मैं साफ-साफ बात नहीं सुना दूँगा तो काम बिगड़ जायेगा... अथवा मेरी बात कोई मानेगा नहीं, ऐसे भय को तेरे मन से निकाल देना।

दूसरी बातें आगे के पत्र में लिखूँगा। परिवार में सभी को 'धर्मलाभ' सूचित करना। सदैव कुशल रहे, यही शुभकामना-

१५-११-७६

भीलड़िया तीर्थ (गुजरात)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *हार्दिक संबंधों की दुनिया में बुद्धिवादिता को तनिक भी जगह नहीं है।*
- *दिल की दुनिया में दलीलें दीवार बन जाती है।*
- *संबंधों की नम्रता को बनाये रखने के लिये तर्क-वितर्क को त्यागना ही होगा।*
- *समय, साधन एवं संपत्ति का जैसे दुरुपयोग नहीं करना है... वैसे ही अपनी बुद्धिमत्ता का भी दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।*
- *जरूरत से ज्यादा बुद्धिवादिता ने अनेक परिवारों को तोड़ा है, समाज को क्लेशमय बनाया है और जीवन को बदसूरत बना डाला है।*

पत्र : ४२

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ!

भीलड़िया-तीर्थ से विहार कर कच्छ के वागड़ प्रदेश में प्रवेश किया है। अब १०-१५ दिनों में भद्रेश्वर तीर्थ में पहुँचने की संभावना है। तेरा पत्र मिल गया था, परन्तु कुछ स्वास्थ्य की प्रतिकूलता से शीघ्र प्रत्युत्तर नहीं लिख पाया हूँ।

इस प्रकार तो भाई, पारिवारिक संघर्ष चलता ही रहेगा। कभी भी शान्ति स्थापित नहीं होगी और तू वैराग्य की भाषा में चिल्लाता रहेगा कि संसार में कहीं पर भी शान्ति नहीं है! जीवन जीने की दृष्टि के अभाव में ही ज्यादातर क्लेश और संताप बढ़ते रहते हैं।

मेरी समझ में नहीं आता है कि तू क्यों अपनी माता से बात-बात में झगड़ता है! तू अपने पिता से क्यों टकराता रहता है? मुझे लगता है कि तू हर जगह अपनी बुद्धि का हद से ज्यादा उपयोग करता है! मैं मानता हूँ कि तेरे पास बहुत बुद्धि है! कभी-कभी तेरी बुद्धि की मेरे मन में भी ईर्ष्या हो आती है! तू भी अपनी बुद्धि-शक्ति को जानता है! घर में हर बात को तू बौद्धिक-भूमिका से नापने का प्रयत्न करता है। हर बात में तू तर्क-वितर्क करता रहा है!

तू अपनी यह भूल महसूस करेगा क्या? हार्दिक संबंधों में तर्क-वितर्क कभी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं करने चाहिए, इस सत्य को स्वीकार करेगा क्या? तू मानता है न कि माता-पिता का संबंध, भाई-बहन का संबंध, पति-पत्नी का संबंध, पिता-पुत्र का संबंध... हार्दिक... हृदय का संबंध होता है। निकट के मित्रों का संबंध भी हृदय का संबंध होता है। ऐसे व्यक्तियों के साथ बुद्धिवाद नहीं चाहिए। हमको हृदय से चाहनेवालों के साथ तर्कवाद नहीं चाहिए।

उस दिन मेरे सामने ही तूने अपनी माता के साथ कितना वाद-विवाद कर दिया था... याद है न? माता को तर्क-वितर्क से पराजित करके तू कितना प्रसन्न हो गया था? उस समय तेरी माता ने गंभीरता से... प्रसन्नता से और उदारता से अपना पराजय स्वीकार कर लिया था...! तेरे विजय से तेरी माता का पराजय ज्यादा महान् था! मैं तो उस समय मौन ही रहा था, परंतु उस समय तेरा बुद्धिवाद मुझे जरा सा भी पसंद नहीं आया था।

मैं जानता हूँ और मानता हूँ कि तेरे घर में तेरे जैसा बुद्धिमान कोई भी व्यक्ति नहीं है... परन्तु साथ ही, तेरे जैसा हृदयहीन मनुष्य भी तेरे घर में दूसरा नहीं है। बुरा मत मानना, तू शान्त दिमाग से सोचना कि तू कभी दूसरे स्नेही-स्वजनों की हार्दिक भावना को समझा है? उन स्नेही-स्वजनों के हृदय पर बौद्धिक प्रहार करते समय हिचकिचाया है कभी?

तू घर को क्या मानता है? घर कोई होटल है क्या? घर कोई मुसाफिरखाना है? घर के स्नेही-स्वजन क्या तेरे नौकर हैं? कई वर्षों से तेरी अनेक हरकतें घरवाले सहन करते आये हैं... और फिर भी तू उनके प्रति फरियादें ही करता रहा है! तेरा आक्रोश अभी तक शान्त नहीं हुआ है।

जिस प्रकार धन-संपत्ति का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए, जिस प्रकार समय और साधनों का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए, उसी प्रकार बुद्धि का भी दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। जहाँ बुद्धि का उपयोग करने की आवश्यकता न हो, वहाँ उपयोग करना, यह दुरुपयोग है। जहाँ बुद्धि का अल्प उपयोग करने से काम चल जाता हो वहाँ अत्यधिक उपयोग करना, दुरुपयोग है। ऐसा दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। बुद्धि के दुरुपयोग से अनेक परिवार नष्ट हुए हैं, बुद्धि के दुरुपयोग से समाज में अनेक उपद्रव पैदा हुए हैं, बुद्धि के दुरुपयोग से धर्मक्षेत्र में अनेक विवाद पैदा हुए हैं, और अनेक पंथ निकले हैं।

जाने दे इन बातों को, प्रस्तुत में है तेरी बात! तू दूसरों के हृदय को समझने का प्रयत्न कर। दूसरों की तेरे प्रति जो शुभकामनायें हैं, उन शुभकामनाओं का मूल्यांकन कर। तेरे जो स्नेही-स्वजन हैं, जिनको मैं भी जानता हूँ, उनकी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुभेच्छाओं के प्रति शंकाशील मत बन। जीवन में रसानुभूति तभी होगी जब तू दूसरों के जीवन में रसवृत्ति पैदा करेगा। तू यह सत्य मत भूलना कि बुद्धि से - तर्क से भावना-भावुकता महान् है। जिनके पास ज्यादा तर्क-वितर्क करने की क्षमता नही है ऐसे भावुक जीव जिस प्रसन्नता से जीवन जी रहे हैं, उतनी प्रसन्नता से बुद्धिवादी लोग नहीं जी रहे हैं।

बुद्धि का सदुपयोग करना है? तो एक मार्ग बताता हूँ। तू भारतीय दर्शनों का अध्ययन कर! न्यायदर्शन का अध्ययन करके सर्वप्रथम जैनदर्शन के नय-प्रमाणगर्भित ग्रन्थों का अध्ययन कर।

जब तू जैनतर्कभाषा, स्याद्वादमंजरी, रत्नाकर-अवतारिका, स्याद्वादरत्नाकर, अनेकान्तजयपताका और संमतितर्क जैसे ग्रन्थों का अध्ययन करेगा, तेरी बुद्धि परिमार्जित और कुशाग्र बन जायेगी। इतना अध्ययन करने के बाद तू सर्वदर्शन संग्रह, वेदान्तपरिभाषा, न्यायबिन्दु, सांख्य-तत्त्वकौमुदी, शांकरभाष्य जैसे जैनेतर ग्रन्थों का अध्ययन-परिशीलन करना।

तर्क और प्रतितर्क कैसे किये जाते हैं, यह भी सीखना आवश्यक है। ऐसे दार्शनिक ग्रन्थों के अध्ययन से तेरे ज्ञान में अभिवृत्ति होगी और बुद्धि में स्थिरता आयेगी। दुनिया की फालतू बातों में मन जायेगा नहीं। तत्त्वचिंतन में बुद्धि का सदुपयोग होगा।

महानुभाव! कितनी छोटी सी यह जिंदगी है! कितनी अल्प अपनी बुद्धि और शक्ति है! जीवन में कितनी अनिश्चितता है? फिर क्यों निष्प्रयोजन विवादों में उलझना? क्यों असंतोष और परिताप की आग में सुलगना? तू बुद्धिमान है, अपनी बुद्धि का तत्त्वचिंतन में विनियोग कर देना आनन्दप्राप्ति का श्रेष्ठ उपाय है। तत्त्वचिंतन में एक बार रसानुभूति हो गई, बस! फिर काम बन गया समझ!

तेरी-मेरी आत्मीयता प्रगाढ़ होने से इस पत्र में कुछ तुझे अप्रिय लगे वैसी बातें लिख दी गई है...। आत्मीयजन को ही ऐसा लिखा जा सकता है। मेरी यह अभिलाषा है कि तू घर में, स्नेही-स्वजनों में, और मित्रों में बुद्धिवाद को छोड़ दे। हर प्रश्न का जवाब देने की आवश्यकता नहीं है। कभी-कभी मौन भी श्रेयस्कर बनता है। कभी मुस्कराकर ही जवाब दे दिया जा सकता है। कभी चुप्पी साधे, दूसरों की बातें सुन लिया कर! दूसरों को कभी-कभी विजयी बनने दे!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कच्छ के वागड़-प्रदेश में से गुजर रहे हैं। हालाँकि कच्छ गुजरात का ही एक भाग है, परन्तु अनेक बातों में भिन्नता दिखाई देती है। प्रदेश हरा-भरा है। जिसको कच्छ का छोटा-सा रेगिस्तान कहते हैं, वह भी पानी से भरा हुआ सागर सा दिखाई दिया! इस प्रदेश के छोटे-छोटे गाँवों में जैन संघ का स्नेह-आदर और भक्तिभाव दिखायी दिया! हालांकि हम तो पहली बार ही इस प्रदेश में आये हैं, यानी यहाँ के लोगों में अपरिचित हैं, फिर भी लोगों का स्नेह हृदय को आनन्दित कर देता है। तेरा प्रत्युत्तर अब भद्रेश्वर तीर्थ में मिलेगा?

कटारिया

२०-१२-७९

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

❁ *शाँति पाने की तीव्र चाह हो,*

प्रसन्नता पाने की अदम्य उत्कंठा हो,

पवित्रता पाने की असीम अभीप्सा हो,

तभी मनुष्य वातावरण का फायदा उठा सकता है।

❁ *जीवन को देखने-परखने की दृष्टि के अभाव में आज व्यक्ति बाहर से तो भटक गया है... भीतर से भी वह भटक गया है!*

❁ *औरों की गलतियाँ ही देखने की आदत आदमी को जीवन की गहराइयों में उतरने नहीं देती है!*

❁ *मन के विचारों को मोड़ देना, भीतर में उठते भावों को योग्य दिशा देना अति आवश्यक है।*

❁ *समतालीन मन ही तमाम सुख का स्रोत है।*

पत्र : ४३

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र कुछ दिन पूर्व मिला था।

हम कच्छ के भव्य तीर्थ भद्रेश्वर में कुछ समय रूकेंगे। यहाँ ऐसा वातावरण है कि मनुष्य सरलता से शान्ति पा सकता है। प्रसन्नता से अपने प्राणों को पुलकित बना सकता है। अपनी अन्तरात्मा को पवित्रता से भर सकता है...!

यह कार्य तभी हो सकता है, जब मनुष्य के पास जीवन जीने की दृष्टि हो। शान्ति पाने की तीव्र चाह हो। प्रसन्नता की अनुभूति करने की प्रबल भावना हो... पवित्रता का तीव्र आकर्षण हो। यदि यह नहीं होता है, तो सुयोग्य वातावरण मिलने पर भी मनुष्य वैसा अशान्त, उद्विग्न और मलिन बना रहता है।

जीवन-दृष्टि के अभाव में मनुष्य भटकता रहता है, भीतर का भटकाव और बाहर का भी भटकाव! तेरे इस पत्र से मैं यह समझता हूँ कि तूने अभी भी आन्तरस्थिरता नहीं पायी है। तेरा मन उद्विग्न है... और तू आर्तध्यान में फँस गया है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तू कब बाह्य दर्शन की बुरी आदत से मुक्त होगा? बाहर की दुनिया का ही दर्शन-चिंतन कर तू परेशान हो रहा है। तू हमेशा दूसरों को ही देख रहा है... दूसरों के गुण-दोष देख रहा है... और अशान्त हो रहा है। जो लोग तेरे गुण-दोष नहीं देखते हैं... उनके भी गुण-दोष तू देखता है और निन्दा करता रहता है। जीवन की निष्फलता का यह एक प्रमुख कारण है।

जिनके साथ तेरा कोई विशेष प्रयोजन नहीं है, जो लोग तेरे प्रति दुर्भाव नहीं रखते हैं... उनके गुण-दोष देखकर तू व्यर्थ ही उद्विग्न बनता है। यह फालतू परचिन्तन क्यों करना चाहिए? इस आदत की वजह से तू ऐसे सुरम्य, प्रशान्त और पवित्र स्थानों में जाने पर भी शान्ति नहीं पाता है। तू सच-सच बता, क्या पावापुरी जैसे पवित्र स्थान में भी तूने शान्ति पायी? वहाँ से तू प्रसन्नता के सदैव सुरभित पुष्प ले आया? वहाँ से आने के बाद तेरा मन, तेरे नयन आनन्दित हो पाये?

अब तू कहाँ जायेगा सुख-शान्ति पाने के लिये? बाह्य दुनिया में तू जहाँ भी जायेगा, तेरी परदर्शन की आदत तुझे परेशान करती रहेगी। तू कहीं पर भी स्वस्थता-स्थिरता नहीं पा सकेगा। तू अपने गत जीवन पर एक दृष्टिपात कर, जहाँ-जहाँ तू निष्फल गया, जहाँ-जहाँ तू परेशान हुआ... तू वास्तविक कारणों की खोज कर। तू अपनी गलती खोज निकालना।

जब तक तू दूसरों की गलतियाँ देखता रहेगा, तेरी परेशानी मिटने वाली नहीं है। चूँकि अपना मन दूसरों की गलतियाँ देखने का आदी है। दूसरों की गलतियाँ मिटाने की अपनी क्षमता नहीं है। एक व्यक्ति की गलती मिटाने पर दूसरे व्यक्ति की गलती दिखाई देगी! दूसरे की गलती मिटाने पर तीसरे व्यक्ति की गलती दिखायी देगी! कभी अन्त नहीं आयेगा।

तू दूसरों के सामने देखना बंद कर सकेगा? तू अपने आपको देख, तू अपने कार्यों में लग जा, तेरे कार्यक्षेत्र में विकास करता जा। सफलता पाने का यही वास्तविक मार्ग है। मैंने एक साधु को जीवनपर्यंत परदर्शन में उलझा हुआ देखा। जीवन में वह साधु कोई विशिष्ट सफलता पा नहीं सका। जीवन में आन्तरशान्ति और आन्तरतृप्ति भी नहीं पा सका। दूसरे एक साधु पुरुष को मैं वर्षों से देख रहा हूँ... वे निरन्तर अपने धार्मिक क्षेत्र में विकास करते आगे बढ़ रहे हैं। जब देखो तब उनके मुख पर प्रसन्नता ही प्रसन्नता! जब उनसे बातें करो, अमृत ही पिया करो! किसी की निंदा नहीं, कोई परचिंता नहीं... किसी की फरियाद नहीं! मैंने उनको तृप्त देखा! हालांकि उनके पास रहने वाले सभी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साधु उनकी इच्छानुसार चलने वाले नहीं हैं, सभी प्रकार की अनुकूलतायें भी नहीं हैं। किसी व्यक्ति को उनके प्रति दुर्भाव भी हो सकता है... परंतु हृदय में किसी के प्रति दुर्भाव नहीं! हर परिस्थिति में समता और संतोष! जीवन की यही तो श्रेष्ठ उपलब्धि है!

तप-ज्ञान और भक्ति के साथ-साथ सोचने और समझने की दृष्टि होना जीवन में अति आवश्यक है। मन के विचारों को मोड़ देना अनिवार्य है। बाहर के तो कोई दुःख अभी तेरे आसपास नहीं है? जो कोई दुःख है, अशान्ति है, मानसिक है न? मन के विचार ही तो परेशान कर रहे हैं? उन विचारों को बदलना अति आवश्यक है।

मान ले कि तेरे जीवन में कोई दुःख है, तू उस दुःख से बचने के लिये स्थानान्तर करेगा... दूसरे स्थान में चला जायेगा, क्या वहाँ पर कोई दुःख नहीं होगा? दूसरे स्थान में क्या तेरी इच्छाओं के अनुसार सब कुछ मिलेगा? वहाँ तेरे मन को किसी प्रकार की अशांति नहीं होगी? स्थानान्तर करने से कुछ क्षणों के लिये तू सुख-शान्ति पा सकता है, स्थायी शान्ति नहीं पा सकेगा। स्थायी शान्ति तो स्वस्थ और समकालीन मन में से ही प्राप्त होगी।

तू अपने उद्विग्न मन को उपशान्त करने का प्रयत्न कर। ऐसे धर्मग्रंथों का, अध्यात्म के ग्रंथों का अध्ययन-परिशीलन करके मन को उपशान्त कर। परमात्मा की स्तवना-प्रार्थना और ध्यान करके मन को उपशांत कर। ज्यों-ज्यों मन उपशान्त होता जायेगा, तेरी प्रफुल्लता बढ़ती जायेगी। तेरा आन्तरआनन्द बढ़ता जायेगा। मन की तीव्र इच्छाओं को, प्रबल कामनाओं को निर्बल बना देनी होगी।

महानुभाव, छोटी सी इस जिंदगी में क्यों आन्तरआत्मानन्द का अनुभव नहीं कर लेता है? दुनिया को उनकी राहों पर चलने दे, तू अपने मोक्षमार्ग पर चलता रहे! अन्तर्मुख बनकर चलता रहे निर्भय और निश्चिंत होकर चलता रहे! निर्भयता, निश्चितता और अन्तर्मुखता की प्राप्ति के लिये ऐसे तीर्थों में जाकर पुरुषार्थ करना चाहिए। सम्यग्ज्ञान के साथ परमात्मभक्ति करने से तेरा पुरुषार्थ सफलता प्राप्त करेगा।

तू स्वस्थ-चित्त बन जा! तुझे मैं कुछ आन्तर अनुभूति की बातें लिखना चाहता हूँ। कुछ ऐसी बातें हैं कि जो तेरे जीवन में उपयोगी बन सकती हैं। परन्तु तेरा मन स्वस्थ और निराकुल होना अनिवार्य है... अन्यथा मेरी लिखी हुई बातें तेरे पल्ले नहीं पड़ेगी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कच्छ प्रदेश में पहली बार ही आये हैं। कच्छ का रोमांचक इतिहास है। कच्छ की संस्कृति, कच्छ की प्रजा, कच्छ के मंदिर... वगैरह के विषय में बहुत कुछ पढ़ा है... अब प्रत्यक्ष देखने का अवसर आया है।

प्रसन्नतापूर्ण जीवन बना रहे तेरा, इसी मंगल कामना के साथ -

भद्रेश्वर (कच्छ)

३-१-८०

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *आध्यात्मिक यात्रा में अन्य योग्यताओं के साथ-साथ एक जरूरी गुण है, सरलता!*
- *अहं केन्द्रित व्यक्तित्व सरल नहीं हो सकता! सरलता के अभाव में साहजिक जीवन जीया नहीं जा सकता!*
- *जहाँ अपना कोई संबंध न हो... वहाँ पर अपनी सच्ची राय भी उपेक्षा का शिकार बनती है।*
- *चित्त की चंचलता और मन की अस्थिरता के रहते धर्मतत्त्व की प्राप्ति या आत्मतत्त्व की अनुभूति असंभव है।*
- *घर में रहना है तो मेहमान बनकर रहना सीखो! अपना कोई आग्रह नहीं... अपनी पसंदगीना पसंदगी की कोई जिद्द नहीं! तब जीने का मजा है!*

पत्र : ४४

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला, मेरा स्वास्थ्य अच्छा है, कच्छदेश में हमारा विहार सुखमय हो रहा है। यहाँ के लोकमानस का अध्ययन भी अच्छा हो रहा है। आध्यात्मिक विकास में अनिवार्य रूप से आवश्यक 'सरलता' गुण मैंने यहाँ के लोगों में देखा।

तेरा पत्र ध्यान से पढ़ा। मुझे लगता है कि तेरे पास फालतू समय बहुत ज्यादा है! उस समय का उपयोग तू जिस प्रकार कर रहा है, यही तेरी मानसिक अशांति का मूल स्रोत है। सारे दिन में कॉलेज के तीन घंटे के अलावा तू क्या करता है? परिवार के सभ्यों का अवलोकन और आलोचन-प्रत्यालोचन! चूँकि तू अपने घर में अकेला ही बुद्धिमान है! चूँकि तू एक-दो धर्मक्रिया करता है!

तू समझ सकेगा क्या... कि तू गलत रास्ते पर चल रहा है? पहली बात तो यह है कि अभी तू जिस घर में रहता है, उस घर में तेरी जिम्मेदारी कितनी है? किस-किस की जिम्मेदारी तेरे सर पर है? किसी की भी जिम्मेदारी तेरे सर पर नहीं है न? तेरी जिम्मेदारी तेरे माता-पिता पर है! तेरे बड़े भाइयों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पर है। वे तुझे पढ़ा रहे हैं और तेरी सभी आवश्यकताओं को पूर्ण कर रहे हैं। वे तुझे सब कुछ देते हैं, तू उनको क्या देता है?

तू यह चाहता है कि तेरे कहे अनुसार तेरे भाई-भाभी जीवन जीयें! तेरी इच्छा के अनुसार सब कुछ घर में होता रहे! तेरी पसंदगी-नापसंदगी का सभी घर वाले खयाल करें! तेरा भाषण सभी सुनते रहें! घर वाले सभी लोग तेरी प्रशंसा करें! तेरे दो-चार पत्रों से मैं यही निष्कर्ष निकाल पाया हूँ कि तू विशेष रूप से अहं केन्द्रित होता जा रहा है।

घोर निष्फलता की राह पर तू चल रहा है, क्या तू समझेगा? जो जिम्मेदारियाँ तेरी नहीं हैं, उन जिम्मेदारियों के विषय में तू सोचता रहता है और जो लोग तेरी बातें सुनना नहीं चाहते उनको तू तेरी बातें सुनाता रहता है। यह सफल जीवन जीने का तरीका नहीं है। तू दिन-प्रतिदिन अपने ही घर में अप्रिय बनता जा रहा है। हालांकि तू घर में सबसे छोटा है इसलिये और तेरी माताजी को दुःख न हो इसलिये सभी लोग तेरी हरकतें सहन करते जा रहे हैं। परंतु तू सोचना, पहले तेरे दोनों बड़े भाई तेरे सामने कितने प्रेम से देखते थे? अब? पहले तेरी दोनों भाभी तेरे साथ कितना वात्सल्यपूर्ण व्यवहार करती थी? अब? एक जगह तेरे बड़े भाई मुझे अचानक मिल गये थे... मैंने तेरे विषय में कुछ पूछा... तो उनके मुँह से निकल गया कि 'वह अपने आप को बड़ा बुद्धिमान समझता है... बड़ा धर्मात्मा मानता है... हम लोगों को पापी मानता है... ठीक है, उसकी पढ़ाई पूर्ण हो जाय... बाद में संसार की वास्तविकता का परिचय होगा!' वे ज्यादा नहीं बोले परंतु मैंने देखा कि वे तुम्हारे प्रति अत्यन्त नाराज हैं।

महानुभाव, तू एक सत्य का स्वीकार कर ले कि मनुष्य को दूसरों के जीवन में अनधिकृत हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। दूसरों के गुण-दोषों का विचार नहीं करना चाहिए। स्वयं के बाह्य-आँतरिक विकास के विषय में चिंतन-मनन करना चाहिए। तू जितना अपने माता-पिता के विषय में और भाई-भाभी के विषय में सोचता है, उतना अपने स्वयं के आत्मविकास के विषय में सोचता है क्या? क्या तू पूर्णता के शिखर पर पहुँच गया है? तू क्या पूर्ण ज्ञानी और वीतराग बन गया है?

तू लिखता है कि 'जिन के साथ दिन-रात रहते हैं उनके आचार-विचार देखता हूँ, सुनता हूँ तो उनके विचार आ ही जाते हैं।' मेरा कहना यह है कि तू अब बालक नहीं है, युवक है, तू क्यों घर में बैठा रहता है? भोजन के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अलावा घर में तुझे क्या काम है! तू मंदिर में जा सकता है, उपाश्रय में ज्ञानीपुरुषों का सत्संग कर सकता है, ऑफिस में तेरे भाइयों को सहायक बन सकता है। दुकान पर तेरे पिताजी को उपयोगी बन सकता है... अथवा दुकान में बैठकर अच्छी किताबें पढ़ सकता है। क्यों घर की बातें सुनता रहता है? भाई-भाभी की बातें उनकी पर्सनल बातें हैं, तू क्यों बीच में कूद पड़ता है? बड़े भाई और पिताजी की बात उनकी अपनी बातें होती हैं, तू क्यों बीच में भाषण देने लगता है? ऐसा करने से तेरा अपमान ही होगा! उन लोगों की निगाहों में तू Overwise बन गया है।

मोक्षमार्ग की आराधना के मार्ग से तू कितना दूर चल रहा है, यह बात मैं तुझे कैसे समझाऊँ? मात्र मंदिर में जाकर पूजा-पाठ कर लिया और धर्मस्थान में जाकर साधुपुरुष का प्रवचन सुन लिया, अथवा कभीकभार सामायिक-प्रतिक्रमण कर लिया, इस से मोक्षमार्ग की आराधना पूरी नहीं हो जाती है। यह सब करते समय तेरा मन कहाँ भटकता है? तेरी चित्तवृत्तियाँ कितनी चंचल बनी रहती हैं? चित्त की चंचलता मिटाये बिना, मन का आर्तध्यान मिटाये बिना क्या मनुष्य धर्म को पा सकता है?

यदि तेरी आन्तरअभिलाषा आत्मविशुद्धि के मार्ग पर चलने की है, यदि तेरी मनःकामना इस अल्पकालीन जीवन में कोई शाश्वत् तत्त्व को पा लेने की है, यदि तेरी अन्तःचेतना योग और अध्यात्म की गहराई में जाने की है तो तुझे तत्काल पारिवारिक झंझटों से मुक्त हो जाना चाहिए। परिवार के प्रति तेरे कर्तव्यों का पालन करते हुए मात्र 'मेहमान' बनकर घर में रहना चाहिए। घरवालों की बातें सुनना नहीं, घरवालों के गुण-दोष देखना नहीं! एक दिन जब परिवार का त्याग कर निकल जाना है, सारे स्नेह के बंधन तोड़ने हैं, तो फिर घरेलू बातों से इतना लगाव क्यों?

मान ले कि किसी प्रतिबंधक कर्म के उदय से गृहवास का त्याग न हो सका, तो भी आध्यात्मिक विकास के लिये निरर्थक घरेलू बातों का त्याग करना अनिवार्य होगा। आत्मशांति और चित्तप्रसन्नता को अखंड बनाये रखने के लिये तुझे अन्तर्मुख बनना होगा। संसार तो अनन्त बुराइयों से भरा हुआ है... तू कितनी बुराइयाँ देखेगा? और दूसरों की बुराइयाँ देखता रहेगा तो तेरी अपनी बुराइयों को कब देखेगा? कब दूर करेगा? यह आदत बहुत ही गन्दी है! इसलिये कहता हूँ कि तू बहिर्मुख निरीक्षण छोड़ दे और अन्तर्मुख दर्शन करना शुरू कर दे। अन्तर्मुख चिन्तन और अन्तर्मुख दर्शन साधुजीवन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में भी अत्यन्त उपयोगी है। मुनिजीवन वास्तव में अन्तर्मुख जीवन ही है। अन्तर्मुख जीवन जीनेवाला मुनि ही वास्तविक आन्तर आनन्द की अनुभूति कर सकता है। मुनि भी यदि बहिर्मुख चिन्तन-दर्शन में डूब जाता है तो उसका आध्यात्मिक पतन होता है।

मैं समझता हूँ कि तू शान्त और स्वस्थ मन से इन बातों पर विचार करेगा। सोचने की और देखने की दृष्टि को बदलने का प्रयत्न करेगा। तू अनुभव करेगा कि अपनी आन्तरिक प्रसन्नता बढ़ गई है! तेरे आसपास का वातावरण बदल गया है!

तेरी आन्तर-बाह्य कुशलता चाहता हूँ।

४-२-८०

विथोन (कच्छ)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *संसार का कोई भी संबंध, फिर वह कितना भी गहरा हो, निकट का हो, सदा-सर्वदा का नहीं हो सकता! उसमें दरार पड़ने की! उसमें दुराव आने का! उसमें उतार-चढ़ाव आने के!*
- *संबंधों की सार्थकता है 'स्व' को भुला देने में! 'अहं' को जला देने में! 'मम' को मिटा देने में!*
- *अपने कर्तव्यों का पालन पूरी निष्ठा से करना है... औरों की तरफ से कुछ भी अपेक्षा रखे बगैर!*
- *औरों को अपराधी सिद्ध करके स्वयं को निरपराधी करार देना, बहुत बुरी बात है।*
- *दुनिया की निगाहों में शायद निरपराधी सिद्ध हो भी गये तो क्या? परमात्मा की निगाहों का खयाल किया है?*

पत्र : ४५

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला! कच्छ के 'पंचतीर्थ' के नाम से प्रसिद्ध भव्य जिनमंदिरों की स्पर्शना हुई। तीर्थाधिपति परमात्मा के दर्शन-वंदन-स्तवन से आत्मा प्रफुल्लित हुई। तेरा, नलिया, जखौ, कोठारा और सुथरी-पंचतीर्थ के ये पाँच गाँव हैं। मंदिरों की भव्यता, जिनप्रतिमाओं की मनोज्ञता और तीर्थों की व्यवस्था... सब कुछ आनन्द से भर दे वैसा है।

मांडवी पहुँच गये हैं, 'चैत्री-ओली' यहीं पर होगी, इसलिए चैत्री पूनम तक यहाँ स्थिरता होगी। मांडवी कच्छ का छोटा परन्तु अच्छा नगर है। ऐतिहासिक शहर है! प्रजा में भावुकता और स्नेहार्द्रता दिखाई देती है।

तेरा पत्र तीन बार पढ़ा। पारस्परिक सम्बन्धों को लेकर तू खूब उद्विग्न है। उद्विग्न होना स्वाभाविक है। तूने तुम्हारे दोनों के सम्बन्ध को अभेद्य और अविच्छेद्य मान लिया था न...। भैया मेरे, संसार का कोई भी सम्बन्ध अभेद्य और अच्छेद्य हो सकता है? कोई भी ज्ञानी पुरुष ने संसार के किसी भी सम्बन्ध को अभेद्य... अच्छेद्य बताया है क्या? तो फिर तुम दोनों ने क्यों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवास्तविक को वास्तविक मान लिया? और यदि वास्तविक मान भी लिया है तो वास्तविक कर दिखाओ। दे दो अपने 'अहं' का बलिदान! दे दो अपने स्वार्थ का तर्पण! है तैयारी? जब इतने वर्षों से स्नेह-सम्बन्ध बनाये रखा है तो जीवनपर्यंत निभा लो। यदि सच्चा प्रेम होता है तो कभी भी विच्छेद होता नहीं। सच्चा प्रेम घटता तो नहीं, प्रवर्धमान होता रहता है।

तुम दोनों साधक हो! सांसारिक कोई स्वार्थ तुम दोनों को नहीं है। तुम अपना आन्तरनिरीक्षण करो। करोगे? यदि पारस्परिक रोष कम नहीं हुआ होगा तो आन्तरनिरीक्षण संभव नहीं है। रोष की उपस्थिति में आत्मनिरीक्षण संभव ही नहीं! रोष आत्मनिरीक्षण नहीं करने देता, वह तो परदोषदर्शन ही करवाता है। आत्मनिरीक्षण में तुम दोनों को अपने दोष दिखाई देंगे। तू कहेगा 'मेरी गलती है', वह कहेगा 'नहीं, मेरा दोष है।' और समाधान हो जायेगा।

लड़ाई करवाता है आग्रह! दुराग्रह! साधक का मन दुराग्रहों से मुक्त होना चाहिये। आग्रहों से जकड़ा हुआ मन क्लेश और अशांति से भर जाता है। मन को निराग्रही बना दे। आत्मस्नेह और आत्ममैत्री निराग्रही मन में स्थायी बनती है।

भूल... गलती... दोष... होना छद्मस्थ जीव के जीवन में स्वाभाविक है। तू क्यों भूल जाता है कि हम सब छद्मस्थ हैं। संसारी हैं। कर्मों के बंधनों से बद्ध हैं। फिर भी, दूसरे जीवात्माओं से हम कुछ तो ऊपर उठे हुए हैं न? कुछ साधनामार्ग पाया है, कुछ तत्त्वज्ञान पाया है, कुछ सत्समागम पाया है। फिर, दूसरे अपने जैसे ही छद्मस्थ जीवों से ऐसी अपेक्षा क्यों रखनी चाहिए कि 'उसको ऐसी गलती नहीं करनी चाहिए!' गलतियाँ होती रहेगी और क्षमादान देते रहना है! दूसरों की गलतियों की स्मृति भी शेष नहीं रखनी है।

प्रिय मुमुक्षु! अब चर्मदृष्टि से देखना नहीं है, सोचना नहीं है और व्यवहार करना नहीं है। अब तो ज्ञानदृष्टि के आलोक में देखना और सोचना है। व्यवहार भी ज्ञानदृष्टि-मूलक बनाना है। हृदय में विशुद्ध प्रेम, मुख पर प्रसन्नता और व्यवहार में उदारता से जीवन को रसपूर्ण बनाना है। किसी से कुछ पाना नहीं है, सभी को कुछ न कुछ सुन्दर और शाश्वत् देना है। दूसरों से कोई अपेक्षा नहीं और दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों का निष्ठा से पालन करना है। मैं तुम्हारा ऐसा जीवन देखना चाहता हूँ।

'किसकी गलती है-' इसका न्याय नहीं करना है। मेरे पास ऐसा न्याय करवाने की इच्छा मत करना। ऐसा न्याय करने में प्रायः अन्याय ही हो जाता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। दूसरे को अपराधी सिद्ध करना और अपने आपको निरपराधी सिद्ध करने की आदत बहुत बुरी है। मूर्ख, अज्ञानी और महत्त्वाकांक्षी मनुष्यों की ऐसी आदत होती है, मुमुक्षुओं की, परमपंथ के यात्रियों की ऐसी आदत नहीं होनी चाहिए। जब तक जीवात्मा है... संसारी है, तब तक हम अपराधी ही हैं। ठीक है, दुनिया की निगाहों में कभी हम निरपराधी बन सकते हैं, परन्तु आन्तर-निरीक्षण करने पर दिखाई देगा कि हम अपराधी हैं। इसलिए कभी आपस में या दूसरों के सामने कौन अपराधी है, किसकी गलती है-इस विषय की चर्चा करना ही नहीं। दूसरे का अपराध सिद्ध करने में अपनी महानता सिद्ध नहीं होती, अपना अहंकार अवश्य पुष्ट होता है।

तुम दोनों में सोचने की क्षमता है। तुम दोनों अच्छे अध्ययनशील हो! तुम दोनों पर दूसरों की जिम्मेदारियाँ भी है। कितने वर्षों से तुम दोनों के बीच प्रगाढ़ स्नेह-सम्बन्ध है! जब से मैंने तुम दोनों को देखा है तब से... करीबन ३० वर्षों से तुम दोनों की घनिष्टता मैंने देखी है!

एक सावधानी तो अनिवार्य है - आपस का मतभेद या मनभेद व्यवहार में अभिव्यक्त नहीं होना चाहिए। तुम दोनों के साथ और आस-पास अनेक दूसरे मुमुक्षु हैं... सभी परिपक्व बुद्धि के नहीं है। तुम दोनों का आपस का व्यवहार यदि वे लोग विपरीत पायेंगे तो गलत कल्पनायें करेंगे और निन्दा-विवाद में फँस जायेंगे।

परन्तु यह आसान काम नहीं है। मनभेद का प्रतिबिंब व्यवहार पर नहीं पड़ने देना, यह काम अशक्य नहीं है तो भी मुश्किल अवश्य है। मुश्किल कार्य भी कभी करना पड़ता है ना? यह समय ऐसा आ गया है... तुम दोनों को मुश्किल कार्य करने हैं।

प्रवृत्तिमार्ग ही ऐसा है! भले शुभ प्रवृत्ति का मार्ग हो, द्वन्द्व उभरते रहेंगे। विसंवाद पैदा होते रहेंगे। जब तक दूसरों से काम लेना होगा, जब तक परसापेक्षता बनी रहेगी तब तक विवाद-विसंवाद उभरते रहेंगे। ऐसी परिस्थिति में उदार... विशाल मन से समाधान करते रहना पड़ता है। जब कोई विवाद पैदा हो, शीघ्र ही समाधान कर लो। पहले अपने मन का समाधान कर लो! ज्ञानदृष्टि से समाधान कर लो। समाधान में शान्ति है, समाधान में समता और प्रसन्नता है।

व्रत है, नियम है, तप है, त्याग है, ज्ञान है और जप-ध्यान है... फिर भी हृदय में उपशमरस नहीं है... फिर भी मन प्रफुल्लित नहीं है... फिर भी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विचारों में संवादिता नहीं आती है... तो कितनी गंभीर यह समस्या बनी है-यह सोच सकते हो? व्रत-नियमों के पालन से और तप-त्याग की आराधना से 'उपशमरस' की प्राप्ति होनी ही चाहिए, क्यों नहीं होती है, कहाँ पर त्रुटि है, खोज निकालना!

स्वास्थ्य अच्छा है ना?

हम माँडवी में सभी स्वस्थ हैं, कुशल हैं। पत्र का प्रत्युत्तर माँडवी लिख सकोगे।

माँडवी (कच्छ)

१०-३-८०

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *मानव मन कितना गहन है! वैचारिक आग्रह मनुष्य को विषाद के रंगों से रंग डालता है।*
- *कभी-कभी बुद्धिशाली कहलाने वाले लोग भी ऐसे वैचारिक दुराग्रहों के कारण असंख्य परेशानियों में अपने आपको उलझा देते हैं।*
- *उसी की उपेक्षा होती है जो स्वयं औरों की उपेक्षा करता है।*
- *जो खुद औरों का खयाल नहीं करता... वह कैसे अपेक्षा रख सकता है कि औरों की तरफ से उसे उपेक्षा नहीं मिलनी चाहिए।*
- *मन को परसापेक्षता के विषवर्तुल में से बाहर निकाल देना चाहिए। मन बदला कि पूरी दुनिया बदल जायेगी!*

पत्र : ४६

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला। आनन्द हुआ। आनन्द है, मात्र प्रत्युत्तर पाने का! पत्र का विषय तो विषाद करे वैसा है...! मानव मन की विचित्र गतिविधियाँ हैं! वैचारिक आग्रह मनुष्य को अशान्त बना देते हैं! बुद्धिमान कहलाने वाले लोग ही ज्यादातर ऐसे दुराग्रहों में फँसे हुए दिखाई देते हैं।

'घर में मेरी उपेक्षा होती रही है!' यह तो है तेरी फरियाद! जो लोग तेरी उपेक्षा कर रहे हैं उनसे तेरी अपेक्षायें कितनी हैं? तू यह चाहता है कि अपनी सारी अपेक्षायें पूर्ण होनी चाहिये- सही है ना? जरा आसपास जाँच करके देखना कि किस व्यक्ति की सारी अपेक्षायें पूर्ण होती हैं! कब तक पूर्ण होती रही हैं?

मेरा ऐसा अनुमान है कि तूने किसी ऐसे व्यक्ति को देखा है कि जिसकी अपेक्षायें विशेषरूप से पूर्ण होती हों! उसके घर में उसकी उपेक्षा नहीं होती हो! परिवार के लोग उसका महत्त्व समझते हों और यह देखकर उससे तूने तुलना की हो!

'उसके घर में उसकी कितनी महत्ता रहती है! कोई उसकी उपेक्षा नहीं करता है... और मेरे घर में कोई मेरी महत्ता ही नहीं समझता है... हर बात में मेरी उपेक्षा होती है...!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'उसकी हर अपेक्षा पूर्ण होती है, माता उसकी अपेक्षा को पूर्ण करती है, भाई-बहन भी उसकी अपेक्षा को समझते हैं और वैसा व्यवहार करते हैं, मेरे घर में कोई भी व्यक्ति मेरी अपेक्षाओं को समझता ही नहीं... फिर अपेक्षा पूर्ण करने की तो बात ही कहाँ?'

आते हैं न ऐसे विचार तेरे मन में? ऐसे हीन विचारों से मन भर गया है न? अब क्या करना है? घर से भाग जाना है? कहाँ जाना है? तू जहाँ जाने को सोचता है, वहाँ तेरी उपेक्षा नहीं होगी ना? है न पूरा विश्वास? वहाँ तेरी हर अपेक्षा का सम्मान होगा न? है न पूर्ण श्रद्धा? खूब सोच विचार करके कदम उठाना। यदि भ्रम को सत्य मानकर चलेगा तो नयी आफत में फँस जायेगा। मुझे तो ऐसा लगता है कि तेरी अपेक्षायें कहीं पर भी पूर्ण नहीं होगी!

एक सत्य को स्वीकार करना होगा-वही मनुष्य उपेक्षित होता है कि जो दूसरों की उपेक्षा करता है! जो मनुष्य दूसरों की अपेक्षाओं का विचार नहीं करता है, वह दूसरों से अपनी अपेक्षाओं को पूर्ण होने की आशा नहीं रख सकता।

जो मनुष्य दूसरों की उपेक्षा नहीं करता है, फिर भी उपेक्षित होता है तो समझना चाहिए कि उसके पापकर्मों का उदय है! दूसरों की उपेक्षा नहीं करनेवाला और दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों का खयाल करनेवाला मनुष्य यह सोचता ही नहीं कि 'मैं उपेक्षित हो रहा हूँ!'

जो मनुष्य दिन-रात अपने कर्तव्यों में ही प्रवृत्त रहता है वह कभी सोचता ही नहीं है कि मेरी उपेक्षा हो रही है या मेरी महत्ता बढ़ रही है। दीर्घकाल तक कर्तव्यपालन करते रहने से स्वतः महत्ता बढ़ जाती है! फिर भी उस महानुभाव को महत्ता की कोई अपेक्षा नहीं होती है। 'दूसरे लोग मेरी सेवाओं की प्रशंसा करें,' ऐसी मनोकामना ही नहीं!

इतना ही नहीं, जब समय मिले तब दूसरों के सत्कार्यों की प्रशंसा करता रहता है। जिसकी वह प्रशंसा करता है, संभव है कि वह व्यक्ति इसकी निन्दा करता हो! 'वह मेरी निन्दा करता है, इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं उसकी प्रशंसा न करूँ! संभव है कि मेरी निन्दा करने का इरादा दूसरा ही हो! वह मुझे आत्मनिरीक्षण का अवसर देना चाहता हो और यह इरादा तो अच्छा है।'

प्रिय मुमुक्षु! तू दुःखी न हो, मत सोच कि 'मेरी उपेक्षा हो रही है।' तू सावधान रहना कि तुम से किसी की उपेक्षा न हो जाय। कभी भी प्रतिशोध की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भावना से नहीं सोचना कि 'वह मेरी उपेक्षा करता है करने दो, मेरे भी दिन आयेंगे... तब मैं उसकी घोर उपेक्षा करूँगा।।' ऐसे विचार करने से तेरा मन अशान्त बनेगा, उद्विग्न रहेगा, संतप्त रहेगा। ऐसा क्यों करना चाहिए?

कभी-कभी तो ऐसा देखा जाता है कि कोई अपनी उपेक्षा नहीं करता हो, फिर भी ऐसा लगता है कि 'वह मेरी उपेक्षा कर रहा है! वह मेरे प्रति दुर्लक्ष कर रहा है।' यह है मानसिक रोग! मानसिक विकृत विचारों के कुचक्र में फँसे जीवों की दुर्दशा होती है। वे शारीरिक रोगों को भी आमंत्रण देते हैं! समझाने पर भी नहीं समझने वालों को नियति का ही दोष देखना पड़ेगा!

दूसरी बात : यदि तू दूसरों की अपेक्षाओं के प्रति दुर्लक्ष करता है तो दूसरों से तू कैसे अपेक्षापूर्ति की आशा रख सकता है? आदर्श तो यह होना चाहिए कि हम जिन लोगों की अपेक्षापूर्ति करते हों वे लोग अपनी एक भी अपेक्षा पूर्ण न करते हों तो भी उनके प्रति दुर्भावना नहीं करनी चाहिए! मजा ऐसे आदर्शों को जीने में है।

क्या दूसरों से अपेक्षा रखे बिना आनन्दपूर्ण जीवन नहीं जी सकते? जीवनपद्धति में परिवर्तन नहीं कर सकते? परसापेक्ष जीवन दुःखी जीवन होता है। परसापेक्षता दुःखदायिनी होती है। मेरी राय यदि माने तो धीरे-धीरे परसापेक्षता के विषवर्तुल में से बाहर निकल जा! मन को बदलने की ही बात है! मन बदला कि दुनिया बदल गई समझना! यदि मन नहीं बदला तो तू कहीं पर भी जायेगा तुझे शांति, प्रसन्नता नहीं मिलेगी। दुनिया में कौन ऐसा फालतू बैठा है कि जो तेरी अपेक्षाओं को पूर्ण करता रहेगा? कौन तेरी प्रशंसा करता रहेगा? कौन तेरी महत्ता को गाता रहेगा? फिर तू कहाँ जायेगा? दुनिया को कोसता रहेगा! जीव सृष्टि के प्रति घृणा करता रहेगा और मानसिक अस्थिरता का शिकार बन जायेगा।

यदि तू अपनी उपेक्षा नहीं चाहता है तो तेरे व्यक्तित्व को गुणों से सुवासित बनाने का प्रयत्न कर। तू अपनी उपयोगिता ऐसी सिद्ध कर दे कि तेरे बिना दूसरों का कार्य स्थगित हो जाय! तेरी अनुपस्थिति में दूसरों को अभाव... अभाव लगे! तेरे आसपास के लोगों की अपेक्षाओं को तू पूर्ण करने का प्रयत्न करता रहे... वे लोग तेरी उपेक्षा कर ही नहीं सकेंगे! तेरी शिकायत स्वतः दूर हो जायेगी!

'सभी लोग मेरी उपेक्षा कर रहे हैं,' इस विचार ने तेरे मन को क्षुब्ध कर दिया है। तेरी मुखाकृति को उद्वेग से पोत दिया है। तेरी वाणी में कटुता और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निराशा भर दी है। तेरे व्यवहार को छिन्न-भिन्न कर दिया है। एक दुर्विचार ने तुम्हारे मोहक व्यक्तित्व का हनन कर डाला है। मेरे मित्र, शीघ्र ही उस दुर्विचार को दिमाग से निकाल दे।

माँडवी में २५ दिन रहे। नियमित प्रवचन होते रहे। अब अंजार की ओर विहार कर दिया है। अंजार में कुछ समय स्थिरता करने की भावना है। तेरा पत्र अंजार में मिलेगा? तेरे तन-मन की स्वस्थता चाहता हूँ।

नानी खाखर (कच्छ)

५-४-८०

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *जब भी प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन करें... अनुशीलन- परिशीलन करें... तब उन ग्रन्थों के रहस्यों की गहराई में जाने की कोशिश करनी चाहिए।*
- *संसार की यही तो विचित्रता है... समझदार लोग भी कभी-कभी गलतियों को दोहराते हैं।*
- *व्यक्तित्व का अभिमान जब उभरने लगता है... तब फिर आदमी भले-बुरे को नहीं समझ पाता।*
- *आजकल की उगती पीढ़ी को न जाने कौन-सा रोग लग गया है? न कोई लक्ष्य... ना कोई ध्येय... न कोई आदर्श... न कुछ जीवन का आयोजन!*
- *युवा पीढ़ी को बिगाड़नेवाले-बरबाद करनेवाले अनेक परिबलों में एक परिबल है, आज के स्वार्थान्ध राजनेता!*

पत्र : ४७

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिल गया, तेरे मन के विसंवाद दूर हुए, जानकर खूब प्रसन्नता हुई। परंतु जब तक तू स्वयं अपने मन के प्रश्नों का, समस्याओं का, उलझनों का समाधान नहीं करने लगेगा तब तक मैं निश्चिंत कैसे बनूँगा? इसलिये, तू 'ज्ञानसार' का पुनः-पुनः परिशीलन करता रहे! 'ज्ञानसार' में तुझे हर प्रश्न का उत्तर मिलेगा! हर समस्या का समाधान मिलेगा। तेरा मन अपूर्व आनन्द की अनुभूति करेगा। शुरू करेगा न 'ज्ञानसार' का अध्ययन-परिशीलन? एक-एक श्लोक पर... एक-एक शब्द पर चिंतन करना!

तूने अपने मित्र के विषय में चिंता व्यक्त की, स्वाभाविक है। मित्र के प्रति स्नेह होना सहज है। स्नेह से प्रेरित होकर तूने उसको समझाने का प्रयत्न किया, करना ही चाहिए। परंतु, निष्फलता मिलने पर विषाद नहीं करना चाहिए। अभी-अभी वह अपनी पुरानी भूल को दोहरा रहा है... कि जिस भूल ने उसको भूतकाल में कटु अनुभव कराये हैं, इसका अर्थ तो यह होता है कि उसको पहले भी अपनी भूल महसूस नहीं हुई होगी। अथवा, उसके मन की दुर्बलता होनी चाहिए कि उस गलत काम को वह छोड़ नहीं सकता!

होता है संसार में ऐसा! समझदार लोग भी पुनः-पुनः एक ही भूल करते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रहते हैं! बार-बार कटु परिणाम भोगते रहते हैं... समझाने पर भी नहीं समझते! ऐसे जीवों की नियति ही वैसी होती है। उसके प्रति तू रोष मत करना, उसका तिरस्कार भी मत करना...। हालांकि उसके प्रति तेरा प्रेम है, इसलिये तू दुःखी तो होगा ही! प्रेम दुःखी करेगा ही! तू उसके भविष्य को अंधकारमय देखता है, दुःखपूर्ण देखता है, इसलिये तुझे दुःख होगा। जिसके प्रति प्रेम होता है, उसको मनुष्य दुःखी नहीं देख सकता। प्रेमी के दुःख दूर करने की ही इच्छा बनी रहती है।

तू अपने उस मित्र के व्यक्तित्व की प्रशंसा लिखता है, होगा वैसा व्यक्तित्व! रूपवान होना, कलाकार होना, कवि होना, मोहक होना... एक व्यक्ति में ये सारी बातें इकट्ठी होती हैं, तब उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली बनता है, परंतु यह व्यक्तित्व बाहरी होता है! भीतर का व्यक्तित्व दूसरा भी हो सकता है! तूने उसके आभ्यन्तर-आन्तरिक व्यक्तित्व को परखा है? रूपवान व्यक्ति गुणवान ही हो, ऐसा नियम नहीं है। बाहरी कलाओं में निपुण व्यक्ति जीवनकला में निपुण न भी हो! प्रकृति के काव्यों की रचना करने वाला अध्यात्म के गीतों से अनभिज्ञ हो सकता है। बाहरी मोहकता से आकृष्ट व्यक्ति, निकट आने पर निराश भी हो सकता है!

अपने बाह्य व्यक्तित्व के प्रति वह सचेष्ट होगा! उस व्यक्तित्व पर उसे विश्वास होगा! उस व्यक्तित्व के सहारे निर्भय होगा! और इस विश्वास ने उसको गलत रास्ते पर चलने में 'हिम्मत' बंधाई है! 'मैं किसी से डरता नहीं हूँ... मुझे किसी की परवाह नहीं है...' ऐसा बोलता भी होगा! व्यक्तित्व का अभिमान उस पर 'हावी' हो गया है। इस समय तू उसे नहीं समझा सकेगा!

एक बार तो उसका वह अभिमान बर्फ की तरह पानी-पानी हो गया था न? बर्फ कितने दिन तक बर्फ बना रहेगा? एक दिन पानी होगा ही! कोई दुर्घटना ही उसको समझा सकेगी! अथवा कोई 'सद्गुरु' की बात जब उसकी आत्मा को स्पर्श कर देगी... तब वह होश में आयेगा। 'वेट एंड सी'!

तू उसके विषय में सोच ही मत! उससे मिलना भी छोड़ दे! थोड़े दिन में ही तू स्वस्थ बनेगा। वर्तमानकालीन उसकी प्रवृत्तियाँ जब तेरे मन में उद्वेग ही पैदा करती है, संताप पैदा करती है... तब उससे दूर रहना ही उचित होगा। संभव है कि उसके प्रति तेरा आन्तरिक राग, उससे मिलने के लिये, उससे बातें करने के लिये तुझे प्रेरित करेगा! परंतु तुझे अपने राग पर संयम रखना होगा!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आजकल युवा पीढ़ी को क्या हो गया है, समझ में नहीं आता! न उनको स्वयं सूझ है, जीवन निर्माण की और न वे किसी जीवनशिल्पी का मार्गदर्शन लेते हैं! न कोई ध्येय, न कोई आदर्श, न कोई व्यवस्थित आयोजन!

राजकीय नेता लोग अपने स्वार्थों की सिद्धि में युवकों का उपयोग कर रहे हैं। हिंसा को बढ़ावा दे रहे हैं। अनुशासनहीनता को उत्तेजित कर रहे हैं। कौन बचायेगा युवा पीढ़ी को? बड़ी चिंता का विषय बन गया है।

पारिवारिक जीवन में युवक-युवतियाँ 'अपसेट' हो रहे हैं। माता-पिता के साथ वे सेट नहीं हो रहे, भाइयों के साथ सेट नहीं हो रहे! मनश्चिंता बहुत बढ़ रही है। अभी थोड़े महीने पहले एक परिचित भाई मेरे पास आये थे... इक्कीस-बाईस साल का लड़का है उनका। बहुत परेशान है लड़के के विषय में। न करता है सर्विस, नहीं देता है पिता को सहयोग! आवारा बनकर भटकता रहता है! खाना-पीना, अच्छे, कपड़े पहनना और आवारा-टाईप लड़के-लड़कियों के साथ भटकना। मनचाहा खर्च करना और कभी-कभी पैसे की चोरी करना...! पिता की एक बात नहीं सुनता है, माता की तो गिनती ही नहीं करता है!

पिता कितना परेशान होगा? इज्जत का डर है, इसलिये लड़के को घर से निकाल भी नहीं सकता है... पुत्र-स्नेह की वजह से दुःखी हो रहा है। ऐसे एक पिता नहीं, हजारों... लाखों पिता परेशान हैं! लाखों माताएँ संतप्त हैं। निकट के भविष्य में कोई आशा नहीं दिखती है। युवा पीढ़ी के प्रति उदासीनता धारण करना ही ठीक लगता है। हाँ, जिन युवक-युवतियों में जीवन निर्माण की तमन्ना हो, मार्गदर्शन चाहते हों... उनके प्रति औदासीन्य नहीं होना चाहिए, उनके प्रति स्नेह और सद्भाव होना चाहिए, और समुचित मार्गदर्शन देना चाहिए।

श्रद्धा, नम्रता और समर्पण के बिना न तो मार्गदर्शन देना, न उपदेश देना! अन्यथा तेरा स्वयं का अहित होगा!

महानुभाव, इस विषय में कभी-कभी बहुत सोचता हूँ... कुछ उपाय भी मिल जाते हैं... परंतु सारे उपाय परसापेक्ष होते हैं! जब तक शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन न हो तब तक परिस्थिति सुधरने वाली नहीं है। बालमंदिर से कॉलेज तक, शिक्षापद्धति में परिवर्तन आवश्यक है। परंतु यह परिवर्तन हो - वैसा देश-काल नहीं दिखता। अर्थ और काम केन्द्रबिंदु बन गये हैं शिक्षा के! ऐसी शिक्षा मात्र भारत में ही है, वैसा नहीं, विश्वव्यापी बन गई है ऐसी शिक्षा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यदि जैन संघ, जैन संस्कृति के अनुरूप, गाँव-गाँव में और नगर-नगर में अपनी स्वतंत्र शिक्षापद्धति की शालायें शुरु कर दें, बालमंदिर से लेकर कॉलेज तक स्वतंत्र शिक्षापद्धति चलती रहे, तो ही युवापीढ़ी में अपेक्षित योग्यता पनप सकती है, दूसरे कोई उपाय कारगर नहीं बन सकते। क्यों हर संघ का अपना जैन बालमंदिर न हो? जैन संघ के दानवीर जब शिक्षा क्षेत्र में करोड़ों रुपये 'डोनेट' करते हैं, तब संघ की अपनी स्वतंत्र शालाओं का निर्माण और संचालन क्यों न हो? जैनसंघ यदि यह आदर्श प्रस्थापित करेगा तो अन्य समाज भी अनुसरण करेंगे! भारतीय संस्कृति और सभ्यता के अनुरूप, भारतीय जीवनपद्धति में उपयोगी शिक्षापद्धति का प्रचलन होने लगेगा। यदि अभी यह योजना कार्यान्वित हो, तो कुछ वर्षों के बाद इसका अपूर्व परिणाम देखने को मिलेगा।

तू पत्र का प्रत्युत्तर यहाँ ही देना। जून १० तक तो संभवतः यहीं अंजार में रुकना होगा। भुज में चातुर्मास प्रवेश जुलाई में होने वाला है।

तेरी कुशलता चाहता हूँ -

अंजार (कच्छ)

२५-५-८०

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *विश्वासभंग सबसे बड़ा पाप है।*
- *आवश्यकता समाप्त हो जाने पर किसी से नाता तोड़ देना या मुँह मोड़ लेना, यह स्वार्थ नहीं है तो क्या है?*
- *जिंदगी में किसी की विश्वसनीयता को सहेजकर रखना, सम्हाल कर रखना भी बहुत बड़ी तपश्चर्या है!*
- *अपनी गलतियों को ढंकने के लिये औरों की गलतियों को उद्घाटित करना दुर्जनता है।*
- *छोटी सी जिंदगी में क्या समझदारी, समता और सहिष्णुता के फूलों को खिलाकर नहीं जी सकते?*
- *`परपीड़न में आनन्द महसूस करना', बहुत बड़ी विकृति है। घिनौनी एवं गंदी मनोवृत्ति है।*

पत्र : ४८

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

तेरा पत्र नहीं मिला है, लिखा हो तो मिले न! अब, दोनों पत्र का प्रत्युत्तर साथ ही लिखना। तेरा मित्र यहाँ आया था, थोड़े दिन मेरे पास रहा, उसने अपनी बहुत सी आन्तरिक बातें कहीं। सुनते-सुनते कभी खुशी, कभी उद्वेग, कभी आश्चर्य और कभी विषाद उभर आया। तेरे लिये अनेक विचार मेरे मन में उभरते रहे।

तू जानता है कि उसने तेरे साथ कैसा अभेद भाव से संबंध रखा? तुम्हारी मित्रता कैसी अद्भुत है? एक दृष्टि से देखा जाय तो तेरे ऊपर उसके अनेक उपकार हैं। तूने स्वयं अपने मुँह से उसके उपकार गाये हैं, याद है न? जब-जब तेरे जीवन में मुसीबतें आयी तू उसके पास गया है और उसने अपने सुख-दुःख की चिन्ता किये बिना तुझे सहयोग दिया है। उसने तेरे साथ कोई परदा नहीं रखा है।

परन्तु तूने क्या किया? बाह्य व्यवहार की बात नहीं करता, बाह्य व्यवहार तो तूने अच्छा ही रखा है, मैं जानता हूँ, परन्तु अपने दूसरे मित्रों के आगे तूने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसके लिये कैसी-कैसी बातें की है और कर रहा है, यह जानकर मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा है। तेरे विषय में मेरी धारणायें भी गलत सिद्ध हुई। विश्वासभंग जैसा पाप तेरे जीवन में प्रविष्ट हो जायेगा अथवा पहले से होगा, यह मैं नहीं जानता था।

तू शायद ऐसा मानता होगा कि 'अब मुझे उस मित्र की कोई आवश्यकता नहीं है...' मानता हूँ कि तुझे उसकी आवश्यकता नहीं रही होगी, परन्तु क्या मित्रता का सम्बन्ध आवश्यकता के साथ है? जब तक आवश्यकता हो तब तक ही मित्रता? क्या वह मित्रता होती है या स्वार्थ-साधकता? तूने मात्र अपना स्वार्थ देखा है।

तू ऐसा मत मानना कि उसको तेरी कोई आवश्यकता है, तेरे बिना वह निराधार हो गया है! तेरे बिना उसको कोई नुकसान नहीं है। उसके बिना तुझे नुकसान होने की मुझे आशंका है! तू नहीं मानेगा, चूँकि तू वर्तमानकालीन अपनी सुदृढ़ स्थिति पर आश्वस्त हो गया है।

तेरी बातों में कितना विरोधाभास है! तुझे याद है क्या कि जब तू पारिवारिक आपत्ति में फँसा था, तू उसके पास गया था शरण लेने! उसने अपने परिवार की नाराजगी होने पर भी तुझे सहयोग दिया था! तेरे लिये उसने अपने परिवार का त्याग कर दिया था! उसके महान त्याग पर तू रो पड़ा था... और मेरे सामने बोला था : 'कुछ भी हो जाय, दुनिया भले बदल जाय... परन्तु मैं जीवनपर्यंत उसका साथ नहीं छोड़ूँगा!'

और वही तू क्या बोल रहा है? 'उसने मेरे लिये कोई त्याग नहीं किया था, मेरा तो मात्र निमित्त था, उसने अपने ही निजी कारणों से त्याग किया था... मैं उसकी आन्तरिक सारी बातें जानता हूँ!' ऐसा बोल रहा है न तू? क्या तेरी आन्तरिक बातें वह नहीं जानता है? फिर भी, मेरे सामने तेरे लिये एक भी बात नहीं की है उसने। दूसरों के सामने तो ऐसी बातें करेगा ही कैसे?

उपकारी के उपकारों को भूल जाना, उपकारी के प्रति अपकार करना... क्या मुमुक्षुता का लक्षण है? मानवता का लक्षण है? तू क्या कर रहा है... एकान्त में शान्त चित्त से सोचेगा क्या? ऐसे मित्र का विश्वासघात करना, बड़ा पाप है। इस पाप का फल, भविष्य के जन्मों में तो मिलने वाला होगा वह मिलेगा, परन्तु वर्तमानकालीन जन्म में भी मिलेगा। तू अविश्वनीय बन जायेगा। तू किसी का भी विश्वासपात्र नहीं रहेगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैं जानता हूँ कि इस पत्र से तू नाराज होगा, रोषायमान होगा और मेरी बातों का इन्कार करेगा। तूने अपनी गलतियों को स्वीकार करना सीखा ही नहीं है। तू हमेशा दूसरों की गलतियाँ देखता रहा है, दूसरों के दूषण देखना, दूसरों के गुप्त रहस्यों को जानना और स्वरक्षा के लिए उसका उपयोग करना... तेरे स्वभाव में भरा है।

मैं जानता हूँ कि तेरा मेरे प्रति स्नेह है, आदर है, भक्ति है, इसलिये इतना कटु सत्य लिख रहा हूँ। तुम्हारे प्रति मैं अपना एक कर्तव्य समझ कर लिख रहा हूँ। तू जानता है कि मैं निष्प्रयोजन और फालतू बातें करता ही नहीं हूँ। न मुझे तुम से कोई स्वार्थ है। तू मेरे प्रति नाराज हो जायेगा, तो भी मुझे गम नहीं होगा। कटु सत्य बहुत थोड़े जीवों को ही प्रिय लगता है।

मैं यह भी जान चुका हूँ कि तू उस निर्मल मैत्री को तोड़ने के लिये क्यों तत्पर बना है! अब उस मित्र से दूर रहना क्यों पसन्द करता है।

तू उससे दूर रहे, उसकी मुझे चिंता नहीं है। परंतु तू उसका द्रोही बने, यह बात क्षम्य नहीं है। उसने तेरा कुछ भी बिगाड़ा नहीं है, तेरे प्रति कोई दुर्भावना नहीं की है, और तू उसके प्रति दुर्भावना रखता है, यह बात अच्छी नहीं है।

एक बात तू समझ लेना कि तू उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकेगा। जब तक मनुष्य का पुण्योदय होता है, उसका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। जब मनुष्य का पापोदय होता है, उसका कोई कुछ सुधार नहीं सकता। तू अपनी गलतियों को ढकने के लिये, उसकी गलतियों को प्रकाशित करने की गलत प्रवृत्ति कर रहा है, यह बहुत बड़ी दुर्जनता है।

अपने कुछ श्रीमन्त मित्रों के सहारे और कुछ २५/५० हजार रुपयों की कमाई के बल पर, तू अपने आपको निश्चिंत और निर्भय मानकर चल रहा है, यह मैं जानता हूँ। क्या ऐसा नहीं होगा कि वे मित्र कभी तेरे साथ विश्वासघात करें? 'एक्शन-रिएक्शन' का नियम तो तू जानता है न? तूने विश्वासघात किया है, तो तेरे साथ विश्वासघात होगा! उस समय तू कहाँ जायेगा? क्या करेगा?

बाह्य तप-त्याग और दूसरी धर्मक्रियायें क्या तुझे विश्वासघात का लायसेंस देती हैं? 'मैं तप करता हूँ, मैं त्याग करता हूँ, मैं अच्छी तत्त्वचर्चा करता हूँ... मैं धर्मक्रियायें करता हूँ... इसलिये मैं विश्वासघात करूँ तो भी मुझे पाप नहीं लगता!' ऐसा मान लिया है क्या?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भ्रमणाओं में भटक रहा है। मेरी बात पर गंभीरता से सोचना। इतना स्वार्थी नहीं बनना... कि निःस्वार्थ मित्र का विश्वासघाती बने। अब भी रुक जा। प्रत्युपकार की तुमसे कोई अपेक्षा नहीं है... अपकार से निवृत्त हो जायेगा तो भी मुझे संतोष होगा।

छोटी सी जिंदगी, क्या शान्ति से, समता से और सहिष्णुता से बसर नहीं हो सकती? परोपकार न हो सके तो, स्वान्तः सुखाय क्या नहीं जी सकते? परपीड़न में आनन्दित होना, महापाप है।

तेरी कुशलता चाहता हूँ। परमात्मा के अचिन्त्य अनुग्रह से तुझे सद्‌बुद्धि मिले... यही मंगल कामना।

नया अंजार (कच्छ)

३-६-८०

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *स्वयं को हीन मानने-समझने की वृत्ति जैसे अच्छी नहीं है... वैसे ही अपने आप को महान समझने की गुरुताग्रंथि भी बड़ी खतरनाक होती है!*
- *मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन सामाजिक जीवन से पूर्णतया अलिप्त या अलग नहीं रह सकता है!*
- *सामाजिक प्रतिक्रियाओं का तब तक तो खयाल रखना ही होगा, जब तक समाज के बीच में जीना है।*
- *जब पारलौकिक दृष्टि का ही अभाव है फिर मानसिक विचारधारा कलुषित बनी रहे या विकृत बन जाये, इसमें ताज्जूबी क्या?*
- *मानसिक तनाव जब जरूरत से ज्यादा बढ़ते हैं, तब वे शरीर पर भी अपना असर दिखाते हैं।*

पत्र : ४९

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

पत्र मिला, इतना विस्तृत पत्र प्रथम बार ही मिला। शान्ति से पढ़ा, तेरे पत्र के माध्यम से तेरी मानसिक स्थिति का भी अनुमान किया। स्थितप्रज्ञदशा से बहुत दूर-दूर रहा हुआ व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में भय, भ्रान्ति और भ्रमणाओं में उलझ जाय, यह स्वाभाविक है। तेरी मानसिक तनावपूर्ण स्थिति 'नॉर्मल' हो जानी चाहिए। तुझे शीघ्र निर्भय हो जाना चाहिए। गुरुताग्रन्थि से मुक्त बन जाना चाहिए।

तेरा पत्र तो बाद में मिला, इससे पूर्व वह भाई... मेरे पास आया था, उसने तेरे विषय में बहुत सी बातें बतायी। तूने तो उसको मना कर दिया था... परन्तु तेरे प्रति उसको आत्मीयस्नेह है न! उसका दिल मेरे पास खुल ही गया और उसने सारी बातें कह दी। मैं सुनता रहा... सोचता रहा...। जो कुछ भी बना है, होना निश्चित था, मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ है। मुझे कैसे आश्चर्य होता? मेरी तो पहले से ही धारणा थी कि ऐसा परिणाम आयेगा।

व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक जीवन संपूर्णतया अलिप्त नहीं रह सकते। मनुष्य जैसे एक व्यक्ति है, वैसे वह एक सामाजिक प्राणी भी है। जब तक समाजसापेक्ष जीवन है, सामाजिक प्रतिक्रियाएँ जब तक मन-मस्तिष्क पर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

असर करती रहती हैं, तब तक सामाजिक मूल्यांकनों का अपलाप नहीं किया जा सकता। तू जानता है, तेरा अनुभव भी है कि सामाजिक प्रत्याघातों का कितना असर तेरे मन पर होता है।

एक बात सुनकर मुझे दुःख हुआ...! दूसरा कोई अनपढ़ और ईर्ष्याग्रस्त मनुष्य ऐसी बात करता तो दुःख नहीं होता परन्तु तुझे मैं अनपढ़ नहीं मानता, तू धर्मग्रन्थों का अभ्यासी है, कुछ योग-अध्यात्म के मार्ग में तेरी अभिरुचि है... फिर भी तू अपनी गलतियों को छिपाने हेतु अपने गुरुजनों की गलतियों को प्रकट करता है!' मैं ही ऐसा करता हूँ क्या? मेरे वे... वे... गुरुजन भी ऐसा करते हैं...।' ऐसा बोलते समय तू अपनी सुरक्षा का ही विचार करता है। परन्तु कभी नहीं भूलना कि दूसरों के दोषों का प्रकाशन कर, कभी भी तू अपनी सुरक्षा नहीं कर पायेगा।

इसका अर्थ तो यह होता है कि तू जो कुछ कर रहा है-इससे तू भयभीत है! तू जैसा है वैसा दुनिया के सामने पेश आने की तेरी हिम्मत नहीं है। 'दूसरे लोग ऐसा आचरण करते हैं, इसलिये मैं भी ऐसा करता हूँ' यह तर्क तेरी निर्दोषता को सिद्ध नहीं कर सकेगा।

तू अपनी इज्जत को बचाने के लिये, अपना गौरव अखंडित रखने के लिये, 'विश्वासघात' जैसा पाप करने को तत्पर बना है, यह तो अत्यंत शोचनीय बात है। क्या तेरा यह विश्वास है कि विश्वासघात करके तू अपने आपको सुरक्षित रख पायेगा? तेरे पाप प्रकाशित नहीं होंगे? तू अपने उस मित्र का अनिष्ट कर सकेगा? नहीं कर सकेगा तू उसका कुछ भी अनिष्ट! तू भ्रमणा में भटक रहा है। तू स्वयं बहुत बड़ी आफत में फँस जायेगा... तेरी उज्ज्वल प्रतिभा खंडित हो जायेगी। यदि मेरी राय मान ले तो इस पत्र के मिलते ही तू रुक जा। सावधान हो जा। गलत रास्ते से वापस लौट जा।

परन्तु मुझे लगता है कि तू वापस नहीं लौटेगा! चूँकि तू कुछ समय से जिस व्यक्ति के घनिष्ट परिचय में आया है, कदम-कदम पर तू जिसकी राय लेता रहता है, किसी भी प्रलोभन से वह व्यक्ति तुझे अच्छे-बुरे कार्यों में सहयोगी बना रहा है... वह व्यक्ति अब तुझे कहाँ ले जायेगा... मैं कल्पना नहीं कर सकता। मैं जानता हूँ कि तुझे कहाँ तक उसने 'करप्टेड' बना दिया है! चूँकि उसको जो चाहिए वह तेरे परिचय से मिल रहा है! वह अब तुझे नहीं छोड़ेगा! लेकिन एक दिन वही तेरा शत्रु बनेगा और तेरी बुराई करेगा! आज तू मेरी यह बात नहीं मानेगा... मैं जानता हूँ और तू मुझसे संपर्क भी कम करने का सोच रहा है, वह भी मैं जानता हूँ!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खैर, जैसी भवितव्यता! जिसको जैसा बनना है, बनके रहेगा! उसको कोई नहीं रोक पाता! तुम्हारे प्रति मेरे हृदय में जो स्नेह का झरना बह रहा है, उससे प्लावित होकर ही यह पत्र लिख रहा हूँ। जब तक मुझे विश्वास है कि मेरे पत्र से तू प्रसन्न होता है, तुझे मेरे पत्र की अपेक्षा है, चाह है, तब तक लिखता रहूँगा...। परन्तु जब वह विश्वास नहीं रहेगा, लिखना स्वतः बंद हो जायेगा।

जब ऐसी-ऐसी बातें सुनता हूँ, पढ़ता हूँ... तब मूल कारण खोजने लगता हूँ। तेरा पत्र पढ़कर मैं कुछ दिनों तक सोचता रहा। मुझे लगा कि पारलौकिक दृष्टि के अभाव में ही ऐसी मानसिक कलुषिततायें पैदा होती हैं।

मात्र वर्तमानकालीन सुख-दुःख के विचार, मन में असंख्य विकार पैदा कर देते हैं। पारलौकिक विचारधारा यदि हृदयगिरि में नहीं बहती रहती है तो अस्थिरता, चंचलता और दिशाशून्यता से जीवन भर जाता है। तू सोचना, शान्ति से सोचना, क्या कभी तुझे पारलौकिक विचारों का स्पर्श होता है? वर्तमान जीवन की क्षणिकता ने कभी तुझे विचारमग्न कर दिया है?

ठीक है, तुझे जैसा जीवन पसन्द हो, तू जी सकता है। तू किसी का भी नियंत्रण चाहता नहीं है, यह मैं जानता हूँ। नियंत्रण नहीं मार्गदर्शन भी शायद तुझे पसन्द नहीं आ रहा है! तेरी गुरुताग्रन्थि, तुझे किसी की भी सलाह-मार्गदर्शन लेने से रोकती है!

मेरे इस पत्र को शान्ति से पढ़ना। दिमाग से सोचना...। भविष्य का विचार करना। तेरा कोई मित्र नहीं रहेगा-तो भी चलेगा न? सोच लेना। तू अपने प्रति निःस्वार्थ स्नेह रखनेवाले मित्रों के प्रति भी विश्वासभंग करेगा, तो तेरे कौन मित्र बनेंगे? तेरे प्रति कौन विश्वास करेगा, वगैरह बातें स्वस्थता से सोचना। यदि उचित लगे तो सोचना! मेरा आग्रह नहीं है।

तेरा स्वास्थ्य कैसा है? मानसिक तनाव शरीर पर असर करते हैं, इसलिये स्वास्थ्य का खयाल करना। परिचितों को धर्मलाभ सूचित करना।

यह पत्र तुझे मिलेगा उसके पहले भूज में हमारा चातुर्मास-प्रवेश हो गया होगा! अंजार में धारणा से ज्यादा रुकना हुआ। जगह अच्छी है। लिखने का, पढ़ने का काम अच्छा हुआ। प्रवचनों से जनता को तो अच्छा लाभ हुआ है!

हम सभी कुशल हैं -

नया अंजार (कच्छ)

१-७-८०

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *एक आदमी ही नहीं, वरन् सारी सृष्टि, समग्र जीवसृष्टि सुख की आशा में, सुख की खोज में जी रही है।*
- *सुख के बारे में हर एक आदमी की अपनी-अपनी धारणाएँ होती हैं, अपनी-अपनी कल्पनाएँ होती हैं।*
- *सुख को पाने के लिए सब लालायित हैं, पर अपने सुखों को कोई बाँटने या बिखेरने की बात नहीं सोचता है!*
- *जब तक सुखों का आकर्षण कम नहीं होगा तब तक सुखों का त्याग सहज-स्वाभाविक नहीं होगा।*
- *अल्प सुख-सुविधाओं में जीने की कला सीख लेनी चाहिए।*

पत्र : ५०

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला, सारी परिस्थितियों से परिचित हुआ। तेरे प्रति मेरी संवेदनायें हैं...। तेरी परेशानियाँ दूर हों... तेरे शोक-संताप उपशांत हों, परमात्मा से यही प्रार्थना करता हूँ।

महानुभाव, आज तुझे कुछ ऐसी बातें लिखना चाहता हूँ, जो कुछ गम्भीर हैं, कुछ अटपटी भी! तेरा पत्र आने के पश्चात् मैंने शान्त चित्त से सोचा। मुझे लगता है कि मात्र तू ही नहीं, करीबन सारा विश्व कुछ न कुछ सुखों की अपेक्षाएँ लेकर जीता है। 'यह सुख तो होना चाहिए, इतना सुख तो होना चाहिए... इस सुख के बिना तो कैसे चल सकता है?' ऐसी कुछ धारणाएँ मनुष्य बाँधकर चलता है। और इसी वजह से मनुष्य दुःखी है, संतप्त और अशान्त है।

आज दिन तक इस प्रकार जीवन जीता रहा है न? इतने वर्षों तक, इस प्रकार जीवन जीने से तू संतुष्ट नहीं है न? तू तृप्त नहीं है न? अब एक नया प्रयोग कर ले! कुछ बाह्य सुखों का त्याग कर दे और कुछ मानसिक सुखों को बिखेर दे! हाँ, मन की कल्पनाओं के सुखों का त्याग कर दे।

एक भाई मेरे पास आये थे, थोड़े दिन पहले। उन्होंने कहा : 'महाराज

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साहब, मुझे सब प्रकार के सुख मिले हैं... कोई दुःख नहीं है... परन्तु मैं इसलिए अशान्त रहता हूँ कि मेरा एक लड़का मेरी एक बात भी मानता नहीं है। उसके प्रति मुझे राग है... परन्तु उसका मेरे प्रति कोई लगाव नहीं है। न वह मेरे साथ प्रेम से बात करता है, न वह ऑफिस में आकर मेरे कार्य में सहयोग देता है। मेरे मन में बस, उस लड़के की हरकतें ही आती रहती हैं। अच्छा फ्लेट है, कार है, पत्नी है... सब कुछ है, परन्तु मन में शान्ति नहीं है।'

इस पुरुष के पास, संसार में जो सुख मनुष्य के पास होने चाहिए... सब हैं। एक सुख नहीं है... पुत्र-प्रेम का! और एक सुख के अभाव में वह इतना बेचैन है कि शायद वह अपना 'बेलेन्स ऑफ माइन्ड' गँवा देगा। वह एक सुख का त्याग नहीं कर पा रहा है। मैंने कहा उसको : भैया, पुत्र-सुख को बिखेर दो!' यह मेरा पुत्र है... मैंने उसको खूब प्यार दिया है... उसका मेरे प्रति प्रेम होना चाहिए...।' इस विचार को 'वेस्ट पेपर बॉस्केट' में डाल दो।

उसने कहा : 'महाराज साहब, हमें तो संसार में जीना है... यदि लड़का सीधा नहीं चले, आवारा बन जाए... तो मेरी इज्जत...।'

इज्जत का सुख! जो इज्जत दुनिया से संबंधित होती है... उस इज्जत का सुख बनाये रखने की इच्छा ही तो दुःख है। दुनिया क्या कहेगी? दुनिया की निगाहों में हमें अच्छे बनकर रहना चाहिए...। यह विचार कितना गलत है। दुनिया ने कभी अच्छे पुरुषों की प्रशंसा 'ये अच्छे हैं', ऐसा मानकर नहीं की है, दुनिया में उन पुरुषों की प्रशंसा होती है कि जिनका 'यस नामकर्म' नाम का पुण्य कर्म उदय में होता है। मैंने उस महानुभाव को धर्म का सिद्धान्त समझाया। 'इज्जत मिले या नहीं मिले, चिन्ता उसकी मत करो, चिन्ता करो तुम्हारे मन की, तुम्हारी आत्मा की।'

इज्जत के सुख की कल्पना मनुष्य के मन पर हावी हो जाती है तब इज्जत मिलने पर भी वो सुखी नहीं होता है। सदैव इज्जत को बनाये रखने की फिक्र सताया करती है। जहाँ फिक्र वहाँ दुःख। वहाँ अशान्ति! जीवन पर्यंत, इस प्रकार कई मनुष्य इज्जत की फिक्र में अशान्त बने रहते हैं। इज्जत की कल्पना का सुख बिखेर देना चाहिए... त्याग कर देना चाहिए।

मुश्किल तो है यह काम। इज्जत और प्रतिष्ठा माध्यम बने हुए हैं, दूसरे सुखों को पाने में! फिर भी यह काम करना आवश्यक है। सुखों की कामनाओं का विसर्जन करना अनिवार्य है। हालांकि, चारों ओर सुख पाने की भगदड़

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मची हुई है... विराट विश्व में जहाँ देखो वहाँ सुख पाने की और दुःखों से छुटकारा पाने की ही चहल-पहल दिखती है। तेरे आसपास... तेरे परिवार में भी तू सुख-विसर्जन की बात करेगा तो लोग तेरी मजाक उड़ायेंगे...! नयी बात है न!

प्रिय मुमुक्षु, जीवन के कई प्रश्नों से, कई समस्याओं से तू मुक्ति पा लेगा... यदि दृढ़ता के साथ तू सुखों का विसर्जन करेगा तो! पहले तो मन को सुख-वासना से मुक्त करना होगा। सुखों की वासना से मुक्त करना है मन को, तो सुखों की-वैषयिक सुखों की निःसारता का पुनः-पुनः चिन्तन करना। सभी वैषयिक-भौतिक सुख अनित्य-विनाशी है, भयाक्रान्त है और पराधीन है... इन तीन पहलुओं के माध्यम से निःसारता की प्रतीति करनी होगी।

सुखों के प्रति विरक्ति बढ़ने पर, तू सहजभाव से सुखों का त्याग कर सकेगा। तेरे मन में सुखों का आकर्षण नहीं रहेगा। इससे तू अपूर्व मनःशान्ति पायेगा। अद्‌भुत चित्तप्रसन्नता की अनुभूति करेगा। बाह्य सुखों का त्याग तुझे आन्तर सुखों की अद्वितीय भेंट देगा।

सीताजी के जीवन की एक घटना के प्रति तेरा चिन्तन हुआ है? जब सीताजी पुंडरीक नगर में, राजा वज्रजंघ के आश्रय में रही थी... और जहाँ उन्होंने लव-कुश को जन्म दिया था... वहाँ ही लव-कुश बड़े हुए थे। लव-कुश रूपवान और गुणवान लड़के थे...। ऐसे पुत्रों के प्रति स्नेह होना माता के लिए स्वाभाविक होता है। परन्तु सीताजी ने पुत्रों के साथ हार्दिक स्नेह का संबंध नहीं बाँधा था। संसार के सभी सुखों के विसर्जन की प्रक्रिया पुंडरीकनगर में ही शुरू हुई थी। वह प्रक्रिया संपूर्ण हुई अग्निपरीक्षा के बाद तुरंत! संसार के सभी सुखों का त्याग कर सीताजी महात्याग के पथ पर चल दी थी।

पुत्रों का लालन-पालन करते थे, उनको शिक्षा दिलाते थे... उनकी शादी भी की थी... परन्तु जो कुछ किया, मात्र कर्तव्य के नाते! मातृत्व का वात्सल्य होते हुए भी ममत्व के बंधन से बंधे नहीं। विरक्तभाव को बढ़ाने का कार्य वे करती ही रही।

अति अल्प सुख-साधनों से जीवन-यापन करने की पद्धति को समझ लेना। तुझे विपुल सुख सामग्री मिल सकती है, फिर भी तू स्वीकार नहीं करना। बहुत थोड़ी आवश्यकता होनी चाहिए। परिवार को भी इसी प्रकार जीवन जीने की कला बता देना! धीरे-धीरे सभी अनुकूल बनते जायेंगे। यदि अनुकूल नहीं बनें तो उनका भी त्याग करना आवश्यक बन जायेगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महानुभाव! यहाँ वर्षाकाल, धर्मध्यान और धर्माराधना में व्यतीत हो रहा है। श्री शान्तिसूरिकृत 'धर्मरत्न' ग्रन्थ पर दैनिक प्रवचन हो रहे हैं। मध्याह्न में, उपाध्याय श्री यशोविजयजी की एक कृति 'सवा सो गाथानुं स्तवन' उस पर स्वाध्याय चलता है। 'प्रशमरति' विवेचन का दूसरा भाग लिखने का काम भी चलता है... शायद पर्युषणपर्व के पूर्व तक पूरा हो जायेगा।

स्वास्थ्य यूँ तो अच्छा ही है, फिर भी 'अशातावेदनीय' कर्म कभी-कभी अपना प्रभाव बता जाता है! चिन्ता नहीं है... आत्मा-शरीर का भेदज्ञान पुष्ट करने का अवसर मिलता है! कुशल रहो-यही कामना।

१२-८-८०

भुज (कच्छ)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *धर्मक्षेत्र में भी आज निर्णायकता होने के कारण कितनी तरह की विकृतियाँ प्रविष्ट हो गई हैं! सभी अपनी-अपनी डफली पर अपना-अपना राग आलापते हैं!*
- *स्वयं को बिल्कुल बेगुनाह मानना और दूसरों को अपराधी मानना मन की बड़ी कमजोरी है।*
- *सभी जीवात्माओं के साथ संपूर्ण निर्वैरभाव को विकसित किये बगैर आत्मा की शुद्धि-विशुद्धि संभवित नहीं है।*
- *अपने बड़प्पन की भ्रामिक कल्पनाओं को जलाना होगा।*
- *मैत्री यानी सख्यभाव, सख्यभाव में स्नेह होता है, संदेह नहीं! सख्यभाव में प्यार रहता है... तकरार या तिरस्कार नहीं!*

पत्र : ५१

प्रिय मुमुक्षु!

धर्मलाभ,

तेरा पत्र मिला था। प्रत्युत्तर लिखने में विलम्ब अवश्य हुआ है, परंतु लिखने की इच्छा सदैव बनी रही है। महापर्व पर्युषणों के दिनों में और बाद में भी अत्यधिक व्यस्तता के कारण, शान्त-प्रशान्त चित्त से लिखने का समय ही नहीं मिला। थोड़ा समय मिला था परंतु वह समय, कच्छ के दैनिक-पत्र 'कच्छमित्र' में पर्युषणपर्व विषयक लेखमाला लिखने में व्यय हो गया!

पहले... बहुत पुराने जमाने में यह मात्र श्रमण और श्रमणियों का निवृत्तिमय आराधनपर्व था। 'एक जगह रहना,' यह अर्थ होता था पर्युषण का। साधु एवं साध्वी, भाद्रपद शुक्ला पंचमी से एक गाँव में ७० दिन तक रह जाते थे। दूसरे गाँव में विहार नहीं करते थे। एक जगह ७० दिन की स्थिरता कर, ज्ञान-ध्यान और तप-त्याग में लीन बनते थे। इस ७० दिवसीय 'केम्प' के प्रारंभ में मंगलनिमित्त श्री 'कल्पसूत्र' का अध्ययन करते थे, साधु-साध्वी। साधु पुरुष पढ़ते थे, साध्वी सुनती थी। यह था पर्युषणपर्व का मूल स्वरूप!

आज यह पर्व चतुर्विध संघ का हो गया है! श्रमण भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण के पश्चात् ९०० वर्ष व्यतीत हो जाने के बाद, पर्युषण चतुर्विध संघ का पर्व बना है। यानी साधु-साध्वी-श्रावक और श्राविका इस पर्व को मनाते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं। धीरे-धीरे इस महापर्व का रूप भी बदलता जा रहा है। इस महापर्व के पवित्र दिनों में जहाँ, साधु पुरुषों के मुख से 'कल्पसूत्र' के प्रवचन सुनने थे... कुछ जगह कुछ संप्रदायों में दूसरे ही प्रवचन सुने-सुनाये जाते हैं! कुछ जगह, भिन्न-भिन्न विषयों पर गृहस्थ लोग ही प्रवचन देते हैं। विषय धार्मिक के अलावा सामाजिक और राजकीय भी होते हैं!

दुःख की बात यह है कि आज कोई किसी को कहने वाला नहीं है। हर व्यक्ति मनचाहा कर लेता है। इससे बहुत सी विकृतियाँ धर्मक्षेत्र में प्रविष्ट हो गयी हैं और हो रही हैं।

प्रिय मुमुक्षु, सावधान रहना! धर्मक्षेत्र में, धर्म के नाम से कोई अधर्म जीवन में प्रविष्ट न हो जाय। पर्युषणपर्व में तूने तपश्चर्या अच्छी की है। प्रवचन भी सुने हैं। धर्मक्रियाएँ भी की हैं। परंतु सभी जीवों से क्षमायाचना कैसे की, वह तूने पत्र में नहीं लिखा है। वर्तमान जीवन में, आज दिन तक, जिन-जिन के साथ वैर-विरोध हुआ हो उनके पास जाकर, विनय और नम्रता से तूने क्षमायाचना की होगी? छोटे-बड़े का खयाल किये बिना, निरभिमानी बनकर तूने अपने अपराधों का पश्चात्ताप किया होगा?

दूसरे जीवों को ही अपराधी मानने की मनोवृत्ति बहुत ही विघातक होती है। हर बात में दूसरे की ही गलती देखना, दूसरे को ही अपराधी मानना, बहुत ही खराब आदत है। अपने आपको निरपराधी मानना, बेगुनाह मानना, यही बड़ी भूल है, अज्ञानता है। जीवन के भिन्न-भिन्न व्यवहारों में अपने आपको निर्दोष सिद्ध करना और दूसरों को ही दोषित सिद्ध करना- उपादेय माना गया है! मोक्षमार्ग की आराधना में यह बात सर्वथा हेय मानी गई है।

दूसरे जीवों के साथ संपूर्णतया निर्वैरवृत्ति आये बिना, आत्मा की परिपूर्ण विशुद्धि संभव नहीं है। अहंकार और तिरस्कार वैरवृत्ति को पुष्ट करते रहते हैं। प्रिय मुमुक्षु, तुझे यदि वास्तविक मोक्षमार्ग की आराधना करनी है, तो अहंकार के हिमालय को पानी बनाकर बहा दे! 'मैं बड़ा हूँ, मैं ज्ञानी हूँ, मैं समझदार हूँ, मैं धर्मात्मा हूँ...' ऐसी-ऐसी अहंकारजन्य कल्पनाएँ हृदय से निकालनी ही होगी। अहंकार का मूल्यांकन ही नहीं होना चाहिए।

अहंकार, दूसरे जीवों का तिरस्कार करवाता है। अहंकारी मनुष्य किसी का भी मित्र नहीं बन सकता है। कैसे बन सकता है मित्र? मित्रता यानी सख्यभाव! सख्यभाव में अहंकार को स्थान नहीं होता और तिरस्कार की तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परछाई भी नहीं पड़ सकती। सभी जीवों का मित्र बनने के लिये अहंकार और तिरस्कार को हृदय से निकाल देने होंगे। पर्युषणपर्व में यह काम किया जाना चाहिए था।

जिनके-जिनके साथ तूने दुर्व्यवहार किया था, जिनके विषयों में तूने कटुतापूर्ण विचार किये थे, उनके पास जाकर तूने क्षमायाचना की थी? नहीं की हो तो अब भी कर लेना। दूसरी संवत्सरी की राह मत देखना। हृदयशुद्धि करने के लिए हर क्षण महापर्व है। वह क्षण, वह दिन महापर्व बन जाता है, जिस क्षण... जिस दिन मनुष्य अपने हृदय को निर्मल... निष्पाप बनाता है।

कभी ऐसा भी संसार में अनुभव होता है कि जिस व्यक्ति के प्रति अपना कोई वैर-विरोध नहीं हो, कोई दुर्भावना नहीं हो, फिर भी वह व्यक्ति अपनी ओर विरोध भावना रखता हो। ऐसे प्रसंगों में अपना मन कहता है : 'मैंने तो उसका कोई बुरा किया नहीं है, उसके विषय में बुरा विचार भी नहीं किया है, फिर भी वह मेरे प्रति रोष रखे... तो रखने दो... मैं क्या करूँ?'

ऐसा नहीं सोचना चाहिए। सोचना चाहिए कि : 'मैंने पूर्वजन्मों में कभी न कभी उस जीव का अपराध किया होगा... जाने-अनजाने उसका कुछ भी बुरा किया होगा... अन्यथा वह मेरे प्रति दुर्भाव क्यों रखे? मैं उसके लिये भी शुभ कामना करता हूँ कि उसके हृदय में किसी भी जीवात्मा के लिये दुर्भावना नहीं रहे।'

मन को, चित्त को, अंतःकरण की प्रसन्नता से पुलकित रखना है तो क्षमाधर्म का अवलम्बन लेना ही होगा। हमारे लिये तो क्षमाधर्म की आराधना अनिवार्य है, तुम्हारे श्रमणोपासकों के लिये भी क्षमाधर्म का पालन अति आवश्यक है। पारिवारिक जीवन में और सामाजिक जीवन में तभी शान्ति और ऐक्यता अखंड रह सकती है, जब क्षमाधर्म का समुचित पालन होगा। क्षमायाचना करो और क्षमादान देते रहो! कोई अपराधी मनुष्य क्षमा माँगने आये तो प्रेम से क्षमा देते रहो! किसी के भी अपराधों को-भूलों को दिमाग की डायरी में लिख कर मत रखो।

यहाँ भुज में चातुर्मासकाल खूब प्रसन्नता से एवं विविध धर्माराधन में व्यतीत हो रहा है। संघ का और नगर का वातावरण प्रफुल्लित और उल्लसित है। पर्युषणपर्व की आराधना अभूतपूर्व हुई है। अब कल से ही प्रभुभक्ति का आठ दिन का महोत्सव शुरू हो रहा है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अत्यधिक प्रवृत्ति में भी स्वास्थ्य सानुकूल रहा, यह तो परमात्मा जिनेश्वर देव की और गुरुजनों की कृपा ही माननी पड़ेगी। तीन-तीन और चार-चार घंटों तक प्रवचन दिये, तो भी स्वास्थ्य सुचारू रहा! सभी मुनिवर स्वस्थ-प्रसन्न हैं, सब की ओर से क्षमापना जानें। प्रतिपल प्रसन्नचित्त रहे यही मंगल कामना-

२०-९-८०

भुज (कच्छ)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *अच्छी बातों पर चिंतन-मनन करते-करते अपने विचार भी तद्रूप बन जाने चाहिए।*
- *सुख प्राप्त करने की वृत्ति ही तमाम संघर्षों की जड़ है। इस बात को दिल व दिमाग की दीवार पर नक्श कर देना चाहिए।*
- *मिले हुए सुखों का अनुभव कर लेना एक बात है और ज्यादा से ज्यादा सुख पाने की कल्पना के नशे में बेहोश रहना और बात है।*
- *सुख-दुःख के बारे में मन को निराग्रही व निराकुल बनाना होगा। निराशंस बनाये रखना होगा।*
- *जब सहन करना ही है... तब फिर प्रसन्नता से, हँसते मुँह और खेलते-खिलते-खुलते हुए क्यों नहीं जीना!*

पत्र : ५२

प्रिय मुमुक्षु,

धर्मलाभ,

बहुत दिनों से तेरा पत्र नहीं है। तेरे तन-मन की कुशलता चाहता हूँ। चातुर्मास-काल प्रसन्नता से व्यतीत हो रहा है। लेखन-प्रवचन-अध्यापन आदि नित्यक्रम सुचारु रूप से चल रहा है।

मुमुक्षु, संभवतः तेरे लिये मेरा यह पत्र अंतिम होगा। जिस विषय पर पाँच वर्ष से तुझे लिख रहा हूँ, पर्याप्त लिखा है, ऐसा लगता है। अब कुछ वर्ष तू इन पत्रों पर चिन्तन-मनन करता रहेगा तो मुझे प्रसन्नता होगी। चिन्तन-मनन करते-करते तेरे मन के विचार ही चिन्तन के अनुरूप बन जायें, तो जीवन जीने का अपूर्व आनन्द तू पा सकेगा।

कुछ दिनों से मनोवृत्तियों के विश्लेषण में दिलचस्पी बढ़ गई है। इस विश्लेषण में मैंने पाया कि सुख पाने की, सुखानुभव करने की मनोवृत्ति ही सभी पापों का मूल है। सभी बुराइयों की जड़ है। वैषयिक सुखों का रसास्वाद करने की इच्छाएँ पैदा होती हैं और अशान्ति का प्रारम्भ होता है। कोई दो-चार सुख पा लेने से इच्छाएँ समाप्त नहीं होती। नयी-नयी सुखेच्छाएँ पैदा होती रहती हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आवश्यक सुखों का भोग-उपभोग करना एक बात है, और सुख पाने की एवं सुखोपभोग की कल्पनाएँ करते रहना, दूसरी बात है। कोई अर्थ नहीं है ऐसी कल्पनाएँ करने का। तू भी सोचना, तेरे जीवन को केन्द्र में रखकर सोचना कि ऐसी कल्पनाएँ करने का है कोई विशेष अर्थ? तू आन्तरमंथन करेगा तो तुझे स्पष्ट दिखाई देगा कि भिन्न-भिन्न अनेक सुखों की कल्पनाएँ करना व्यर्थ है, निरर्थक है।

इन कल्पनाओं से मन को मुक्त करना होगा! हो सकता है मन मुक्त! चाहिए दृढ़ संकल्प और वास्तविक उपाय! इस विषय पर मैंने पहले भी पत्रों में लिखा है। सुखों का त्याग, सुखेच्छाओं का त्याग और सुखभोग की स्मृतियों का त्याग... ज्यों-ज्यों होता जायेगा त्यों-त्यों मनःप्रसन्नता बढ़ती जायेगी, त्यों-त्यों धर्मआराधना में स्थिरता भी बढ़ती जायेगी।

यह ऐसा जीवन है कि जिसमें दुःख ही ज्यादा है। शारीरिक और मानसिक असंख्य दुःखों से घिरा हुआ है यह जीवन। ऐसे जीवन में सुखों की कल्पनाओं में उलझे रहना बुद्धिमत्ता नहीं है। वैसे दुःखों का रूदन करना भी उचित नहीं है। सहन करने ही हैं दुःख, सहन किये बिना जब छुटकारा ही नहीं है, फिर प्रसन्न चित्त से और प्रसन्न मुख से सहन क्यों न किये जायें?

सुख-दुःख के विषय में मन निराग्रही बन जाना चाहिए। 'दुःख नहीं आने चाहिए, सुख ही मिलने चाहिए, रहने चाहिए...' ऐसा आग्रह छोड़ देना चाहिए। सुख को आना हो तो सुख आये, दुःख को आना हो तो दुःख आये, कोई आग्रह नहीं! बस, कर्त्तव्य की भूमिका को निभाते चलो और परमात्मा के पथ पर चलते रहो।

मन के प्रश्नों का समाधान ढूंढ़ने के अनेक रास्ते इन पत्रों में बताये हैं, बस, मन का समाधान करते रहो। प्रश्नों में मन को उलझा हुआ मत रखो। उलझनों से मन को मुक्त रखो। यदि इस कार्य में मेरे पत्र तुम्हारे काम आ जायेंगे तो मुझे आनन्द होगा। जीवन की भिन्न-भिन्न घटनाओं के संदर्भ में कैसे विचार करना, कैसा अभिगम बनाना और कैसा व्यवहार करना, इन बातों को बताने का शक्य प्रयास मैंने किया है। तेरा जीवन निरापद और निराकुल बना रहे, तेरी जीवनयात्रा मुक्ति की ओर आगे बढ़ती रहे, यही मेरी मंगल कामना है और रहेगी। इसी मंगल कामना ने मुझे प्रेरित किया है, इन पत्रों को लिखने के लिये!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तुम्हारे प्रति सद्भावपूर्ण कामनाएँ निरन्तर बहती रहेंगी...! तेरे प्रति ही नहीं, समग्र जीवनसृष्टि के प्रति मेरे हृदय की मंगल कामनाएँ निरन्तर बहती रहे... किसी भी जीवात्मा के प्रति दुर्भावना पैदा न हो... ऐसी मेरी हार्दिक अभिलाषा बनी हुई है। परमात्मा से मेरी यही आन्तरप्रार्थना होती है कि समग्र जीवसृष्टि के साथ मेरा सदैव स्नेहपूर्ण सम्बन्ध बना रहे।

प्रिय मुमुक्षु, तेरा-मेरा प्रत्यक्ष संबंध रहा है और परोक्ष सम्बन्ध भी इन पत्रों द्वारा रहा है। कल्याणयात्रा में बना हुआ यह सम्बन्ध है। तूने पूर्ण विनय, नम्रता और सद्भावनाओं से उस सम्बन्ध को सार्थक किया है। मैंने कभी उग्र शब्दों में, कभी कटुतापूर्ण शब्दों में तेरे साथ व्यवहार किया होगा... तूने कभी मेरे प्रति मन में भी दुर्भावना नहीं लायी है। मेरा आक्रोश भी तुझे प्रिय लगा है। मेरी कटुता को भी तूने अमृत मानकर पी ली है...। तेरे प्रति खूब सद्भाव बढ़ने का यही मूलभूत हेतु है।

हालांकि पत्र के माध्यम से अब कुछ वर्ष इस तरह मिलना नहीं होगा परन्तु प्रत्यक्ष मिलना तो अवसर-अवसर पर होता रहेगा ही। जब कभी तेरे मन में मिलने की उत्सुकता बढ़ जाय, तू आ सकता है मेरे पास।

तेरे मन में प्रश्न पैदा होगा कि 'अरिहंत' में क्या मैं अब 'जीवनदृष्टि' नहीं लिखूँगा। 'जीवनदृष्टि' जैसे मेरा प्रिय चिन्तन का विषय रहा है, वैसे 'गुणदृष्टि' भी मेरा प्रिय चिन्तन का विषय रहा है। एक बहुत प्राचीन जैनाचार्य श्री शांतिसूरिजी ने अपने 'धर्मरत्न' नाम के ग्रन्थ में, मनुष्य को धार्मिक बनने से पूर्व 'गुणवान' बनना अनिवार्य बताया है। करीबन २० वर्ष पूर्व जब मैंने यह ग्रन्थ पढ़ा था तभी से मेरे मन में 'गुणदृष्टि' के विषय में चिन्तन-मनन चलता रहा है। आज २० वर्ष के बाद पुनः मैं उस 'धर्मरत्न' ग्रन्थ पर प्रवचन यहाँ 'भुज' में दे रहा हूँ। खूब आनन्द पाता हूँ इस ग्रन्थ पर विवेचना करते-करते। अब वह आनन्द जीवों को बाँट देना है। चूँकि आनन्द बाँटने से बढ़ता है।

आज दिन तक 'अरिहंत' में जितने पत्र छपे हैं, सभी का अनुवाद गुजराती भाषा में हो गया है। १८ पत्रों का संग्रह 'तारा दुःखने खंखेरी नांख' किताब में प्रकाशित हुआ और उसके दो संस्करण प्रकाशित हो गये। शेष ३४ पत्रों का संग्रह 'तारा सुखने विखेरी नांख' पुस्तक में प्रकाशित हो रहा है। ३४ पत्रों का अनुवाद बहुत ही रसपूर्ण भाषा में हुआ है। 'तारा दुःखने खंखेरी नांख' किताब का अंग्रेजी अनुवाद हो गया है, कुछ दिनों में प्रेस में छपने जायेगी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। सभी कार्य सुचारू रूप से हो रहे हैं। तू आत्म-प्रसन्नता का अनुभव करता रहे, यही मंगल कामना। परिवार को 'धर्मलाभ' सूचित करना। कुशल रहे!

१०-१०-८०,

भुज (कच्छ)

- प्रियदर्शन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा तीर्थ
Acharya Sri Kailasasagarsuri Gyanmandir
Sri Mahavir Jain Aradhana Kendra
Koba Tirth, Gandhinagar-382 007 (Guj.) INDIA
Website : www.kobatirth.org
E-mail : gyanmandir@kobatirth.org

ISBN : 978-81-89177-12-6

For Private And Personal Use Only